प्रकाशकका निवेदन

गांधीजीकी कार्य करनेकी एक विशिष्ट पद्धति थी। उन्हें जो कार्य सच्चा और करने जैसा मालूम होता था उसे वे स्वयं ही आरंभ कर देते थे। इसके बाद अन्य लोगोंको अपने कार्यके विषयमें समझानेके लिए वे पत्र-व्यवहार करते थे, आवश्यक हो तो भाषण देते थे और उसकी चर्चा भी करते थे। जैसे जैसे उनका कार्य व्यापक होता गया वैसे वैसे अपने कार्यके लिए उन्होंने साप्ताहिक पत्र चलाने शुरू किये। दक्षिण अफ्रीकामें इसके लिए वे 'इंडियन ओपीनियन' नामक साप्ताहिक निकालते थे। भारतमें लौटनेके बाद अपने उसी कार्यके लिए गांधीजीने अंग्रेजीमें 'यंग इंडिया', गुजरातीमें 'नवजीवन' और हिन्दीमें 'हिन्दी नवजीवन' नामक साप्ताहिक निकाले। और बादमें अपने इसी कार्यके लिए उन्होंने 'हरिजन' साप्ताहिकोंका प्रकाशन किया। किसी स्थान पर उन्होंने अपने इन साप्ताहिकोंको राष्ट्रके लिए निकाले जानेवाले साप्ताहिक कहा है।

इस प्रकार पत्र-व्यवहार, समय समय पर दिये गये भाषण, आवश्यकतानुसार निकाले गये सार्वजनिक वक्तव्य और ये साप्ताहिक पत्र — इन सबके द्वारा गांधीजीने अपार साहित्यका निर्माण किया है।

जो लोग गांधीजीको, उनके कार्यको, विशेषतः उनके अहिंसाके संदेशको तथा उसके लिए आयोजित उनकी कार्य-पद्धतिको समझना चाहते हैं उन्हें इस संपूर्ण साहित्यका यथाशक्ति अभ्यास करना चाहिये।

यह सारा साहित्य इतना विशाल है कि उसमें से अपनी रुचि तथा श्रद्धाके अनुसार गांधीजीके मार्मिक उद्धरण चुनकर अनेक लोगोंने छोटे या बड़े संग्रह प्रकाशित किये हैं।

संयुक्त राष्ट्रसंघकी एक समितिको जिसे संक्षेपमें युनेस्को कहा जाता है, संसारकी आजकी विषम परिस्थितिमें गांधीजीके कार्य और

प्रकाशकका निवेदन

गांधीजीकी कार्य करनेकी एक विशिष्ट पद्धति थी। उन्हें जो कार्य सच्चा और करने जैसा मालूम होता था उसे वे स्वयं ही आरंभ कर देते थे। इसके बाद अन्य लोगोंको अपने कार्यके विषयमें समझानेके लिए वे पत्र-व्यवहार करते थे, आवश्यक हो तो भाषण देते थे और उसकी चर्चा भी करते थे। जैसे जैसे उनका कार्य व्यापक होता गया वैसे वैसे अपने कार्यके लिए उन्होंने साप्ताहिक पत्र चलाने शुरू किये। दक्षिण अफ्रीकामें इसके लिए वे इंडियन ओपीनियन नामक साप्ताहिक निकालते थे। भारतमें लौटनेके बाद अपने उसी कार्यके लिए गांधीजीने अंग्रेजीमें यंग इंडिया, गुजरातीमें नवजीवन और हिन्दीमें हिन्दी नवजीवन नामक साप्ताहिक निकाले। और बादमें अपने इसी कार्यके लिए उन्होंने हरिजन साप्ताहिकोंका प्रकाशन किया। किसी स्थान पर उन्होंने अपने इन साप्ताहिकोंको राष्ट्रके लिए निकाले जानेवाले साप्ताहिक कहा है।

इस प्रकार पत्र-व्यवहार, समय समय पर दिये गये भाषण, आवश्यकतानुसार निकाले गये सार्वजनिक वक्तव्य और ये साप्ताहिक पत्र — इन सबके द्वारा गांधीजीने अपार साहित्यका निर्माण किया है।

जो लोग गांधीजीको, उनके कार्यको, विशेषतः उनके अहिंसाके संदेशको तथा उसके लिए आयोजित उनकी कार्य-पद्धतिको समझना चाहते हैं उन्हें इस संपूर्ण साहित्यका श्रद्धासे अभ्यास करना चाहिये।

यह सारा साहित्य इतना विशाल है कि उसमें से अपनी रुचि तथा श्रद्धाके अनुसार गांधीजीके मार्मिक उद्धरण चुनकर अनेक लोगोंने छोटे या बड़े संग्रह प्रकाशित किये हैं।

संयुक्त राष्ट्रसंघकी एक समितिको जिसे संक्षेपमें युनेस्को कहा जाता है, संसारकी आजकी विषम परिस्थितिमें गांधीजीके कार्य और

प्राक्कथन

[यूनेस्कोके मूल अंग्रेजी संस्करणसे]

यूनेस्को (युनाइटेड नेशन्स एज्युकेशनल साइंटिफिक एण्ड कल्चरल ऑर्गेनिजेशन — संयुक्त राष्ट्रसंघका शिक्षा विज्ञान तथा संस्कृतिके विषयोंसे संबंधित मंडल) की जनरल कान्फरेन्सका नवां अधिवेशन नवम्बर १९५६ में नई दिल्लीमें हुआ था। उसमें भारतके प्रतिनिधि-मंडल द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रस्तावके आधार पर जनरल कान्फरेन्सने एक प्रस्ताव पास करके अपने डायरेक्टर-जनरलको यह अधिकार दिया कि वे एक ऐसी पुस्तकके प्रकाशनकी व्यवस्था करें, जिसके प्रारंभिक भागमें गांधीजीके व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला गया हो और बादमें गांधीजीके विचारों तथा वचनोंके उद्धरण एकत्र किये गये हों।

इस प्रकार जनरल कान्फरेन्सने यूनेस्कोके लिए एक ऐसे महापुरुषके व्यक्तित्व और साहित्यको श्रद्धांजलि अर्पण करनेका अवसर खड़ा कर दिया, जिनका आध्यात्मिक प्रभाव जगतके एक छोरसे दूसरे छोर तक फैल गया है।

प्रस्तुत पुस्तकके सारे उद्धरण गांधीजीके संदेशको जगतकी विशाल जनता तक पहुंचानेकी दृष्टिसे चुने गये हैं। उनका उद्देश्य गांधीजीके व्यक्तित्व और साहित्यको लोगोंके सामने प्रस्तुत करना और उनके विभिन्न पहलुओंसे लोगोंको अधिक सच्चे रूपमें परिचित कराना है।

भारतके उपराष्ट्रपति महामहिम सर सर्वपल्ली राधाकृष्णनने कृपा करके एक छोटीसी प्रस्तावना इस पुस्तकके लिए लिखना स्वीकार किया है, जिसमें महात्मा गांधीके जीवन-दर्शनके मुख्य आधारका वर्णन होगा और यह भी बताया जायगा कि विभिन्न प्रजाओंमें प्रेम तथा मित्रताकी भावना बढ़ानेमें गांधीजीके प्रभावने कितना काम किया है।

महामहिम सर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्ने इस कार्यमें जो बहुमूल्य सहयोग दिया है तथा भारतीय अधिकारियोंने इस पुस्तककी सामग्री तैयार करनेमें जो कीमती सहायता प्रदान की है, उसके लिए युनेस्को दोनोंका हृदयसे आभार मानता है।

साहित्य अकादमीके मंत्री श्री के० आर० कृपालानीने इस कार्यमें जो उत्तम सहायता की उसके लिए युनेस्को उन्हें विशेष धन्यवाद देता है।

हमारी योजनाके अनुसार इस अंग्रेजी संस्करणके प्रकाशनके बाद इसके फ्रेन्च और स्पेनिश भाषाके संस्करण भी प्रकाशित होंगे।

प्रस्तावना

किसी महान गुरुके दर्शन जगतमें दीर्घकालके पश्चात् एक बार ही होते हैं। कभी कभी ऐसे गुरुके प्रादुर्भावके बिना सदियोंका समय भी बीत जाता है। ऐसा गुरु अपने जीवनमें ही जगतमें जाना और पहचाना जाता है। वह गुरु पहले स्वयं जीवन जीता है और बादमें दूसरोंसे कहता है कि उसके जैसा जीवन वे किस प्रकार जिया करते हैं। गांधीजी ऐसे ही महान गुरु थे। श्री कृष्ण कृपालानीने ये उद्धरण गांधीजीके लेखों और भाषणोंसे बड़ी सावधानी और विवेकके साथ एकत्र किये हैं। ये उद्धरण पाठकोंको इस बातकी कुछ कल्पना करायेंगे कि गांधीजीका मानस किस प्रकार काम करता था, उनके विचारोंका विकास किस प्रकार हुआ था और उन्होंने अपने कामके लिए कौनसी व्यावहारिक कार्य-पद्धतियां अपनायी थीं।

गांधीजीके जीवनकी जड़ें भारतकी धार्मिक परंपरामें जमी हुई थीं —जो सत्यकी उत्कट खोज, जीवमात्रके लिए अतिशय आदर, अनासक्तिके आदर्श और ईश्वरके ज्ञानके लिए सर्वस्वका बलिदान करनेकी तत्परता पर जोर देती है। गांधीजीने अपना संपूर्ण जीवन सत्यकी निरंतर खोजमें ही व्यतीत किया था। वे कहा करते थे: मैं सत्यकी खोजके लिए ही जीता हूं। इसी लक्ष्यको सामने रखकर मैं अपने समस्त कार्य करता हूं और इसी लक्ष्यकी सिद्धिके लिए मेरा अस्तित्व है।

जिस जीवनका कोई मूल नहीं है, जिसकी कोई गहराई नहीं है, वह जीवन छिछला है, व्यर्थ है। कुछ लोग ऐसा मानकर चलते हैं कि जब हम सत्यका दर्शन कर लेंगे तब उस पर आचरण करेंगे। लेकिन ऐसा नहीं होता। जब हम सही और सच्ची वस्तुको जान लेते हैं तब भी उसका परिणाम यह नहीं होता कि हम सही वस्तुको ही पसंद करें और सही काम ही करें। हम शक्तिशाली आवेगोंके प्रवाहमें बह जाते हैं, गलत

अर्थ है स्वयं ईश्वरको तोडकर उसके टुकडे टुकडे कर देना। बडेसे बडे दुष्टमें भी मानवता होती है।[1]

यह दृष्टिकोण हमें स्वभावतः सारी राष्ट्रीय और आन्तर-राष्ट्रीय समस्यायें हल करनेके उत्तम साधनके रूपमें अहिंसाको अपनानेकी दिशामें ले जाता है। गांधीजीने दृढतासे यह कहा था कि वे कल्पना-विहार करनेवाले आदर्शवादी नहीं किन्तु एक व्यावहारिक आदर्शवादी हैं। अहिंसा केवल संतों और ऋषि-मुनियोंके लिए ही नहीं है, यह सामान्य लोगोंके लिए भी है। अहिंसा वैसे ही हमारी मानव-जातिका नियम है जैसे हिंसा पशुओंका नियम है। पशुओंमें आत्मा सुप्तावस्थामें रहती है और वे शारीरिक शक्तिके नियमके सिवा दूसरा कोई नियम नहीं जानते। मनुष्यकी प्रतिष्ठाका यह तकाजा है कि वह उच्चतर और उदात्त नियमका पालन करे — आत्माकी शक्तिका कहना माने।

गांधीजी समूचे मानव-इतिहासमें ऐसे पहले पुरुष थे जिन्होंने अहिंसाके सिद्धान्तको व्यक्तिके क्षेत्रसे आगे बढ़ाकर सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र तक फैलाया। उन्होंने अहिंसाका प्रयोग करने और उसकी वास्तविकताकी स्थापना करनेके लिए ही राजनीतिमें प्रवेश किया था।

कुछ मित्रोंने मुझसे कहा है कि सत्य और अहिंसाका राजनीतिमें और दुनियाके व्यवहारोंमें कोई स्थान नहीं है। पर मैं इसे नहीं मानता। वैयक्तिक मोक्षके साधनोंके रूपमें मेरे लिए उनका कोई उपयोग नहीं है। मैंने जीवनभर सत्य और अहिंसाको दैनिक जीवनमें प्रवेश कराने और उन्हें आचरणमें उतारनेका प्रयोग किया है। मेरी दृष्टिमें धर्महीन राजनीति निरा कूडा-कचरा है, जिससे मुझे सदा दूर ही रहना चाहिये। राजनीतिका सम्बन्ध राष्ट्रोंके साथ है और जिस राजनीतिका सम्बन्ध राष्ट्रोंके कल्याणके साथ है वह ऐसे मनुष्यका विषय होनी चाहिये जो धार्मिक है, — दूसरे शब्दोंमें जो ईश्वर और सत्यका शोधक है। मेरे लिए ईश्वर और सत्य ऐसे शब्द हैं जो एक-दूसरेका स्थान ले सकते हैं और

---

१ अस्यामुपैव पुरुषो जगतो जीवमेषया। महाभारत १२-२५९ ११

करते हैं। नई आलोचनायें और नई निर्भय दुर्भावना और शाप — ये सब हिंसाके ही सूक्ष्म रूप हैं।

आजकी भयंकर स्थितिमें जब हम विज्ञानके द्वारा उत्पन्न की हुई नई परिस्थितियोंके अनुकूल अपने-आपको नहीं बना पा रहे हैं, अहिंसा सत्य और मैत्रीके सिद्धान्तोंका अपनाना सरल नहीं है। लेकिन इस कारण हमें अपना इस दिशाका प्रयत्न छोड़ नहीं देना चाहिये। राजनीतिक समस्याओंकी जिद हमारे दिलोंमें डर पैदा करती है, लेकिन दुनियाकी प्रजाओंकी समझदारी और विवेक हमारे भीतर आशाका संचार करते हैं।

आज दुनियामें होनेवाले परिवर्तनोंकी गति इतनी ज्यादा बढ़ गई है कि हम नहीं जानते कि अगले १० वर्षोंमें दुनियाकी क्या शकल हो जायगी। हम विचारों और भावनाओंके भावी प्रवाहोंकी कोई कल्पना नहीं कर सकते। परन्तु नये नये कालके प्रवाहमें बहते चले जायें फिर भी सत्य और अहिंसाके महान सिद्धान्त तो हमारा मार्गदर्शन करनेके लिए अपने स्थान पर सदा अटल ही रहनेवाले हैं। वे एक मूक सुधार हैं जो भ्रान्त और उत्पातोंसे पीड़ित जगत पर सदा पवित्र तथा शान्त दृष्टि रखते हैं। गांधीजीकी तरह हम भी अपने इस विश्वास पर दृढ़ रह सकते हैं कि आकाशमें आते जाते बादलोंके ऊपर सूर्यकी किरणें चमकती हैं।

हम ऐसे युगमें जी रहे हैं जो अपनी पराजयता और अपनी नैतिक शिथिलताको जानता है। यह एक ऐसा युग है जिसमें प्राचीन निश्चित मूल्य टूट रहे हैं और परिचित प्रणालियाँ नष्ट-भ्रष्ट हो रही हैं। असहिष्णुता और कड़वाहट दिनोंदिन बढ़ रही है। नव-निर्माणकी वह ज्योति जिसने महान मानव-समाजको प्रदीप्त किया था आज मंद पड़ती जा रही है। मानव-मन अपनी आश्चर्यकारी बहुमुखता और विविधताकी बदौलत बुद्ध या गांधी अथवा नीरो या हिटलर जैसे परस्पर विरोधी नमूने उत्पन्न करता है। यह हमारे लिए बड़े गौरवकी बात है कि इतिहासकी एक सर्वोच्च विभूति महात्मा गांधी हमारे बीच रहे, हमारे बीच चले-फिरे, हमसे बोले और उन्होंने हमें सभ्य तथा सुसंस्कृत जीवन जीनेकी पद्धति

मुझे दुनियाको कोई नई चीज नहीं सिखानी है। सत्य और अहिंसा अनादि कालसे चले आये हैं।

पाठकोंसे

मेरे लेखोंका मेहनतसे अध्ययन करनेवालों और उनमें दिलचस्पी लेनेवालोंसे मैं यह कहना चाहता हूं कि मुझे हमेशा एक ही रूपमें दिखाई देनेकी कोई परवाह नहीं है। सत्यकी अपनी खोजमें मैंने बहुतसे विचारोंको छोड़ा है और अनेक नई बातें मैं सीखा भी हूं। उमरमें भले ही मैं बूढ़ा हो गया हूं लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता कि मेरा आन्तरिक विकास होना बन्द हो गया है या देह छूटनेके बाद मेरा विकास बन्द हो जायगा। मुझे एक ही बातकी चिन्ता है और वह है प्रतिक्षण सत्य-नारायणकी वाणीका अनुसरण करनेकी मेरी तत्परता। इसलिए जब किसी पाठकको मेरे दो लेखोंमें विरोध जैसा लगे तब अगर उसे मेरी समझदारीमें विश्वास हो तो वह एक ही विषय पर लिखे हुए दो लेखोंमें से मेरे बादके लेखको प्रमाणभूत माने।

हरिजनबन्धु १ -४- ३३ गांधीजी

अनुक्रमणिका

हम सब एक पिताके बालक

[गांधी-वचन-संग्रह]

हम सब एक पिताके बालक

[गांधी-वचन-संग्रह]

१

आत्म-परिचय

मुझे आत्मकथा कहां लिखनी है? मुझे तो आत्मकथाके बहाने सत्यके जो अनेक प्रयोग मैंने किये हैं उनकी कथा लिखनी है। यह सच है कि उनमें मेरा जीवन ओतप्रोत होनेके कारण यह कथा एक जीवन-वृत्तान्त जैसी बन जायेगी। लेकिन अगर उसके हर पन्ने पर मेरे प्रयोग ही प्रकट हों तो मैं स्वयं उस कथाको निर्दोष मानूंगा। १

राजनीतिके क्षेत्रमें हुए मेरे प्रयोगोंको अब सारा हिंदुस्तान जानता है; यही नहीं बल्कि थोड़ी-बहुत मात्रामें सभ्य कही जानेवाली दुनिया भी उन्हें जानती है। मेरे मन इन प्रयोगोंकी कीमत कम-से-कम है; और इसलिए इन प्रयोगों द्वारा मुझे 'महात्मा' का जो पद मिला है उसकी कीमत भी थोड़ी ही है। कई बार तो इस विशेषणने मुझे बहुत अधिक दुःख भी दिया है। मुझे ऐसा एक भी क्षण याद नहीं है जब इस विशेषणके कारण मैं फूल गया होऊं। लेकिन अपने आध्यात्मिक प्रयोगोंका, जिन्हें मैं ही जान सकता हूं और जिनके कारण राजनीतिक क्षेत्रकी मेरी शक्ति भी जन्मी है, वर्णन करना मुझे अवश्य ही अच्छा लगेगा। अगर ये प्रयोग सचमुच आध्यात्मिक हैं तो इनमें गर्व करनेकी गुंजाइश ही नहीं है। इनसे तो केवल नम्रताकी ही वृद्धि होगी। ज्यों-ज्यों मैं विचार करता जाता हूं, भूतकालके अपने जीवन पर दृष्टि डालता जाता हूं, त्यों-त्यों अपनी अल्पताको मैं स्पष्ट ही देख सकता हूं। २

मुझे जो करना है, तीस वर्षोंसे मैं जिसकी आतुरतासे रट लगाये हुए हूं, वह तो आत्म-दर्शन है, ईश्वरका साक्षात्कार है, मोक्ष है। मेरे सारे काम

गांधी-कुटुम्ब पहले तो पंसारीका धंधा करनेवाला था। लेकिन मेरे दादासे लेकर पिछली तीन पीढ़ियोंसे यह काठियावाड़के राज्योंमें दीवानगीरी करता रहा है। मालूम होता है कि उत्तमचन्द गांधी अथवा ओता गांधी टेकवाले आदमी थे। राजनीतिक खटपटके कारण उन्हें पोरबन्दर छोड़ना पड़ा था। और उन्होंने जूनागढ़ राज्यमें आश्रय लिया था। वहां उन्होंने नवाब साहबको बायें हाथसे सलाम किया। किसीने इस प्रकट अविनयका कारण पूछा तो जवाब मिला "दाहिना हाथ तो पोरबन्दरको अर्पित हो चुका है। ६

मेरे पिता कुटुम्ब-प्रेमी सत्यप्रिय शूर और उदार किन्तु क्रोधी थे। वे थोड़े विषयासक्त भी रहे होंगे। उनका आखिरी (चौथा) ब्याह चालीस सालके बाद हुआ था। हमारे परिवारमें और बाहर भी उनके विषयमें यह धारणा थी कि वे रिश्वतखोरीसे दूर भागते हैं और इस कारण शुद्ध न्याय करते हैं। ७

मेरे मन पर यह छाप बनी हुई है कि मेरी माता साध्वी स्त्री थी। वे बहुत श्रद्धालु थी। बिना पूजा-पाठके कभी भोजन न करती थी। हमेशा हवेली (वैष्णव मंदिर) जाती थी। वे कठिन-से-कठिन व्रत शुरू करती और उन्हें निर्विघ्न पूरा करती। लिये हुए व्रतोंको बीमार होने पर भी वे कभी न छोड़ती थी। ८

इस माता-पिताके घरमें पोरबन्दरमें मेरा जन्म हुआ। बचपन मेरा पोरबन्दरमें ही बीता। याद पड़ता है कि मुझे किसी शालामें भरती किया गया था। वहां मैं मुश्किलसे थोड़े पहाड़े सीखा था। मुझे सिर्फ इतना याद है कि मैं उस समय दूसरे लड़कोंके साथ अपने शिक्षकको गाली देना सीखा था। और कुछ याद नहीं पड़ता। इस परसे मैं अन्दाज लगाता हूं कि मेरी बुद्धि मंद और स्मरण-शक्ति कच्ची रही होगी। ९

मैं बहुत ही शरमीला लड़का था। शालामें अपने कामसे ही काम रखता था। घंटी बजनेके समय पहुंचता था और शालाके बन्द होते ही घर भाग

इसी दृष्टिसे होते हैं। मेरा गद्य लेखन भी इसी दृष्टिसे होता है और राजनीतिके क्षेत्रमें मेरा पड़ना भी इसी ध्येयके अधीन है। लेकिन शुरूसे ही मेरा यह मत रहा है कि जो एकके लिए शक्य है वह सबके लिए भी शक्य है। इस कारण मेरे प्रयोग निजी नहीं हुए, नहीं रहे। उन्हें सब देख सकें तो मुझे नहीं लगता कि इससे उन प्रयोगोंकी आध्यात्मिकता कम होगी। अवश्य ही कुछ वस्तुएं ऐसी हैं जिन्हें आत्मा ही जानती है, जो आत्मामें ही समा जाती हैं। परन्तु ऐसी वस्तु देना मेरी शक्तिसे परेकी बात है। मेरे प्रयोगोंमें आध्यात्मिकका अर्थ है नैतिक; धर्मका अर्थ है नीति। आत्माकी दृष्टिसे पाली गयी नीति ही धर्म है। ३

इन प्रयोगोंके बारेमें मैं किसी भी प्रकारकी सम्पूर्णताका दावा नहीं करता। वैज्ञानिक अपने प्रयोग अतिशय नियमपूर्वक विचारपूर्वक और बारीकीसे करता है। फिर भी उनसे उत्पन्न परिणामोंको वह अन्तिम नहीं कहता अथवा वे परिणाम सच्चे ही हैं इस बारेमें वह साग्रह नहीं तो तटस्थ अवश्य रहता है। अपने प्रयोगोंके बारेमें मेरा भी वैसा ही दावा है। मैंने खूब आत्म-निरीक्षण किया है, एक-एक भावकी जांच की है, उसका पृथक्करण किया है। किन्तु उसमें से निकले हुए परिणाम सबके लिए अन्तिम ही हैं, वे सच्चे हैं अथवा वे ही सच्चे हैं, ऐसा दावा मैं कभी नहीं करना चाहता। हां, यह दावा मैं अवश्य करता हूं कि मेरी दृष्टिसे ये सच्चे हैं और इस समय तो अन्तिम जैसे ही मालूम होते हैं। अगर ऐसे न मालूम होते हों तो मुझे उनके सहारे कोई भी कार्य खड़ा नहीं करना चाहिये। लेकिन मैं तो पग-पग पर जिन वस्तुओंको देखता हूं उनके त्याज्य और ग्राह्य ऐसे दो भाग कर लेता हूं और जिन्हें ग्राह्य समझता हूं उनके अनुसार अपना आचरण बना लेता हूं। ४

मेरा जीवन सम्पूर्ण अखण्ड और अविभाज्य है। और मेरे सब कार्य एक-दूसरेमें ओतप्रोत हैं। उन सबका जन्म सम्पूर्ण मानव-जातिके प्रति रहे मेरे कभी न तृप्त होनेवाले प्रेमसे होता है। ५

गांधी-कुटुम्ब पहले तो पंसारीका धंधा करनेवाला था। लेकिन मेरे दादासे लेकर पिछली तीन पीढ़ियोंसे वह काठियावाड़के राज्योंमें दीवानगीरी करता रहा है। मालूम होता है कि उत्तमचन्द गांधी अथवा ओता गांधी टेकवाले आदमी थे। राजनीतिक खटपटके कारण उन्हें पोरबन्दर छोड़ना पड़ा था। और उन्होंने जूनागढ़ राज्यमें आश्रय लिया था। वहां उन्होंने नवाब साहबको बायें हाथसे सलाम किया। किसीने इस प्रकट अविनयका कारण पूछा तो जवाब मिला "दाहिना हाथ तो पोरबन्दरको अर्पित हो चुका है। ६

मेरे पिता कुटुम्ब-प्रेमी सत्यप्रिय शूर और उदार किन्तु क्रोधी थे। वे थोड़े विषयासक्त भी रहे होंगे। उनका आखिरी (चौथा) ब्याह चालीस सालके बाद हुआ था। हमारे परिवारमें और बाहर भी उनके विषयमें यह धारणा थी कि वे रिश्वतखोरीसे दूर भागते हैं और इस कारण शुद्ध न्याय करते हैं। ७

मेरे मन पर यह छाप पड़ी हुई है कि मेरी माता साध्वी स्त्री थीं। वे बहुत श्रद्धालु थीं। बिना पूजा-पाठके कभी भोजन न करती थीं। हमेशा हवेली (वैष्णव मन्दिर) जाती थीं। वे कठिन-से-कठिन व्रत शुरू करतीं और उन्हें निर्विघ्न पूरा करतीं। लिये हुए व्रतोंको बीमार होने पर भी वे कभी न छोड़ती थीं। ८

इन माता-पिताके घरमें पोरबन्दरमें मेरा जन्म हुआ। बचपन मेरा पोरबन्दरमें ही बीता। याद पड़ता है कि मुझे किसी पाठशालामें भरती किया गया था। वहां मैं मुश्किलसे थोड़े पहाड़े सीखा था। मुझे सिर्फ इतना याद है कि मैं उस समय दूसरे लड़कोंके साथ अपने शिक्षकको गाली देना सीखा था। और कुछ याद नहीं पड़ता। इस परसे मैं अन्दाज लगाता हूं कि मेरी बुद्धि मन्द और स्मरण-शक्ति कच्ची रही होगी। ९

मैं बहुत ही शरमीला लड़का था। पाठशालामें अपने कामसे ही काम रखता था। घंटी बजनेके समय पहुंचता था और पाठशालाके बन्द होते ही घर भाग

भागता था। ऐसा मैं जान-बूझकर किया करता था, क्योंकि किसीसे बातें करना मुझे अच्छा नहीं लगता था। साथ ही यह डर भी रहता था कि कोई मेरा मजाक उड़ायेगा। ९

हाईस्कूलके पहले ही वर्षकी परीक्षाके समयकी एक घटना उल्लेखनीय है। शिक्षा-विभागके इन्स्पेक्टर जाइल्स विद्यालयका निरीक्षण करने आये थे। उन्होंने पहली कक्षाके विद्यार्थियोंको अंग्रेजीके पांच शब्द लिखाये। उनमें एक शब्द केटल (Kettle) था। मैंने उसके हिज्जे गलत लिखे थे। शिक्षकने अपने बूटकी नोक मारकर मुझे सावधान किया। लेकिन मैं क्यों सावधान होने लगा? मुझे यह खयाल ही नहीं हो सका कि शिक्षक पासवाले लड़केकी पट्टी देखकर हिज्जे सुधार लेनेको कहते हैं। मैंने यह माना था कि शिक्षक तो यह देख रहे हैं कि हम एक-दूसरेकी पट्टी देखकर चोरी न करें। सब लड़कोंके पांचों शब्द सही निकले, अकेला मैं बेवकूफ ठहरा! शिक्षकने मुझे अपनी बेवकूफी बादमें समझायी, लेकिन मेरे मन पर उनके समझानेका कोई असर न हुआ। मैं दूसरे लड़कोंकी पट्टीमें देखकर चोरी करना कभी सीख ही नहीं सका। ११

यह लिखते हुए मन दुःखी होता है कि तेरह सालकी उमरमें मेरा विवाह हुआ था। आज मेरी आंखोंके सामने बारह-तेरह वर्षके बालक मौजूद हैं। जब उन्हें देखता हूं और अपने विवाहका स्मरण करता हूं तो मुझे अपने ऊपर दया आती है, और इन बालकोंको मेरी स्थितिसे बच जानेके लिए बधाई देनेकी इच्छा होती है। तेरहवें वर्षमें हुए अपने विवाहके समर्थनमें मुझे एक भी नैतिक दलील सूझ नहीं सकती। १२

उस समय मेरे मनमें अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने, बाजे बजने, वर-यात्राके समय घोड़े पर चढ़ने, बढ़िया भोजन पाने एवं नई बालिकाके साथ विनोद करने आदिकी अभिलाषाके सिवा दूसरी कोई खास बात रही हो ऐसा मुझे स्मरण नहीं है। १३

और वह पहली रात! दो निर्दोष बालक अनजाने संसार-सागरमें कूद पड़े। भाभीने सिखलाया कि मुझे पहली रातमें कैसा बरताव करना चाहिये। धर्मपत्नीको किसने सिखलाया यह पूछनेकी बात मुझे याद नहीं। अब भी पूछा जा सकता है, परन्तु पूछनेकी इच्छा तक नहीं होती। पाठक यह जान लें कि हम दोनों एक-दूसरेसे डरते थे। एक-दूसरेसे शरमाते तो थे ही। बातें कैसे करना क्या करना सो मैं क्या जानूँ? मिली हुई सिखावन भी इसमें क्या मदद करती? लेकिन क्या इस सम्बन्धमें कुछ सिखाना जरूरी होता है? जहाँ संस्कार बलवान हैं वहाँ सारी सिखावन गैरजरूरी बन जाती है। धीरे-धीरे हम एक-दूसरेको पहचानने लगे आपसमें बोलने लगे। हम दोनों समान उमरके थे। पर मैंने तो जल्दी ही पतिकी सत्ता चलाना शुरू कर दिया। १४

मुझे कहना चाहिये कि मैं अपनी स्त्रीके प्रति विषयासक्त था। शालामें भी मुझे उसके विचार आते रहते थे। कब रात पड़े और कब हम मिलें यह विचार बना ही रहता था। वियोग असह्य था। अपनी कुछ निकम्मी बकवासोंसे मैं कस्तूरबाईको जगाये रखता था। मेरा खयाल है कि यदि इस आसक्तिके साथ ही मुझमें कर्तव्य-परायणता न होती तो मैं व्याधिग्रस्त होकर मौतके मुँहमें चला जाता अथवा इस संसारमें बोझ-रूप बनकर जिन्दा रहता। सबेरा होते ही नित्यकर्ममें तो लग ही जाना चाहिये किसीको धोखा तो दिया ही नहीं जा सकता — अपने इन विचारोंके कारण मैं बहुतसे संकटोंसे बच गया हूँ। १५

मेरा अपना खयाल है कि मुझे अपनी होशियारीका कोई गर्व नहीं था। पुरस्कार या छात्रवृत्ति मिलने पर मुझे आश्चर्य होता था। पर अपने आचरणके विषयमें मैं बहुत सजग था। आचरणमें थोड़ा भी दोष आने पर मुझे रुलाई आ ही जाती थी। मेरे हाथों कोई भी ऐसा काम बनता जिससे शिक्षकोंको मुझे डाँटना पड़ता अथवा शिक्षकोंका वैसा खयाल बनता तो वह मेरे लिए असह्य हो जाता था। मुझे याद है कि एक बार मुझे मार खानी पड़ी थी। मुझे मारका दुःख नहीं था पर मैं दंडका पात्र माना गया इसका मुझे बड़ा दुःख रहा। मैं खूब रोया। १६

हाईस्कूलमें मेरे थोड़े ही विश्वासपात्र मित्र थे। कहा जा सकता है कि ऐसी मित्रता रखनेवाले दो मित्र अलग-अलग समयमें रहे। दूसरी मित्रता मेरे जीवनका एक दुःखद प्रकरण है। यह मित्रता बहुत बरसों तक रही। इस मित्रताको निभानेमें मेरी दृष्टि सुधारककी थी। १७

बादमें मैं देख सका कि मेरा अनुमान ठीक नहीं था। सुधार करनेके लिए भी मनुष्यको गहरे पानीमें नहीं पैठना चाहिये। जिसे सुधारना है उसके साथ मित्रता नहीं हो सकती। मित्रतामें अद्वैत भाव होता है। संसारमें ऐसी मित्रता क्वचित् ही पायी जाती है। मित्रता समान गुणवालोंके बीच ही शोभती है और निभती है। मित्र एक-दूसरेको प्रभावित किये बिना रह ही नहीं सकते। अतएव मित्रतामें सुधारके लिए बहुत कम अवकाश रहता है। मेरी राय है कि घनिष्ठ मित्रता अनिष्ट है क्योंकि मनुष्य गुणोंकी अपेक्षा दोषोंको जल्दी ग्रहण करता है। गुण ग्रहण करनेके लिए प्रयासकी आवश्यकता है। जो आत्माकी ईश्वरकी मित्रता चाहता है, उसे एकाकी रहना चाहिये अथवा समूचे संसारके साथ मित्रता रखनी चाहिये। ऊपरका विचार योग्य हो अथवा अयोग्य घनिष्ठ मित्रता बढ़ानेका मेरा प्रयोग निष्फल रहा। १८

इन मित्रके पराक्रम मुझे मुग्ध कर देते थे। ये मनचाहा दौड़ सकते थे। इनकी गति बहुत अच्छी थी। ये खूब लम्बा और ऊंचा कूद सकते थे। मार सहन करनेकी शक्ति भी इनमें खूब थी। अपनी इस शक्तिका प्रदर्शन भी ये मेरे सामने समय-समय पर करते थे। जो शक्ति अपनेमें नहीं होती उसे दूसरोंमें देखकर मनुष्यको आश्चर्य होता ही है। वैसा मुझे भी हुआ। आश्चर्यमेंसे मोह पैदा हुआ। मुझमें दौड़ने-कूदनेकी शक्ति नहींके बराबर थी। मैं सोचा करता कि मैं भी इन मित्रकी तरह बलवान बन जाऊं तो कितना अच्छा हो! १९

मैं बहुत डरपोक था। चोर, भूत, सांप आदिके डरसे घिरा रहता था। ये डर मुझे खूब हैरान भी करते थे। रात कहीं अकेले जानेकी हिम्मत

भी होती थी। अंधेरेमें तो मैं कहीं जाता ही न था। दीयेके बिना सोना लगभग असम्भव था। कहीं इधरसे भूत न आ जाये, उधरसे चोर न आ जाये और तीसरी जगहसे सांप न निकल आये! इसलिए दीयेकी जरूरत तो रहती ही थी। २

मेरे ये मित्र मेरी इन कमजोरियोंको जानते थे। वे मुझसे कहा करते थे कि वे तो जिन्दा सांपोंको भी हाथसे पकड़ लेते हैं, चोरसे कभी नहीं डरते, भूतको तो मानते ही नहीं। उन्होंने मेरे मनमें यह ठसा दिया कि यह सारा प्रताप मांसाहारका है। २१

इन सब बातोंका मेरे मन पर पूरा पूरा असर हुआ। मैं यह मानने लगा कि मांसाहार अच्छी चीज है। उससे मैं बलवान और साहसी बनूंगा। अगर समूचा देश मांसाहार करे, तो अंग्रेजोंको हराया जा सकता है। २२

जब-जब ऐसा भोजन मिलता तब-तब घर पर तो भोजन किया ही नहीं जा सकता था। जब माताजी भोजनके लिए बुलातीं तब मुझे आज भूख नहीं है खाना हजम नहीं हुआ है ऐसे बहाने बनाने पड़ते थे। ऐसा कहते समय हर बार मुझे भारी आघात पहुंचता था। इतना झूठ, वह भी मांके सामने! और अगर माता-पिताको पता चले कि लड़के मांसाहारी हो गये हैं तब तो उन पर बिजली ही टूट पड़ेगी। ये विचार मेरे दिलको कुरेदते रहते थे।

इसलिए मैंने निश्चय किया मांस खाना आवश्यक है उसका प्रचार करके हिन्दुस्तानको सुधारेंगे पर माता-पिताको धोखा देना और झूठ बोलना तो मांस न खानेसे भी बुरा है। इसलिए माता-पिताके जीते-जी मुझे मांस नहीं खाना चाहिये। उनकी मृत्युके बाद स्वतंत्र होने पर, खुले तौरसे मांस खाना चाहिये और जब तक वह समय न आये तब तक मुझे मांसाहारका त्याग करना चाहिये।

हम दम्पतीके बीच जो कुछ मतभेद पैदा होता या कलह होता उसका एक कारण यह मित्रता भी थी। मैं ऊपर बता चुका हूं कि मैं जैसा प्रेमी पति था वैसा ही वहमी पति था। पत्नीके बारेमें मेरे वहमको बढ़ानेवाली यह मित्रता थी क्योंकि मित्रकी सच्चाईके बारेमें मुझे कोई सन्देह था ही नहीं। इस मित्रकी बातोंमें आकर मैंने अपनी धर्मपत्नीको कितने ही कष्ट पहुंचाये हैं। इस हिंसाके लिए मैंने अपनेको कभी माफ नहीं किया है। ऐसे दुःख केवल हिन्दू स्त्री ही सहन कर सकती है और इस कारण मैंने स्त्रीको सदा सहनशीलताकी मूर्तिके रूपमें देखा है। २६

इस सन्देहकी जड़ तो तभी कटी जब मुझे अहिंसाका सूक्ष्म ज्ञान हुआ यानी जब मैंने ब्रह्मचर्यकी महिमाको समझा और यह समझा कि पत्नी पतिकी दासी नहीं पर उसकी सहचारिणी है सहधर्मिणी है, दोनों एक दूसरेके सुख-दुःखके समान साझेदार हैं और भला-बुरा करनेकी जितनी स्वतन्त्रता पतिको है उतनी ही पत्नीको भी है। सन्देहके उस कालको जब मैं याद करता हूं तो मुझे अपनी मूर्खता और विषयान्ध निर्दयता पर क्रोध आता है और मित्रता-विषयक अपनी मूर्च्छा पर दया आती है। २७

छह या सात सालसे लेकर सोलह सालकी उमर तक मैंने स्कूलमें पढ़ाई की पर स्कूलमें कहीं भी धर्मकी शिक्षा नहीं मिली। यों कह सकते हैं कि शिक्षकोंसे जो आसानीसे मिलना चाहिये था वह मुझे नहीं मिला। फिर भी वातावरणसे कुछ-न-कुछ तो मिलता ही रहा। यहां धर्मका उदार अर्थ करना चाहिये। धर्म अर्थात् आत्मबोध आत्मज्ञान। २८

पर एक चीजने मनमें गहरी जड़ जमा ली — यह संसार नीति पर टिका हुआ है। नीतिमात्रका समावेश सत्यमें है। सत्यको तो खोजना ही होगा। दिन-पर-दिन सत्यकी महिमा मेरे निकट बढ़ती गयी। सत्यकी व्याख्या विस्तृत होती गयी और आज भी हो रही है। २९

न मैं उन्हें समझ पाता था। इसमें दोष अध्यापकोंका नहीं, मेरी मन्द बुद्धिका ही था। उस समयके शामलदास कॉलेजके अध्यापक तो प्रथम पंक्तिके माने जाते थे। पहला सत्र पूरा करके मैं घर आया। १२

कुटुम्बके पुराने मित्र और सलाहकार एक विद्वान व्यवहार-कुशल ब्राह्मण ... मेरी छुट्टीके दिनोंमें हमारे घर आये। माताजी और बड़े भाईके साथ बातचीत करते हुए उन्होंने मेरी पढ़ाईके बारेमें पूछताछ की। जब सुना कि मैं शामलदास कॉलेजमें हूं तो वे बोले ... अब जमाना बदल गया है। ... आपको इसे विलायत भेजना चाहिये। केवलराम (मेरा लड़का) कहता है कि वहांकी पढ़ाई सरल है। तीन सालमें यह पढ़कर लौट आयेगा। खर्च भी चार-पांच हजारसे अधिक नहीं होगा। नये आये हुए बैरिस्टरोंको देखो वे कैसे ठाठसे रहते हैं! वे चाहें तो दीवानगीरी उन्हें आज मिल सकती है। मेरी तो सलाह है कि आप मोहनदासको इसी साल विलायत भेज दीजिये। १३

मेरी माताजीको कुछ सूझ न पड़ा। ... कोई कहता नौजवान लोग विलायत जाकर बिगड़ जाते हैं, कोई कहता वे मांसाहार करने लगते हैं, कोई कहता वहां शराबके बिना तो चलता ही नहीं। माताजीने मुझे ये सारी बातें सुनायीं। मैंने कहा, पर तू मेरा विश्वास नहीं करेगी? मैं तुझे धोखा नहीं दूंगा। सौगन्ध खाकर कहता हूं कि मैं इन तीनों चीजोंसे बचूंगा। अगर ऐसा खतरा होता तो जोशीजी क्यों जाने देते? ... मैंने मांस, मदिरा तथा स्त्रीसंगसे दूर रहनेकी प्रतिज्ञा की। माताजीने जानेकी आज्ञा दे दी। १४

अध्ययनके लिए लन्दन जानेके इरादेने निश्चित रूप लिया, उसके पहले भी यहां जाकर लन्दनके विषयमें जाननेके अपने कुतूहलको शान्त करनेकी गुप्त योजना मेरे मनमें पकी हुई थी। १५

अठारह सालकी उमरमें मैं विलायत गया। ... वहांके लोग विचित्र, उनका रहन-सहन विचित्र, उनके घर भी विचित्र, घरोंमें रहनेका ढंग भी विचित्र! क्या कहने और क्या करनेसे वहां शिष्टाचारके नियमोंका

आनन्द देने लगी। और जिस तरह अब तक मैं यह मानता था कि सब मांसाहारी बनें तो अच्छा हो और पहले केवल सत्यकी रक्षाके लिए तथा बादमें प्रतिज्ञा-पालनके लिए ही मैं मांसका त्याग करता था और भविष्यमें किसी दिन स्वयं आजादीसे प्रकट रूपमें मांस खाकर दूसरोंको मांस खानेवालोंके दलमें सम्मिलित करनेकी उमंग रखता था उसी तरह अब स्वयं अन्नाहारी रहकर दूसरोंको अन्नाहारी बनानेका लोभ मुझमें आया। १८

जो आदमी नया धर्म स्वीकारता है उसमें उस धर्मके प्रचारका जोश उस धर्ममें जन्मे हुए लोगोंकी अपेक्षा अधिक पाया जाता है। विलायतमें तो अन्नाहार एक नया धर्म ही था और मेरे लिए भी वह वैसा ही माना जायेगा क्योंकि बुद्धिसे तो मैं मांसाहारका हिमायती बननेके बाद ही विलायत गया था। अन्नाहारकी नीतिको ज्ञानपूर्वक तो मैंने विलायतमें ही अपनाया था। अतएव मेरी स्थिति नये धर्ममें प्रवेश करने जैसी बन गयी थी और मुझमें नवधर्मीका जोश आ गया था। इस कारण उस समय मैं जिस बस्तीमें रहता था उसमें मैंने अन्नाहारी मण्डलकी स्थापना करनेका निश्चय किया। इस बस्तीका नाम बेजवॉटर था। इसमें सर एडविन आर्नल्ड रहते थे। मैंने उन्हें उपसभापति बननेको निमन्त्रित किया। वे बने। डॉ. ओल्डफील्ड जो दि वेजिटेरियन के संपादक थे सभापति बने। मैं मंत्री बना। १९

अन्नाहारी मण्डलकी कार्यकारिणीमें मुझे चुन तो लिया गया था और उसमें मैं हर बार हाजिर भी रहता था पर बोलनेके लिए मेरी जीभ खुलती ही नहीं थी। मुझे बोलनेकी इच्छा न होती हो सो बात नहीं पर बोलता क्या? मेरी यह लज्जाशीलता विलायतमें अन्त तक बनी रही। किसीसे मिलने जाने पर भी जहां पांच-सात मनुष्योंकी मण्डली इकट्ठी होती वहां मैं गूंगा बन जाता था। ४

अपने इस शरमीले स्वभावके कारण मेरी फजीहत तो हुई, पर मेरा कोई नुकसान नहीं हुआ बल्कि अब तो मैं यह देख सकता हूं कि मुझे इससे

था कि दुनियामें प्रचलित कई तरहके नशोंमें तम्बाकूका व्यसन एक प्रकारसे सबसे ज्यादा खराब है। कुकर्म करनेकी जो हिम्मत मनुष्यमें शराब पीनेसे नहीं आती वह बीड़ी पीनेसे आती है। शराब पीनेवाला पागल हो जाता है, जब कि बीड़ी पीनेवालेकी मति पर धुआं छा जाता है, और इस कारण वह हवाई किले बनाने लगता है। टॉल्स्टॉयने अपनी यह सम्मति प्रकट की थी कि एफिल टॉवर ऐसे ही व्यसनका परिणाम है।

एफिल टॉवरमें सौंदर्य तो कुछ है ही नहीं। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि उसके कारण प्रदर्शनीकी शोभामें कोई वृद्धि हुई हो। वह एक नई चीज थी बड़ी चीज थी इसलिए हजारों लोग उसे देखनेके लिए उस पर चढ़े। यह टॉवर प्रदर्शनीका एक खिलौना था। और जब तक हम मोहवश हैं तब तक हम भी बालक हैं यह बात इस टॉवर द्वारा भली-भांति सिद्ध होती है। मानना चाहें तो इतनी उपयोगिता उसकी मानी जा सकती है। ४४

परीक्षामें पास करके मैं १ जून १८९१ के दिन बैरिस्टर कहलाया। ११ जूनको ढाई शिलिंग देकर मैंने इंग्लैंडके हाईकोर्टमें अपना नाम दर्ज कराया और १२ जूनको हिन्दुस्तानके लिए रवाना हुआ। ४५

बड़े भाईने मुझ पर बड़ी-बड़ी आशायें बांध रखी थीं। उनको पैसेका कीर्तिका और पदका बहुत लोभ था। उनका दिल बादशाही था। उदारता उन्हें फिजूलखर्चीकी हद तक ले जाती थी। इस कारण और अपने भोले स्वभावके कारण उन्हें मित्रता करनेमें देर न लगती थी। इस मित्र मण्डलीकी मददसे वे मेरे लिए मुकदमे लानेवाले थे। उन्होंने यह भी मान लिया था कि मैं खूब कमाऊंगा इसलिए घरखर्च उन्होंने बढ़ा रखा था। मेरे लिए वकालतका क्षेत्र तैयार करनेमें भी उन्होंने कोई कसर नहीं रखी थी। ४६

लेकिन मैं चार-पांच महीनेसे अधिक बम्बईमें रह ही नहीं सकता था क्योंकि मेरा खर्च बढ़ता जाता था और आमदनी कुछ भी नहीं थी।

था कि दुनियामें प्रचलित कई तरहके नशोंमें तम्बाकूका व्यसन एक प्रकारसे सबसे ज्यादा खराब है। कुकर्म करनेकी जो हिम्मत मनुष्यमें शराब पीनेसे नहीं आती वह बीड़ी पीनेसे आती है। शराब पीनेवाला पागल हो जाता है, जब कि बीड़ी पीनेवालेकी मति पर धुआं छा जाता है, और इस कारण वह हवाई किले बनाने लगता है। टॉल्स्टॉयने अपनी यह सम्मति प्रकट की थी कि एफ़िल टॉवर ऐसे ही व्यसनका परिणाम है।

एफ़िल टॉवरमें सौंदर्य तो कुछ है ही नहीं। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि उसके कारण प्रदर्शनीकी शोभामें कोई वृद्धि हुई हो। वह एक नई चीज थी, बड़ी चीज थी, इसलिए हजारों लोग उसे देखनेके लिए उस पर चढ़े। वह टॉवर प्रदर्शनीका एक खिलौना था। और जब तक हम मोहवश हैं तब तक हम भी बालक हैं, यह बात इस टॉवर द्वारा भली भांति सिद्ध होती है। मानना चाहें तो इतनी उपयोगिता उसकी मानी जा सकती है। ४४

परीक्षामें पास करके मैं १० जून १८९१के दिन बैरिस्टर कहलाया। ११ जूनको ढाई शिलिंग देकर मैंने इंग्लैंडके हाईकोर्टमें अपना नाम दर्ज कराया और १२ जूनको हिन्दुस्तानके लिए रवाना हुआ। ४५

बड़े भाईने मुझ पर बड़ी-बड़ी आशायें बांध रखी थीं। उनको पैसेका कीर्तिका और पदका बहुत लोभ था। उनका दिल बादशाही था। उदारता उन्हें फिजूलखर्चीकी हद तक ले जाती थी। इस कारण और अपने भोले स्वभावके कारण उन्हें मित्रता करनेमें देर न लगती थी। इस मित्र मंडलीकी मददसे वे मेरे लिए मुकदमे लानेवाले थे। उन्होंने यह भी मान लिया था कि मैं खूब कमाऊंगा इसलिए घरखर्च उन्होंने बढ़ा रखा था। मेरे लिए वकालतका क्षेत्र तैयार करनेमें भी उन्होंने कोई कसर नहीं रखी थी। ४६

लेकिन मैं चार-पांच महीनेसे अधिक बम्बईमें रह ही नहीं सकता था क्योंकि मेरा खर्च बढ़ता जाता था और आमदनी कुछ भी नहीं थी।

लौटनेके बाद हम दोनों बहुत कम साथ रह पाये थे। और, शिक्षकके रूपमें मेरी योग्यता जो भी रही हो परन्तु मैं पत्नीका शिक्षक बना था इसलिए और पत्नीमें जो कुछ सुधार मैंने कराये थे उन्हें निबाहनेके लिए भी हम दोनों साथ रहनेकी आवश्यकता अनुभव करते थे। पर अफ्रीका मुझे अपनी तरफ खींच रहा था। उसने वियोगको सह्य बना दिया। ५१

नेटालके बन्दरगाहको डरबन कहा जाता है और वह नेटाल बन्दरके नामसे भी पहचाना जाता है। मुझे लेनेके लिए अब्दुल्ला सेठ आये थे। स्टीमरके घाट (डक) पर पहुंचने पर जब नेटालके लोग अपने मित्रोंको लेने स्टीमर पर आये तभी मैं समझ गया कि यहां हिन्दुस्तानियोंकी अधिक इज्जत नहीं है। अब्दुल्ला सेठको पहचाननेवाले उनके साथ जैसा बरताव करते थे उसमें भी मुझे एक प्रकारकी असभ्यता दिखायी पड़ी जो मुझे व्यथित करती थी। अब्दुल्ला सेठ इस असभ्यताको सह लेते थे। वे उसके आदी बन गये थे। मुझे जो लोग देखते थे वे कुछ कुतूहलकी दृष्टिसे देखते थे। अपनी पोशाकके कारण मैं दूसरे हिन्दुस्तानियोंसे अलग पड़ जाता था। मैंने उस समय फ्रॉक कोट और बंगाली ढंगकी पगड़ी पहनी थी। ५२

अब्दुल्ला सेठ दूसरे या तीसरे दिन मुझे डरबनकी अदालत दिखाने ले गये। वहां कुछ लोगोंसे मेरी जान-पहचान करायी। अदालतमें मुझे उन्होंने अपने वकीलके पास बैठाया। मजिस्ट्रेट मुझे बार-बार देखता रहा। अन्तमें उसने मुझे पगड़ी उतारनेके लिए कहा। मैंने उतारनेसे इनकार किया और अदालत छोड़ दी। ५३

सातवें या आठवें दिन मैं डरबनसे (प्रिटोरियाके लिए) रवाना हुआ। मेरे लिए पहले दरजेका टिकट कटाया गया। ट्रेन रातमें लगभग नौ बजे नेटालकी राजधानी मेरित्सबर्ग पहुंची। यहां बिस्तर दिया जाता था। रेलवेके किसी नौकरने आकर मुझसे पूछा "आपको बिस्तरकी जरूरत है?"

मैंने कहा "मेरे पास अपना बिस्तर है।

मुझे जो कष्ट सहना पड़ा है वो तो ऊपरी कष्ट है। यह गहराई तक पैठे हुए महारोगका लक्षण है। यह महारोग है — रंगद्वेष। यदि मुझमें इस गहरे रोगको मिटानेकी शक्ति हो तो उस शक्तिका उपयोग मुझे करना चाहिये। ऐसा करते हुए स्वयं जो कष्ट सहने पड़ें वे सब सहने चाहिये और उनका विरोध रंगद्वेषको मिटानेकी दृष्टिसे ही करना चाहिये।

यह निश्चय करके मैंने दूसरी ट्रेनमें जैसे भी हो आगे ही जानेका फैसला किया। ५४

मेरा पहला कदम तो सब हिन्दुस्तानियोंकी एक सभा करके उनके सामने उनकी सच्ची स्थितिका चित्र खड़ा कर देना था। ५५

इस सभामें मैंने जो भाषण दिया वह मेरे जीवनका पहला भाषण माना जा सकता है। मैंने काफी तैयारी की थी। मुझे सत्य पर बोलना था। मैं व्यापारियोंके मुहसे यह सुनता आ रहा था कि व्यापारमें सत्य नहीं चल सकता। इस बातको मैं तब भी नहीं मानता था और आज भी नहीं मानता। यह कहनेवाले व्यापारी मित्र आज भी मौजूद हैं कि व्यापारके साथ सत्यका मेल नहीं बैठ सकता। वे व्यापारको व्यवहार कहते हैं, सत्यको धर्म कहते हैं और दलील यह देते हैं कि व्यवहार एक चीज है, धर्म दूसरी। उनका यह विश्वास है कि व्यवहारमें शुद्ध सत्य चल ही नहीं सकता उसमें तो सत्य यथाशक्ति ही बोला-बरता जा सकता है। अपने भाषणमें मैंने इस बातका डटकर विरोध किया और व्यापारियोंको उनके दोहरे कर्तव्यका स्मरण कराया। परदेशमें आनेसे उनकी जिम्मेदारी देशकी अपेक्षा अधिक हो गयी है, क्योंकि यहां मुट्ठी भर हिन्दुस्तानियोंकी रहन-सहनसे हिन्दुस्तानके करोड़ों लोगोंको नापा तौला जाता है। ५६

पटरी पर चलनेका प्रश्न मेरे लिए कुछ गंभीर परिणामवाला सिद्ध हुआ। मैं हमेशा प्रेसिडेण्ट स्ट्रीटके रास्ते एक खुले मैदानमें घूमने जाया करता था। इस मुहल्लेमें प्रेसिडेण्ट क्रूगरका घर था। यह घर सब तरहके ठाट

प्रिटोरियामें मुझे जो एक वर्ष मिला वह मेरे जीवनका अमूल्य वर्ष था। सार्वजनिक काम करनेकी अपनी शक्तिका कुछ अन्दाज मुझे यहां हुआ। उसे सीखनेका अवसर यहीं मिला। यहीं मेरी धार्मिक भावना अपने-आप तीव्र होने लगी और कहना होगा कि सच्ची वकालत भी मैं यहीं सीखा। ५९

मैंने देखा कि वकीलका कर्तव्य दोनों पक्षोंके बीच पड़ी हुई खाईको पाटना है। इस शिक्षाने मेरे मनमें ऐसी जड़ जमायी कि बीस सालकी अपनी वकालतका मेरा अधिकांश समय अपने दफ्तरमें बैठकर सैकड़ों मामलोंको आपसमें सुलझानेमें ही बीता। उसमें मैंने कुछ खोया नहीं। आत्मा तो खोयी ही नहीं। ६०

जैसी जिसकी भावना वैसा उसका फल, इस नियमको मैंने अपने बारेमें अनेक बार घटित होते देखा है। जनताकी अर्थात् गरीबोंकी सेवा करनेकी मेरी प्रबल इच्छाने गरीबोंके साथ मेरा संबंध हमेशा अनायास ही जोड़ दिया है और उनके साथ एकरूप होनेकी शक्ति प्रदान की है। ६१

मुझे वकालत शुरू किये अभी मुश्किलसे तीन-चार महीने हुए थे। कांग्रेस का भी बचपन था। इतनेमें एक दिन बालासुन्दरम् नामका एक मद्रासी हिन्दुस्तानी हाथमें साफा लिये रोता रोता मेरे सामने आकर खड़ा हो गया। उसके कपड़े फटे हुए थे, वह थर-थर कांप रहा था, उसके मुंहसे खून बह रहा था और उसके आगेके दो दांत टूटे हुए थे। उसके मालिकने उसे बुरी तरह मारा था। तामिल समझनेवाले अपने मुहर्रिरके द्वारा मैंने उसकी स्थिति जान ली। बालासुन्दरम् एक प्रतिष्ठित गोरेके यहां मजदूरी करता था। मालिक किसी वजहसे उस पर गुस्सा हुआ होगा।

नेटाल इंडियन कांग्रेस: नेटाल विधान-सभामें हिन्दुस्तानियोंका मत-दानका अधिकार रद करनेके लिए जो बिल पेश किया गया था उसके खिलाफ आन्दोलन करनेके लिए गांधीजीने इस कांग्रेसका संगठन किया था।

गाया जाता था। मैंने अनुभव किया कि मुझे भी उसे गाना चाहिये। ब्रिटिश राजनीतिमें दोष तो मैं तब भी देखता था, फिर भी कुल मिलाकर मुझे यह नीति अच्छी लगती थी। उस समय मैं मानता था कि ब्रिटिश शासन कुल मिलाकर (हिंदुस्तानकी) जनताका पोषण करनेवाला है।

दक्षिण अफ्रीकामें मैं इससे उलटी नीति देखता था, वर्ण-द्वेष देखता था। मैं मानता था कि यह क्षणिक और स्थानिक है। इस कारण राजनिष्ठामें मैं अंग्रेजोंसे भी आगे बढ़ जानेका प्रयत्न करता था। मैंने लगनके साथ मेहनत करके अंग्रेजोंके राष्ट्रगीत 'गॉड सेव दि किंग' की लय सीख ली थी। जब वह सभाओंमें गाया जाता तो मैं अपना सुर उसमें मिला दिया करता था। और जो भी अवसर आडम्बरके बिना राजनिष्ठा प्रदर्शित करनेके आते उनमें मैं सम्मिलित होता था।

इस राजनिष्ठाको अपनी जिन्दगीमें मैंने कभी भुनाया नहीं। इससे व्यक्तिगत लाभ उठानेका मैंने कभी विचार तक नहीं किया। राज-भक्तिको ऋण समझकर मैंने सदा ही उसे चुकाया है। १६

जब मैं दक्षिण अफ्रीकामें तीन साल रह चुका था। मैं (वहांके हिंदुस्तानी) लोगोंको पहचानने लगा था और वे मुझे पहचानने लगे थे। सन् १८९६ में मैंने छह महीनेके लिए देश जानेकी इजाजत मांगी। मैंने देखा कि मुझे दक्षिण अफ्रीकामें लम्बे समय तक रहना पड़ेगा। कहा जा सकता है कि मेरी वकालत ठीक चल रही थी। सार्वजनिक काममें हिंदुस्तानी लोग मेरी उपस्थितिकी आवश्यकता अनुभव कर रहे थे, मैं भी करता था। इससे मैंने दक्षिण अफ्रीकामें सपरिवार रहनेका निश्चय किया और उसके लिए देश हो आना ठीक समझा। १७

कुटुम्बके साथ यह मेरी पहली समुद्री यात्रा थी। जिस समयकी बात मैं लिख रहा हूं उस समय मैं ऐसा मानता था कि सभ्य माने जानेके लिए हमारा बाहरी आचार-व्यवहार यथासम्भव यूरोपियनोंसे मिलता-जुलता होना चाहिये। ऐसा करनेसे ही लोगों पर प्रभाव पड़ सकता है, और बिना प्रभाव पड़े देशसेवा नहीं हो सकती। इस कारण पत्नीकी और बच्चोंकी

जैसे ही हम जहाजसे उतरे, कुछ लड़कोंने मुझे पहचान लिया और वे 'गांधी गांधी' चिल्लाने लगे। तुरन्त ही कुछ लोग इकट्ठा हो गये और चिल्लाहट बढ़ गयी। ... हम आगे बढ़े। भीड़ भी बढ़ती गयी। काफी भीड़ जमा हो गयी। ... फिर मुझ पर कंकरों और सड़े अण्डोंकी वर्षा शुरू हुई। किसीने मेरी पगड़ी उछाल कर फेंक दी। फिर लातें शुरू हुईं। मुझे गश आ गया। मैंने पासके घरकी जाली पकड़ ली और दम लिया। वहां खड़ा रहना तो सम्भव ही नहीं था। तमाचे पड़ने लगे। इतनेमें पुलिस अधिकारीकी स्त्री जो मुझे पहचानती थी उस रास्तेसे गुजरी। मुझे देखते ही वह मेरी बगलमें आकर खड़ी हो गयी और धूपके न रहते भी उसने अपनी छतरी खोल ली। इससे भीड़ कुछ नरम पड़ी। अब मुझ पर प्रहार करने हों तो मिसेज एलेक्जेण्डरको बचाकर ही किये जा सकते थे। ७२

उस समयके उपनिवेश-मन्त्री स्व० मि० चेम्बरलेनने तार द्वारा नेटाल सरकारको सूचित किया कि मुझ पर हमला करनेवालों पर मुकदमा चलाया जाय और मुझे न्याय दिलाया जाय। मि० एस्कम्बने मुझे अपने पास बुलाया। मुझे लगी हुई चोटके लिए खेद प्रकट करते हुए उन्होंने कहा: "आप यह तो मानेंगे ही कि आपका बाल भी बांका हो तो मुझे उससे कभी खुशी नहीं हो सकती। ... अगर आप हमला करनेवालोंको पहचान सकें तो मैं उन्हें गिरफ्तार करवाने और उन पर मुकदमा चलानेको तैयार हूं। मि० चेम्बरलेन भी यही चाहते हैं।"

मैंने जवाब दिया: "मुझे किसी पर मुकदमा नहीं चलाना है। सम्भव है हमला करनेवालोंमें से एक-दोको मैं पहचान लूं। पर उन्हें सजा दिलानेसे मुझे क्या लाभ होगा? फिर, मैं हमला करनेवालोंको दोषी भी नहीं मानता। उनसे तो यह कहा गया है कि मैंने हिन्दुस्तानमें बातका बतंगड़ बनाकर नेटालके गोरोंको बदनाम किया है। वे इस बातको मानकर गुस्सा हों तो इसमें आश्चर्य क्या है? दोष तो बड़ोंका और, मुझे कहनेकी इजाजत दें तो आपका माना जाना चाहिये। आप लोगोंको सही रास्ता दिखा सकते थे पर आपने भी रायटरके तारको ठीक माना और यह कल्पना कर ली

अन्तिम शिशुके जन्मके समय मेरी पूरी-पूरी परीक्षा हो गयी। पत्नीको प्रसव-वेदना अचानक शुरू हुई। डॉक्टर घर पर नहीं थे। दाईको बुलाना था। वह पास होती तो भी उससे प्रसव करानेका काम नहीं हो पाता। अतः प्रसवके समयका सारा काम मुझे अपने हाथों ही करना पड़ा। ७६

मेरा यह विश्वास है कि अपने बालकोंके समुचित पालन-पोषणके लिए माता-पिता दोनोंको बाल-संगोपन आदिका साधारण ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये। मैंने तो इस विषयकी अपनी सावधानीका लाभ पग-पग पर अनुभव किया है। मेरे बालक आज जिस सामान्य स्वास्थ्यका लाभ उठा रहे हैं उसे वे उठा नहीं पाते यदि मैंने इस विषयका सामान्य ज्ञान प्राप्त करके उस पर अमल न किया होता। हम लोगोंमें यह भ्रम फैला हुआ है कि पहले पांच वर्षोंमें बालकको शिक्षा प्राप्त करनेकी आवश्यकता नहीं होती। पर सच तो यह है कि पहले पांच वर्षोंमें बालक-को जो मिलता है वह बादमें कभी नहीं मिलता। मैं यह अनुभवसे कह सकता हूं कि बच्चोंकी शिक्षा माके पेटमें आनेके समयसे ही शुरू होती है। ७७

जो समझदार दम्पती इन बातों पर विचार करेंगे वे पति-पत्नीके संगको कभी विषय-वासनाकी तृप्तिका साधन नहीं बनायेंगे बल्कि जब उन्हें सन्तानकी इच्छा होगी तभी सहवास करेंगे। रतिसुख एक स्वतंत्र वस्तु है इस धारणामें मुझे तो घोर अज्ञान ही दिखायी पड़ता है। जनन-क्रिया पर संसारके अस्तित्वका आधार है। संसार ईश्वरकी लीलाभूमि है, उसकी महिमाका प्रतिबिम्ब है। उसकी सुव्यवस्थित वृद्धिके लिए ही रतिक्रियाका निर्माण हुआ है इस बातको समझनेवाला मनुष्य विषय वासनाको महाप्रयत्न करके भी अंकुशमें रखेगा और रतिसुखके परिणाम स्वरूप होनेवाली सन्ततिकी शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक रक्षाके लिए जिस ज्ञानकी प्राप्ति आवश्यक हो उसे प्राप्त करके उसका लाभ अपनी सन्तानको देगा। ७८

हैं वे हानि-लाभ पहुंचानेवाले होते हैं — इत्यादि दलीलोंसे मैं परिचित हूं। इनमें सत्यका अंश है। पर बिना दलील दिये मैं यहां अपना यह दृढ़ निश्चय ही प्रकट किये देता हूं कि जो मनुष्य ईश्वरसे डरकर चलना चाहता है, जो ईश्वरके प्रत्यक्ष दर्शन करनेकी इच्छा रखता है ऐसे साधक और मुमुक्षुके लिए अपने आहारका चुनाव — त्याग और स्वीकार — उतना ही आवश्यक है जितना कि विचार और वाणीका चुनाव — त्याग और स्वीकार — आवश्यक है। ८१

भोग भोगना मैंने शुरू तो किया पर वह टिक न सका। घरके लिए साज-सामान भी जुटाया पर मेरे मनमें उसके प्रति कभी मोह उत्पन्न नहीं हो सका। इसलिए घर बसाते ही मैंने खर्च कम करना शुरू कर दिया। धोबीका खर्च भी मुझे ज्यादा मालूम हुआ। इसके अलावा धोबी निश्चित समय पर कपड़े नहीं लौटाता था। इसलिए दो-तीन दर्जन कमीजों और उतने ही कालरोंसे भी मेरा काम चल नहीं पाता था। कालर मैं रोज बदलता था। कमीज रोज नहीं तो एक दिनके अन्तरसे बदलता था। इससे दोहरा खर्च होता था। मुझे यह व्यर्थ प्रतीत हुआ। अतएव मैंने धुलाईका सामान जुटाया। धुलाई-कला पर पुस्तक खरीद कर पढ़ी और धोना सीखा। पत्नीको भी सिखाया। कामका कुछ बोझ तो बढ़ा ही पर नया काम होनेसे उसे करनेमें आनन्द आता था।

पहली बार अपने हाथों धोये हुए कालरको तो मैं कभी भूल ही नहीं सकता। उसमें कलफ अधिक लग गया था और इस्तरी पूरी गरम नहीं हुई थी। तिस पर कालरके जल जानेके डरसे इस्तरीको मैंने अच्छी तरह दबाया भी नहीं था। इससे कालरमें कड़ापन तो आ गया पर उसमें से कलफ झड़ता रहता था। ऐसी हालतमें मैं कोर्ट गया और वहां बैरिस्टरोंके लिए मजाकका साधन बन गया। पर इस तरहका मजाक सह लेनेकी शक्ति उस समय भी मुझमें काफी थी। ८२

जिस तरह मैं धोबीकी गुलामीसे छूटा उसी तरह नाईकी गुलामीसे भी छूटनेका अवसर आ गया। हजामत तो विलायत जानेवाले सब कोई

साथी मिले उतनोंको लेकर और अनेक कठिनाइयां सहकर हमने बीमारों-की सेवा-शुश्रूषा करनेवाली एक टुकड़ी खड़ी की। ८४

इस तरह दक्षिण अफ्रीकाके भारतीयोंकी सेवा करते हुए मैं स्वयं धीरे-धीरे कई बातें अनायास सीख रहा था। सत्य एक विशाल वृक्ष है। ज्यों-ज्यों उसकी सेवा की जाती है त्यों-त्यों उसमें से अनेक फल पैदा होते दिखायी पड़ते हैं। उनका अन्त ही नहीं होता। हम जैसे-जैसे उसकी गहराईमें उतरते जाते हैं वैसे-वैसे उसमें से अधिक रत्न मिलते जाते हैं सेवाके अवसर प्राप्त होते रहते हैं। ८५

मनुष्य और उसका काम — ये दो भिन्न वस्तुएं हैं। अच्छे कामके प्रति आदर और बुरे कामके प्रति तिरस्कार होना ही चाहिये। भले-बुरे काम करनेवालोंके प्रति सदा आदर अथवा दया रहनी चाहिये। यह चीज समझनेमें सरल है पर इसके अनुसार आचरण सबसे कम होता है। इसी कारणसे इस संसारमें विष फैलता रहता है।

सत्यकी शोधके मूलमें ऐसी अहिंसा है। मैं प्रतिक्षण यह अनुभव करता रहता हूं कि जब तक यह अहिंसा हाथमें नहीं आती तब तक सत्य मिल ही नहीं सकता। व्यवस्था या पद्धतिके विरुद्ध झगड़ना शोभा देता है, पर व्यवस्थापकके विरुद्ध झगड़ा करना तो अपने विरुद्ध झगड़नेके समान है। क्योंकि हम सब एक ही कूचीसे रचे गये हैं एक ही ब्रह्मा की सन्तान हैं। व्यवस्थापकमें अनन्त शक्तियां भरी हैं। व्यवस्थापकका अनादर या तिरस्कार करनेसे उन शक्तियोंका अनादर होता है और वैसा होने पर व्यवस्थापकको और संसारको हानि पहुंचती है। ८६

मेरे जीवनमें ऐसी घटनायें घटती ही रही हैं जिनके कारण मैं अनेक धर्मावलम्बियोंके और अनेक जातियोंके गाढ़ परिचयमें आ सका हूं। इन सबके अनुभवोंके आधार पर यह कहा जा सकता है कि मैंने अपने और पराये देशी और विदेशी गोरे और काले हिन्दू और मुसलमान अथवा ईसाई, पारसी या यहूदीके बीच कोई भेद नहीं किया। मैं कह सकता हूं कि मेरा हृदय ऐसा भेद कर ही न सका। ८७

समाचारपत्र एक जबरदस्त शक्ति है; किन्तु जिस प्रकार निरंकुश पानीका प्रवाह गांवके गांव डुबो देता है और फसलको नष्ट कर देता है, उसी प्रकार कलमका निरंकुश प्रवाह भी नाशकी सृष्टि करता है। यदि ऐसा अंकुश बाहरसे आता है, तो वह निरंकुशतासे भी अधिक विषैला सिद्ध होता है। अंकुश अन्दरका ही लाभदायक हो सकता है। यदि यह विचारधारा सही हो तो दुनियाके कितने समाचारपत्र इस कसौटी पर खरे उतर सकते हैं? लेकिन निकम्मोंको बन्द कौन करे? कौन किसे निकम्मा समझे? उपयोगी और निकम्मे दोनों तरहके समाचारपत्र साथ-साथ ही चलते रहेंगे। उनमें से मनुष्यको अपना चुनाव करना होगा। ९

इससे [अन्टु दिस लास्ट से] पहले मैंने रस्किनकी एक भी पुस्तक नहीं पढ़ी थी। विद्याध्ययनके समयमें पाठ्यपुस्तकोंके बाहरकी मेरी पढ़ाई लगभग नहींके बराबर मानी जायगी। कर्मभूमिमें प्रवेश करनेके बाद समय बहुत कम बचता था। आज भी यही कहा जा सकता है। मेरा पुस्तकीय ज्ञान बहुत ही कम है। मैं मानता हूं कि इस अनायास अथवा बरबस पाले गये संयमसे मुझे कोई हानि नहीं हुई। बल्कि जो थोड़ी पुस्तकें मैं पढ़ पाया हूं कहा जा सकता है कि उन्हें मैं ठीकसे हजम कर सका हूं। इन पुस्तकोंमें से जिसने मेरे जीवनमें तत्काल महत्त्वके रचनात्मक परिवर्तन कराये वह अन्टु दिस लास्ट ही कही जा सकती है। बादमें मैंने उसका गुजराती अनुवाद किया और वह सर्वोदय के नामसे छपा।

मेरा यह विश्वास है कि जो चीज मेरे अन्दर गहराईमें छिपी पड़ी थी रस्किनके ग्रंथरत्नमें मैंने उसका स्पष्ट प्रतिबिम्ब देखा। और, इस कारण उसने मुझ पर अपना साम्राज्य जमाया और मुझसे उसमें दिये गये विचारों पर अमल कराया। जो मनुष्य हममें सोयी हुई उत्तम भावनाओंको जाग्रत करनेकी शक्ति रखता है वह कवि है। सब कवियोंका सब लोगों पर समान प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि सबके अन्दर सारी सद्भावनायें समान मात्रामें नहीं होतीं। ११

घर बसाकर बैठनेके बाद नहीं स्थिर होकर रहना मेरे नसीबमें बदा ही नहीं था। जोहानिसबर्गमें मैं कुछ स्थिर-सा होने लगा था कि इसी बीच एक अनसोची घटना घटी। अखबारोंमें यह खबर पढ़नेको मिली कि नेटालमें जुलू 'विद्रोह' हुआ है। जुलू लोगोंसे मेरी कोई दुश्मनी नहीं थी। उन्होंने एक भी हिन्दुस्तानीका नुकसान नहीं किया था। 'विद्रोह' शब्दके औचित्यके विषयमें भी मुझे शंका थी। किन्तु उन दिनों मैं अंग्रेजी सल्तनतको संसारका कल्याण करनेवाली सल्तनत मानता था। मेरी वफादारी हार्दिक थी। मैं उस सल्तनतका क्षय नहीं चाहता था। अतएव बल-प्रयोग-सम्बन्धी नीति-अनीतिका विचार मुझे इस कार्यको करनेसे रोक नहीं सकता था। नेटाल पर संकट आने पर उसके पास रक्षाके लिए स्वयंसेवकोंकी सेना थी और संकटके समय उसमें कामके लायक सैनिक भरती भी हो जाते थे। मैंने पढ़ा कि स्वयंसेवकोंकी यह सेना इस 'विद्रोह' को दबानेके लिए रवाना हो चुकी है। १२

'विद्रोह' के स्थान पर पहुंचकर मैंने देखा कि वहां विद्रोह-जैसी कोई बात नहीं थी। कोई विरोध करता हुआ भी नजर नहीं आता था। विद्रोह माननेका कारण यह था कि एक जुलू सरदारने जुलू लोगों पर लगाया गया नया कर न देनेकी उन्हें सलाह दी थी और करकी वसूलीके लिए गये हुए एक सार्जेन्टको उसने मार डाला था। जो भी हो, मेरा हृदय तो जुलू लोगोंकी तरफ ही था और केन्द्र पर पहुंचनेके बाद जब हमारे हिस्से मुख्यतः जुलू घायलोंकी शुश्रूषा करनेका काम आया तो मैं बहुत खुश हुआ। वहांके डॉक्टर अधिकारीने हमारा स्वागत किया। उसने कहा, 'गोरोंमें से कोई इन घायलोंकी सेवा-शुश्रूषा करनेके लिए तैयार नहीं होता। मैं अकेला किस-किसकी सेवा करूं? इनके घाव सड़ रहे हैं। अब आप आये हैं, इसे मैं इन निर्दोष लोगों पर ईश्वरकी कृपा ही समझता हूं।' यों कहकर उसने मुझे पट्टियां, जन्तुनाशक पानी आदि सामान दिया और उन बीमारोंके पास ले गया। बीमार हमें देखकर खुश हो गये। गोरे सिपाही जालियोंमें से झांक-झांककर हमें घाव साफ करनेसे रोकनेका प्रयत्न करते। हमारे न मानने

पर थूकते और चूल्होंके बारेमें जिन गन्दे शब्दोंका उपयोग करते उनसे तो कानके कीड़े झड़ जाते थे। ९३

कोई यह न माने कि जिन बीमारोंकी सेवा-शुश्रूषाका काम हमें सौंपा गया था वे किसी लड़ाईमें घायल हुए थे। उनमें से एक हिस्सा उन कैदियोंका था जो शकमें पकड़े गये थे। जनरलने उन्हें कोड़ोंकी सजा दी थी। इन कोड़ोंकी मारसे जो घाव पैदा हुए थे वे सार-सम्हालके अभावसे पक गये थे। दूसरा हिस्सा उन जुलुओंका था जो मित्र माने जाते थे। इन मित्रोंको गोरे सिपाहियोंने भूलसे घायल किया था यद्यपि उन्होंने मित्रता-सूचक चिह्न धारण कर रखे थे। ९४

जुलू-विद्रोह में मुझे बहुतसे अनुभव हुए और बहुत-कुछ सोचनेको मिला। बोअर-युद्धमें मुझे लड़ाईकी भयंकरता उतनी प्रतीत नहीं हुई थी जितनी यहां हुई। यहां लड़ाई नहीं बल्कि मनुष्यका शिकार हो रहा था। यह केवल मेरा ही नहीं बल्कि उन कई अंग्रेजोंका भी अनुभव था जिनके साथ मेरी चर्चा होती रहती थी। सबेरे-सबेरे सेना गांवमें जाकर मानो पटाखे छोड़ती हो इस प्रकार उसकी बन्दूकोंकी आवाज दूर रहनेवाले हम लोगोंके कानों पर पड़ती थी। इन आवाजोंको सुनना और इस वातावरणमें रहना मुझे बहुत मुश्किल मालूम पड़ा। लेकिन मैं सब कुछ कड़वे घूंटकी तरह पी गया और मेरे हिस्से जो काम आया सो तो केवल जुलू लोगोंकी सेवाका ही आया। मैं यह समझ गया कि अगर हम स्वयंसेवक-दलमें सम्मिलित न हुए होते तो दूसरा कोई यह सेवा न करता। इस विचारसे मैंने अपनी अन्तरात्माको शान्त किया। ९५

मन-वचन-कायासे ब्रह्मचर्यका पालन किस प्रकार हो यह मेरी एक चिन्ता थी और सत्याग्रहके युद्धके लिए अधिकसे अधिक समय किस तरह बच सके और अधिक शुद्धि किस प्रकार हो यह दूसरी चिन्ता थी। इन चिन्ताओंने मुझे आहारमें अधिक संयम और अधिक परिवर्तन करनेके लिए प्रेरित किया और पहले जो परिवर्तन मैं मुख्यतः आरोग्यकी दृष्टिसे करता था वे अब धार्मिक दृष्टिसे होने लगे।

हुए थे ही। मैं किसी वस्तुको छोड़ता और उसके बदलेमें दूसरी वस्तु लेता तो उस दूसरी वस्तुमें से बिलकुल नये और अधिक रसोंका निर्माण हो जाता। ९७

किन्तु अनुभवने मुझे सिखाया कि ऐसे स्वादोंका आनन्द लेना भी अनुचित था। मतलब यह कि मनुष्यको स्वादके लिए नहीं बल्कि शरीरके निर्वाहके लिए ही खाना चाहिये। जब प्रत्येक इन्द्रिय केवल शरीरके लिए और शरीरके द्वारा आत्माके दर्शनके लिए ही काम करती है, तब उसके रस शून्यवत् हो जाते हैं और तभी कहा जा सकता है कि वह स्वाभाविक रूपसे बरतती है।

ऐसी स्वाभाविकता प्राप्त करनेके लिए जितने प्रयोग किये जायें उतने कम ही हैं और ऐसा करते हुए अनेक शरीरोंकी आहुति देनी पड़े तो उसे भी हमें तुच्छ समझना चाहिये। आज तो उलटी धारा बह रही है। नश्वर शरीरको सजानेके लिए, उसकी उमर बढ़ानेके लिए, हम अनेक प्राणियोंकी बलि देते हैं, फिर भी उससे शरीर और आत्मा दोनोंका हनन होता है। ९८

मुझे जेलका पहला अनुभव सन् १९०८ में हुआ। उस समय मैंने देखा कि जेलमें कैदियोंसे जो कुछ नियम पलवाये जाते हैं संयमी अथवा ब्रह्मचारीको उनका पालन स्वेच्छापूर्वक करना चाहिये। जैसे कैदियोंको सूर्यास्तसे पहले पाँच बजे तक खाना खा लेना होता है। उन्हें — हिन्दुस्तानी और हब्शी कैदियोंको — चाय या कॉफी नहीं दी जाती। नमक खाना हो तो अलगसे लेना होता है। स्वादके लिए तो कुछ खाया ही नहीं जा सकता। ९९

जेलमें बड़ी मेहनतके बाद हम आखिर जरूरी परिवर्तन करा सके थे। पर केवल संयमकी दृष्टिसे देखें तो दोनों प्रतिबन्ध अच्छे ही थे। ऐसा प्रतिबन्ध जब जबरदस्ती लगाया जाता है तो वह सफल नहीं होता पर स्वेच्छासे पालन करने पर ऐसा प्रतिबन्ध बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। अतएव जेलसे छूटनेके बाद मैंने ये परिवर्तन भोजनमें तुरन्त किये।

हुए थे ही। मैं किसी वस्तुको छोड़ता और उसके बदलेमें दूसरी वस्तु लेता तो उस दूसरी वस्तुमें से बिलकुल नये और अधिक रसोंका निर्माण हो जाता। ९७

किन्तु अनुभवने मुझे सिखाया कि ऐसे स्वादोंका आनन्द लेना भी अनुचित था। मतलब यह कि मनुष्यको स्वादके लिए नहीं बल्कि शरीरके निर्वाहके लिए ही खाना चाहिये। जब प्रत्येक इन्द्रिय केवल शरीरके लिए और शरीरके द्वारा आत्माके दर्शनके लिए ही काम करती है तब उसके रस शून्यवत् हो जाते हैं और तभी कहा जा सकता है कि वह स्वाभाविक रूपसे बरतती है।

ऐसी स्वाभाविकता प्राप्त करनेके लिए जितने प्रयोग किये जाय उतने कम ही हैं और ऐसा करते हुए अनेक शरीरोंकी आहुति देनी पड़े तो उसे भी हमें तुच्छ समझना चाहिये। आज तो उलटी धारा बह रही है। नश्वर शरीरको सजानेके लिए, उसकी उमर बढ़ानेके लिए, हम अनेक प्राणियोंकी बलि देते हैं फिर भी उससे शरीर और आत्मा दोनोंका हनन होता है। ९८

मुझे जेलका पहला अनुभव सन् १९०८ में हुआ। उस समय मैंने देखा कि जेलमें कैदियोंसे जो कुछ नियम पलवाये जाते हैं संयमी अथवा ब्रह्मचारीको उनका पालन स्वेच्छापूर्वक करना चाहिये। जैसे कैदियोंको सूर्यास्तसे पहले पांच बजे तक खाना खा लेना होता है। उन्हें — हिन्दुस्तानी और हब्शी कैदियोंको — चाय या कॉफी नहीं दी जाती। नमक खाना हो तो अलगसे लेना होता है। स्वादके लिए तो कुछ खाया ही नहीं जा सकता। ९९

जेलमें बड़ी मेहनतके बाद हम आखिर जरूरी परिवर्तन करा सके थे। पर केवल संयमकी दृष्टिसे देखें तो दोनों प्रतिबन्ध अच्छे ही थे। ऐसा प्रतिबन्ध जब जबरदस्ती लगाया जाता है तो वह सफल नहीं होता पर स्वेच्छासे पालन करने पर ऐसा प्रतिबन्ध बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। अतएव जेलसे छूटनेके बाद मैंने ये परिवर्तन भोजनमें तुरन्त किये।

शिक्षक ही विद्यार्थीकी पाठ्यपुस्तक है। शिक्षकोंने पुस्तकोंकी मददसे मुझे जो सिखाया था वह मुझे बहुत ही कम याद रहा है। पर उन्होंने अपने मुंहसे जो सिखाया था उसका स्मरण आज भी बना हुआ है।

बालक आंखोंसे जितना ग्रहण करते हैं उसकी अपेक्षा कानोंसे सुनी हुई बातको वे थोड़े परिश्रमसे और बहुत अधिक मात्रामें ग्रहण कर सकते हैं। मुझे याद नहीं पड़ता कि मैं बालकोंको एक भी पुस्तक पूरी पढ़ा पाया था। पर अनेकानेक पुस्तकोंमें से जितना कुछ मैं पचा पाया था उसे मैंने अपनी भाषामें उनके सामने रखा था। मैं मानता हूं कि वह उन्हें आज भी याद होगा। पढ़ाया हुआ याद रखनेमें उन्हें कष्ट होता था जब कि मेरी कही हुई बातको वे उसी समय मुझे फिर सुना देते थे। पढ़नेमें उनका जी ऊबता था। जब मैं थकावटके कारण या अन्य किसी कारणसे मन्द और नीरस न होता तब वे मेरी बात रस-पूर्वक और ध्यान-पूर्वक सुनते थे। उनके पूछे हुए प्रश्नोंका उत्तर देनेमें मुझे उनकी ग्रहण-शक्तिका अन्दाजा हो जाता था। १४

शरीरकी शिक्षा जिस प्रकार शारीरिक कसरत द्वारा दी जाती है और बुद्धिकी शिक्षा बौद्धिक कसरत द्वारा उसी प्रकार आत्माकी शिक्षा आत्मिक कसरत द्वारा ही दी जा सकती है। आत्माकी कसरत शिक्षकके आचरण द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है। अतएव युवक हाजिर हों चाहे न हों शिक्षकको हमेशा ही सावधान रहना चाहिये। १५

मैं स्वयं झूठ बोलूं और अपने शिष्योंको सच्चा बनानेका प्रयत्न करूं तो वह व्यर्थ ही होगा। डरपोक शिक्षक शिष्योंको वीरता नहीं सिखा सकता। व्यभिचारी शिक्षक शिष्योंको संयम किस प्रकार सिखायेगा? मैंने देखा कि मुझे अपने पास रहनेवाले युवकों और युवतियोंके सम्मुख पदार्थपाठ-सा बनकर रहना चाहिये। इस कारण मेरे शिष्य मेरे शिक्षक बने। मैं यह समझा कि मुझे अपने लिए नहीं बल्कि उनके लिए अच्छा बनना और रहना चाहिये। अतएव कहा जा सकता है कि टॉल्स्टॉय आश्रमका मेरा अधिकतर संयम इन युवकों और युवतियोंकी बदौलत था।

उन दिनों मेरा जोहानिसबर्ग और फीनिक्स आना-जाना होता रहता था। एक बार मैं जोहानिसबर्गमें था तब मेरे पास दो व्यक्तियोंके भयंकर नैतिक पतनके समाचार पहुंचे। सत्याग्रहकी महान लड़ाईमें कहीं भी निष्फलता जैसी दिखायी पड़ती तो उससे मुझे कभी कोई आघात नहीं पहुंचता था। पर इस घटनाने मुझ पर वज्र-सा प्रहार किया। मैं तिलमिला उठा। मैंने उसी दिन फीनिक्सकी गाड़ी पकड़ी। १८

रास्तेमें मैंने अपना धर्म स्पष्ट समझ लिया अथवा यों कहिये कि समझ लिया-सा मानकर मैंने अनुभव किया कि अपनी निगरानीमें रहनेवालोंके पतनके लिए अभिभावक अथवा शिक्षक न्यूनाधिक अंशमें जरूर जिम्मेदार है। इस घटनामें मुझे अपनी जिम्मेदारी स्पष्ट जान पड़ी। मेरी पत्नीने मुझे सावधान तो कर ही दिया था किन्तु स्वभावसे विश्वासी होनेके कारण मैंने पत्नीकी चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया था। साथ ही मुझे यह भी लगा कि इस पतनके लिए मैं प्रायश्चित्त करूंगा तो ही ये पतित मेरा दुःख समझ सकेंगे और उससे उन्हें अपने दोषका भान होगा तथा उसकी गंभीरताका कुछ अंदाज बैठेगा। अतएव मैंने सात दिनके उपवास और साढ़े चार महीनोंके एकाशनका व्रत लिया। १९

यद्यपि मेरे उपवाससे सबको कष्ट तो हुआ लेकिन उसके कारण वातावरण शुद्ध बना। सबको पाप करनेकी भयंकरताका बोध हुआ और विद्यार्थियों तथा विद्यार्थिनियोंके और मेरे बीचका सम्बन्ध अधिक दृढ़ और सरल बन गया। ११

वकालतके धन्धेमें मैंने कभी असत्यका प्रयोग नहीं किया। और मेरी वकालतका बड़ा भाग केवल सेवाके लिए ही अर्पित था और उसके लिए जेबखर्चके अतिरिक्त मैं कुछ नहीं लेता था। कभी-कभी जेबखर्च भी अपनी ओरसे कर लेता था। विद्यार्थी-अवस्थामें भी मैं यह सुना करता था कि वकालतका धन्धा झूठ बोले बिना चल ही नहीं सकता। झूठ बोलकर मैं न तो कोई पद लेना चाहता था और न पैसा कमाना चाहता था। इसलिए इन बातोंका मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। दक्षिण

जब सन् १९१४में सत्याग्रहकी लड़ाई समाप्त हुई, तो गोखलेकी इच्छा अनुसार मुझे इंग्लैंड होते हुए हिंदुस्तान पहुंचना था। ४ अगस्तको युद्ध घोषित किया गया। ६ अगस्तको हम विलायत पहुंचे। १११

मुझे लगा कि विलायतमें रहनेवाले हिंदुस्तानियोंको इस लड़ाईमें अपना हिस्सा अदा करना चाहिये। अंग्रेज विद्यार्थियोंने लड़ाईमें सेवा करनेका अपना निश्चय घोषित किया था। हिंदुस्तानी इससे कम नहीं कर सकते थे। इन दलीलोंके विरोधमें बहुत दलीलें दी गयीं। यह कहा गया कि हमारी और अंग्रेजोंकी स्थितिके बीच हाथी-घोड़ेका अन्तर है। एक गुलाम है दूसरे सरदार। ऐसी स्थितिमें सरदारके संकटमें गुलाम स्वेच्छासे सरदारकी सहायता किस प्रकार कर सकता है? क्या गुलामीसे छुटकारा चाहनेवाले गुलामका यह धर्म नहीं है कि वह सरदारके संकटका उपयोग अपनी मुक्तिके लिए करे? पर उस समय यह दलील मेरे गले कैसे उतरती? यद्यपि मैं दोनोंकी स्थितिके भेदको समझ सका था फिर भी मुझे हमारी स्थिति बिलकुल गुलामीकी नहीं लगती थी। मेरा तो यह खयाल था कि अंग्रेजोंकी शासन-पद्धतिमें जो दोष है, उससे अधिक दोष अंग्रेज अधिकारियोंमें है। उस दोषको हम प्रेमसे दूर कर सकते हैं। यदि हम अंग्रेजोंके द्वारा और उनकी सहायतासे अपनी स्थिति सुधारना चाहते हैं तो उनके संकटके समय उनकी सहायता करके हमें अपनी स्थिति सुधारनी चाहिये। उनकी शासन-पद्धति दोषपूर्ण होते हुए भी मुझे उस समय वह उतनी असह्य नहीं मालूम होती थी जितनी आज मालूम होती है। किन्तु जिस प्रकार आज उस पद्धति परसे मेरा विश्वास उठ गया है और इस कारण मैं आज अंग्रेजी राज्यकी मदद नहीं करता उसी प्रकार जिनका विश्वास अंग्रेजोंकी शासन-पद्धति परसे ही नहीं बल्कि अंग्रेज अधिकारियों परसे भी उठ चुका था वे क्योंकर उनकी मदद करनेको तैयार होते? ११४

मैंने अंग्रेजोंकी इस आपत्तिके समय अपनी मांगें पेश करना ठीक न समझा और लड़ाईके समय अधिकारोंकी मांगको मुल्तवी रखनेके संयममें सभ्यता और दूरदृष्टिका दर्शन किया। इसलिए मैं अपनी सलाह पर दृढ़ रहा

था जो युद्धमें तो विश्वास रखते थे लेकिन जो अपनी कायरताके कारण हलके हेतुओंके कारण या ब्रिटिश सरकारके प्रति क्षोभ होनेके कारण सेनामें भरती होनेसे बचते थे। मैंने उन्हें यह सलाह देनेमें संकोच नहीं किया कि जब तक उन्हें युद्ध-नीतिमें विश्वास है और वे ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति वफादार होनेका दावा करते हैं तब तक उनका यह फर्ज है कि वे सेनामें भरती होकर ब्रिटिश साम्राज्यकी सहायता करें।

यद्यपि मैं तलवारका जवाब तलवारसे देनेकी नीतिको नहीं मानता हूं फिर भी चार साल पहले मैंने बेतियाके निकटवर्ती ग्राममें लोगोंसे यह कहनेमें संकोच अनुभव नहीं किया कि आपने जो अहिंसाके बारेमें कुछ नहीं जानते अपने माल-असबाब और स्त्रियोंके सम्मानकी रक्षा हथियारोंसे न करके अपनी कायरताका ही परिचय दिया था। मैंने हिंदुओंको अभी हाल ही यह कहनेमें हिचकिचाहट नहीं दिखाई कि यदि उन्हें अहिंसामें संपूर्ण श्रद्धा नहीं है और वे उस पर अमल नहीं कर सकें तो उन्हें हथियारोंका उपयोग करके अपनी स्त्रियोंको भगानेवालोंका सामना करना चाहिये और उनके शीलकी रक्षा करनी चाहिये अगर वे ऐसा नहीं करेंगे तो वे अपने धर्म और मानवताके प्रति अपराधी सिद्ध होंगे। और यह सारी सलाह और मेरा पहलेका आचरण मेरे शुद्ध अहिंसा धर्मके साथ केवल सुसम्बद्ध ही नहीं मालूम होगा लेकिन उसका सीधा परिणाम है। इस महान सिद्धान्तको जबानसे कह देना आसान है लेकिन उसको समझकर स्वार्थ द्वेष और विकारोंसे भरी हुई इस दुनियामें उसके अनुसार व्यवहार करना बड़ा कठिन काम है। इस कठिनाईको मैं दिनोंदिन अधिक अनुभव कर रहा हूं। लेकिन साथ ही मेरी यह श्रद्धा भी दिनोंदिन अधिक गहरी होती जा रही है कि अहिंसाके बिना जीवन जीने योग्य नहीं रहेगा। ११७

सिर्फ अहिंसाकी ही कसौटी पर कसनेसे मेरे आचरणका बचाव नहीं किया जा सकता। अहिंसाकी दृष्टिसे शस्त्र-धारण कर मारनेवालोंमें और निःशस्त्र रहकर घायलोंकी सेवा करनेवालोंमें मैं कोई फर्क नहीं देखता। दोनों ही लड़ाईमें शामिल होते हैं और उसीके उद्देश्यको आगे बढ़ाते हैं। दोनों

मुझे कोई ऐसा समाज मिल सकेगा जहां चोरी नहीं होती हो और उसके फलस्वरूप किसी न किसी प्रकारके प्राणियोंका कभी नाश न होता हो। इसलिए इस आशामें कि किसी न किसी दिन इस बुराईसे बचनेका रास्ता मुझे मिल जायेगा मैं नम्रता और प्रायश्चित्तकी भावनाके साथ डरते हुए और कांपते हुए बंदरोंको चोट पहुंचानेके काममें शामिल होता हूं।

इसी तरह मैं तीनों युद्धोंमें शामिल हुआ था। जिस समाजका मैं एक सदस्य हूं उससे अपना संबंध मैं तोड़ नहीं सकता था। तोड़ना मेरा पागलपन होता। उन तीनों अवसरों पर ब्रिटिश सरकारके साथ असहयोग करनेका मेरा कोई विचार नहीं था। आज उस सरकारके संबंधमें मेरी स्थिति बिलकुल ही बदल गई है; इसलिए उसके युद्धोंमें मुझे अपनी खुशीसे शामिल नहीं होना चाहिये और यदि शस्त्र धारण करने या और किसी तरहसे युद्धकार्यमें शामिल होनेके लिए मुझे बाध्य किया जाय तो मुझे जेल जानेका या फांसीके तख्ते पर चढ़नेका खतरा उठानेके लिए भी तैयार रहना चाहिये।

लेकिन इससे प्रश्न अभी भी हल नहीं होता। यदि हिंदुस्तानमें राष्ट्रीय सरकार हो तो उसके किसी युद्धमें शामिल न होते हुए भी ऐसे अवसरकी मैं कल्पना कर सकता हूं जब सैनिक शिक्षण पानेकी इच्छा रखनेवालोंको वह शिक्षण देनेके पक्षमें मत देना मेरा कर्तव्य हो जाय। क्योंकि मैं जानता हूं कि अहिंसामें जिस हद तक मेरा विश्वास है, उस हद तक इस राष्ट्रके सभी लोगोंका नहीं है। किसी भी समाज या आदमीको जबरन् अहिंसक नहीं बनाया जा सकता।

अहिंसा अत्यंत गूढ़ ढंगसे अपना काम करती है। अहिंसाकी दृष्टिसे किसी आदमीके कामोंकी परीक्षा करना कठिन हो जाता है। इसी तरह अनेक मौकों पर उसके काम ऊपरसे हिंसापूर्ण लग सकते हैं जब कि वह अहिंसाके शुद्धसे शुद्ध अर्थमें अहिंसक रहा हो और आगे चलकर यह साबित भी हो। इसलिए उपर्युक्त अवसरों पर किये गये अपने व्यवहारके बारेमें मैं सिर्फ इतना ही दावा कर सकता हूं कि उसके मूलमें अहिंसा ही काम कर रही थी। उसमें किसी क्षुद्र राष्ट्रीय या दूसरे हितका

मेरे अपने जीवनमें मेरे नामसे फैलायी जानेवाली गलतफहमियोंका मैं आदी हो गया हूं। यह तो सारे सार्वजनिक कार्यकर्ताओंके भाग्यमें ही लिखा होता है। उसकी त्वचा तो बड़ी सख्त होनी चाहिये। यदि सभी गलतफहमियोंका उत्तर दिया जाय और उनका स्पष्टीकरण किया जाये तो उससे जीवन भाररूप हो जाये। मैंने तो इसे जीवनका नियम ही बना लिया है कि जब तक उद्देश्यकी रक्षाके लिए आवश्यक न हो तब तक किसी भी गलतफहमीका स्पष्टीकरण न किया जाय। इस नियमके कारण मेरा बहुतसा समय बच गया है और मैं अनेक चिन्ताओंसे मुक्त रहा हूं। १२

मैं अगर किसी सद्गुणका दावा करता हूं तो वह मेरी सत्यनिष्ठा और अहिंसा-परायणता ही है। मैं अपनेमें किसी दैवी शक्ति होनेका दावा नहीं करता। और न मुझे वैसी शक्तिकी जरूरत ही है। मेरा शरीर वैसा ही नश्वर है जैसा कि किसी कमजोरसे कमजोर मानव-बन्धुका है और मेरे हाथसे भी वे सब गलतियां होनेकी संभावना है जो कि उसके हाथसे हो सकती हैं। मेरी सेवाओंकी अनेक मर्यादायें हैं परन्तु उनकी अपूर्णताओंके बावजूद भगवानने अभी तक उन पर अपना आशीर्वाद अपनी कृपा बरसायी है।

अपनी गलतीको स्वीकार करना बड़ी अच्छी बात है। यह एक झाड़ूका काम करता है। जिस प्रकार झाड़ू तमाम गन्दगीको हटाकर जमीनको पहलेसे भी अधिक साफ कर देती है, उसी प्रकार अपनी गलतीका स्वीकार करनेसे हृदय हलका और साफ हो जाता है।

अपनी गलती स्वीकार करके मैं अपनेको अधिक बलवान अनुभव करता हूं। इस तरह पीछे लौटनेसे हमारे कार्यकी उन्नति ही होगी। सीधी राह छोड़नेका आग्रह रखकर मनुष्य अपने अभीष्ट स्थानको कभी नहीं पहुंच सकता। १२१

महात्मा को तो उसके भाग्यके भरोसे ही मुझे छोड़ देना पड़ेगा। असह-योगी होते हुए भी मैं खुशीसे ऐसे किसी कानूनका समर्थन करूंगा जिससे

मैं कहीं भी प्रतिष्ठा पानेकी अभिलाषा नहीं रखता। प्रतिष्ठा राज दरबारोंकी वस्तु है। मैं तो हिंदुओंकी तरह मुसलमानों ईसाइयों पारसियों और यहूदियोंका एक सेवक हूं। और सेवकको प्रेमकी जरूरत होती है न कि प्रतिष्ठाकी। वह प्रेम मुझे तब तक निश्चित रूपसे मिलेगा जब तक मैं जनताका वफादार सेवक बना रहूंगा। १२७

चाहे जिस तरह हो परन्तु यूरोप या अमरिका जानेमें मुझे एक तरहका भय लगता है। यह डर इसलिए नहीं लगता कि मैं अपने लोगोंसे इन महाद्वीपोंके लोगों पर अधिक अविश्वास रखता हूं बल्कि इसलिए लगता है कि मैं अपने आप पर ही अविश्वास करता हूं। मुझे स्वास्थ्य-सुधारके लिए या सैर-सपाटेके लिए पश्चिममें जानेकी इच्छा नहीं है। मुझ सार्वजनिक सभाओंमें भाषण करनेकी अभिलाषा नहीं है। लोग महात्मा या महापुरुषकी तरह मेरे साथ व्यवहार करें, इससे मुझे नफरत होती है। मैं नहीं समझता कि सार्वजनिक भाषणों और सार्वजनिक प्रदर्शनोंका भयंकर श्रम उठानेकी शक्ति फिरसे कभी मेरे इस शरीरमें आयेगी। यदि पर मात्मा मुझे कभी पश्चिममें ले गया तो मैं वहांके जनसमूहके हृदयोंमें प्रवेश करनेके लिए, पश्चिमके नौजवानोंसे शान्त बातें करनेके लिए और अपने ही जैसे विचारवाले शान्तिप्रेमी पुरुषोंसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त करनेके लिए वहां जाऊंगा जो शान्तिके लिए सत्यको छोड़कर दूसरी हर तरहकी कुरबानी देनेको तैयार होंगे।

लेकिन मुझे लगता है कि मेरे पास अभी ऐसा कोई संदेश नहीं है जो मैं स्वयं जाकर पश्चिमको सुनाऊं। मेरा विश्वास है कि मेरा संदेश सारे जगतके लिए है मगर अब तक मुझे यही लगता है कि स्वदेशमें काम करके ही मैं अपना संदेश दुनियाको उत्तम ढंगसे सुना सकता हूं। अगर मैं हिंदुस्तानमें अपने कामकी प्रत्यक्ष सफलता दिखला सका तो मैं समझूंगा कि संदेश देनेका मेरा कार्य पूरा हो चुका। अगर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि हिंदुस्तानको मेरे सन्देशकी कोई जरूरत नहीं है, तो उसमें विश्वास रखते हुए भी मैं उसे सुनानेके लिए और कहीं नहीं जाऊंगा। इसलिए अगर मैं हिंदुस्तानसे बाहर जानेका साहस कभी करूंगा तो

प्रकार मैं ऊंचे बने बैठे हिंदुओंसे नफरत नहीं रखता। मैं हर तरहके प्रेमपूर्ण साधनोंसे ही उनका सुधार करना चाहता हूं। १२९

कुछ दिन हुए, आश्रमका एक अपंग बना हुआ बछड़ा कष्टसे छटपटा रहा था। उसकी दवा की गई, पशु-डॉक्टरकी सलाह ली गई। उन्होंने उसके जीनेकी आशा छोड़ दी थी। हम भी देख सकते थे कि वह कष्टसे छटपटाता था। करवट बदलवानेमें भी उसे कष्ट होता था।

मुझे लगा कि ऐसी स्थितिमें इस बछड़का प्राण लेना ही धर्म है अहिंसा है। मैंने साथियोंके साथ इसकी चर्चा की। उनमें से बहुतोंने मेरी रायका समर्थन किया। फिर सारे आश्रमके लोगोंके साथ मैंने बात की। उनमें से एक भाईने खूब दलीलें देकर बछड़ेको मारनेका सख्त विरोध किया। इस भाईकी दलील यह थी कि जिसमें प्राण देनेकी शक्ति न हो उसे प्राण लेना भी नहीं चाहिए। मुझे यह दलील इस प्रसंग पर अप्रस्तुत लगी। जहां स्वार्थकी भावनासे कोई दूसरेका प्राण-हरण करे वहां ऐसी दलीलको स्थान हो सकता है। अन्तमें दीनभावसे किन्तु दृढ़तापूर्वक पासमें खड़े रहकर मैंने डॉक्टरके द्वारा पिचकारी दिलवाकर बछड़का प्राण-हरण किया। प्राण निकलनेमें दो मिनटसे कम ही समय लगा होगा।

मैं जानता था कि यह काम आजके लोकमतको पसन्द नहीं पड़ सकता। इसमें आजका लोकमत हिंसा ही देखेगा। किन्तु धर्मका पालन करनेवाला लोकमतका विचार नहीं करता। जिसमें मैं धर्म देखूं उसमें दूसरे लोग अधर्म देखें तो भी मुझे सूझे हुए धर्मका ही पालन करना चाहिये ऐसा मैं सीखा हूं और यही ठीक है ऐसा अनुभवने सिद्ध कर दिया है। वास्तवमें मेरा माना हुआ धर्म अधर्म भी हो सकता है। किन्तु कभी कभी अनजानमें भूल किये बिना धर्माधर्मका पता नहीं चलता है। मैं लोक-मतके वश होकर या किसी दूसरे भयके वश होकर जिसे अपना धर्म मानूं उसका आचरण न करूं तो धर्माधर्मका निर्णय मैं कभी नहीं कर सकूंगा। और अन्तमें मैं धर्म-हीन हो जाऊंगा। ऐसे ही कारणोंसे कवि प्रीतमने गाया है कि

किन्तु आत्माको पहुंचता है। आत्मा-रहित शरीरमें सुख-दुःख भोगनेकी शक्ति ही नहीं होती।

मृत्युदंडका जो डर आजकल हमारे समाजमें दिखायी पड़ता है, वह अहिंसा-धर्मके प्रचारमें बहुत बड़ी बाधक वस्तु है। किसीको गाली देना उसका बुरा चाहना उसको ताड़न करना उसे कष्ट पहुंचाना सभी कुछ हिंसा है। जो मनुष्य अपने स्वार्थके लिए दूसरेको कष्ट पहुंचाता है उसके नाक-कान काटता है, उसे भरपेट खानेको नहीं देता है और दूसरी तरहसे उसका अपमान करता है वह मृत्युदंड देनेवालेकी अपेक्षा कहीं अधिक निर्दयता दिखलाता है। जिसने अमृतसरकी गलीमें लोगोंको चींटीके समान पेटके बल चलाया उसने अगर उन्हें मार डाला होता तो वह कम क्रूर गिना जाता। अगर कोई यह मान कि पेटके बल चलनेवाले आज भी जिन्दा हैं इसलिए पेटके बल चलाना मृत्युदंडसे हलकी सजा है, तो मुझे यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं होगा कि वह आदमी अहिंसाको नहीं जानता है। ऐसे अनेक प्रसंग हो सकते हैं जब कि मनुष्यके लिए मृत्युका स्वागत ही करना अधिक उचित होता है। जो इस धर्मको नहीं समझते वे अहिंसाके मूल तत्त्वको नहीं जानते।

हरिनो मारग छे शूरानो नहीं कायरनुं काम जोने।

अर्थात् धर्मका मार्ग शूरोंके लिए है यहां कायरोंका काम नहीं है।

हमें ईश्वरसे रोज यह प्रार्थना करनी चाहिये कि हे नाथ! असत्यका आचरण करके जीनेकी अपेक्षा तू मुझे मौत ही देना।

अहिंसा-धर्मका पालन करनेवाला मनुष्य अपने दुश्मनसे यह प्रार्थना करेगा हे दुश्मन! मेरा अपमान करके मुझसे अधमापूर्ण कर्म करानेके बदले तू मुझे मार ही डाले तो मैं तेरा उपकार मानूंगा।

केवल मरनेसे ही आदमीको या पशुको थोड़े समयके लिए भी बचा लेना अहिंसा धर्म है—यह मान्यता भ्रम है और इससे आज देशमें घोर हिंसा होती हुई मैं देखता हूं। ११

मैं एक गरीब भिखारी हूं। मेरे परिग्रहमें छह चरखे, जेलकी थालियां, बकरीके दूधका एक बरतन, छह हाथकते कच्छ और टावेल तथा मेरी प्रसिद्धि है — जिसकी बहुत कीमत नहीं हो सकती।[1] १९२

जब मैंने अपने-आपको राजनीतिक जीवनकी भवरोंमें खिंचा हुआ पाया तब मैंने अपने-आपसे पूछा कि मुझे अनैतिकताओं, असत्यसे और जिसे राजनीतिक लाभ कहा जाता है उससे अछूता रहनेके लिए क्या करना जरूरी है। मैं निश्चित रूपसे इस नतीजे पर पहुंचा कि यदि मुझे उन लोगोंकी सेवा करनी है, जिनके बीच मेरा जीवन बीतनेवाला है और जिनकी कठिनाइयोंको मैं दिन-प्रतिदिन देखता हूं तो मुझे सम्पूर्ण सम्पत्ति तथा सारे परिग्रहका त्याग कर देना चाहिये।

मैं सचाईके साथ आपसे यह नहीं कह सकता कि ज्यों ही मैं इस निश्चय पर पहुंचा त्यों ही मैंने एकदम प्रत्येक चीजका परित्याग कर दिया। मुझे आपके सामने स्वीकार करना चाहिये कि पहले-पहल इस त्यागकी प्रगति धीमी रही। और आज जब मैं संघर्षके उन दिनोंको याद करता हूं तो मैं देखता हूं कि आरम्भमें यह त्याग दुःखद भी था। लेकिन जैसे जैसे दिन बीतते गये, जैसे जैसे मैं यह महसूस करता गया कि कई अन्य चीजोंका भी, जिन्हें मैं तब तक अपनी मानता था मुझे सम्पूर्ण त्याग करना चाहिये, और एक समय आया जब उन वस्तुओंका त्याग मेरे लिए निश्चित रूपसे हर्षका विषय हो गया। और, तब एकके बाद एक वे सारी वस्तुएं बहुत तेजीसे मुझसे छूटती गईं। और आपको अपने वे अनुभव सुनाते हुए मैं कह सकता हूं कि उनके छूटनेसे मेरे कन्धोंसे एक भारी बोझ उतर गया और मुझे लगा कि अब मैं आरामके साथ चल सकता हूं तथा अपने बन्धुओंकी सेवाका कार्य भी बड़ी निश्चिंतता और अधिक प्रसन्नताके साथ कर सकता हूं। फिर तो किसी भी चीजका परिग्रह मेरे लिए कष्टदायक और भाररूप बन गया।

---

[1] यह बात ११ सितम्बर, १९३१ को मारसेलीज पर चुंगी-अधिकारीसे कही गई थी।

बताती देते हैं कि जब आप अपने पासकी हरएक चीजका त्याग कर देते हैं, तब दुनियाकी सारी धन-सम्पत्ति आपकी हो जाती है।'[1] १३३

मैंने अपनी युवावस्थासे ही धर्मग्रंथोंका मूल्य उनकी नैतिक शिक्षाके आधार पर आंकनेकी कला सीख ली है। उनमें वर्णित चमत्कारोंमें मेरी कोई दिलचस्पी नहीं है। ईसाके विषयमें जिन चमत्कारोंकी बातें कही गई हैं उनके कारण मैं बाइबलके ऐसे किसी उपदेशको नहीं मान सकता जो सार्वभौम नीतिमत्ताके अनुरूप न हो। किसी न किसी तरह मेरे लिए, और मैं समझता हूं कि मेरी ही तरह लाखों लोगोंके लिए भी धर्म-शिक्षकोंके वचन एक जीती-जागती शक्ति रखते हैं। यह शक्ति साधारण मनुष्यों द्वारा कहे हुए वैसे ही वचनोंमें नहीं होती।

ईसा मेरी दृष्टिमें दूसरे धर्म-शिक्षकोंके समान संसारके एक महान धर्म-शिक्षक हैं। अपने समयके लोगोंके लिए वे निश्चय ही एकमात्र ईश्वर-प्रसूत पुत्र थे। परन्तु उन लोगोंका जो विश्वास था वही मेरा भी हो यह जरूरी नहीं। मेरे जीवन पर ईसाका इसलिए कम प्रभाव नहीं है कि मैं उन्हें अनेक ईश्वर-प्रसूत पुत्रोंमें से एक मानता हूं। प्रसूत विशेषणका मेरे लिए उसके शब्दार्थ आध्यात्मिक जन्मकी अपेक्षा कहीं गहरा और सम्भवतः विशाल अर्थ है। अपने समयमें ईसा ईश्वरके सबसे अधिक निकट थे।

जो लोग उनकी शिक्षाओंको स्वीकार करते थे उनके पापोंके निवारणके लिए ईसाने अपनेको निर्दोष बनाकर उनके सामने अपना उदाहरण रखा था। लेकिन ऐसे लोगोंके लिए इस उदाहरणका कोई मूल्य नहीं जिन्होंने अपने जीवनको उन्नत करनेका कभी कष्ट नहीं किया। किन्तु जैसे सोनेको तपानेसे उसका मूल दोष दूर हो जाता है उसी प्रकार इस दिशामें नये सिरेसे कोशिश की जाय तो मूल दोष भी मिट सकता है।

---

१ ता० २७–९–१९११ को लन्दनके गिल्ड हॉलमें दिये गये एक भाषणसे।

जब उसे एक रोमन सम्राट्का सहारा मिल गया तब वह साम्राज्यवादी धर्म बन गया जैसा कि वह आज तक है। अलबत्ता उसमें बहुत अच्छे लेकिन विरले अपवाद हैं। मगर उसका सामान्य झुकाव तो मैंने जैसा बताया वैसा ही है। ११५

मेरा मानस संकुचित है। मैंने बहुत साहित्य नहीं पढ़ा है। मैंने दुनियाका बहुतसा भाग भी नहीं देखा है। मैंने जीवनमें अमुक बातों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है और उनसे बाहरकी बातोंमें मेरी कोई दिलचस्पी नहीं है। ११६

मुझे इसमें जरा भी शंका नहीं कि मैंने जो कुछ सिद्ध किया है उसे कोई भी पुरुष या स्त्री सिद्ध कर सकती है, अगर वह मेरे जितना ही प्रयत्न करे और मेरे जितनी ही आशा और श्रद्धाका विकास अपने भीतर करे। ११७

मेरा खयाल है कि मैं अहिंसक तरीकेसे जीने और मरनेकी कला जानता हूं। लेकिन अभी एक पूर्ण कार्य द्वारा मुझे इसे प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिखाना है। ११८

गांधीवाद नामकी कोई वस्तु है ही नहीं और न मैं अपने पीछे कोई सम्प्रदाय छोड़ जाना चाहता हूं। मेरा यह दावा भी नहीं है कि मैंने किसी नये सिद्धान्त या शिक्षाका आविष्कार किया है। मैंने तो जो शाश्वत सत्य हैं उनको अपने नित्यके जीवन और प्रतिदिनके प्रश्नों पर अपने ढंगसे सिर्फ लगानेका ही प्रयास किया है।

अतएव मनुस्मृतिके जैसी कोई स्मृति (संहिता) मेरे छोड़ जानेका सवाल ही नहीं है। उस महान विधि-निर्माता—स्मृतिकार—के और मेरे बीच कोई तुलना हो ही नहीं सकती। जो मत मैंने कायम किये हैं और जिन निर्णयों पर मैं पहुंचा हूं वे भी अन्तिम नहीं हैं। हो सकता है, मैं कल ही उन्हें बदल दूं। मुझे दुनियाको कोई नई चीज नहीं सिखानी है। सत्य और अहिंसा अनादि कालसे चले आये हैं। मैंने तो यथाशक्ति

थोरोके रूपमें आपने ही मुझे एक ऐसा गुरु दिया जिसके 'सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी कर्तव्य' (ड्यूटी ऑफ सिविल डिसओबीडियन्स) नामक निबन्धके द्वारा मुझे अपने उस कार्यका वैज्ञानिक समर्थन प्राप्त हुआ था जो मैं उन दिनों दक्षिण अफ्रीकामें कर रहा था। ग्रेट ब्रिटेनने मुझे रस्किन जैसा गुरु दिया जिसके 'अण्टु दिस लास्ट' (सर्वोदय) ग्रन्थने मेरे विचारोंमें इतना परिवर्तन कर दिया कि मैं एक ही रातमें बिलकुल बदल गया। मैंने वकालत छोड़ी, शहरमें रहना छोड़ा और मैं एक देहाती बनकर डरबनसे दूर एक ऐसे फार्म पर रहने लगा जो नजदीकके रेलवे स्टेशनसे भी तीन मील दूर था। और रूसने टॉल्स्टॉयके रूपमें मुझे वह गुरु दिया जिससे मुझे अपनी अहिंसाका तर्कशुद्ध आधार प्राप्त हुआ। उन्होंने दक्षिण अफ्रीकाके मेरे उस आन्दोलनको जो उस वक्त शुरू ही हुआ था और जिसकी अद्भुत शक्तियोंको उस समय तक मैं जान भी नहीं पाया था अपना आशीर्वाद दिया था। मेरे नाम लिखे अपने एक पत्रमें उन्होंने यह भविष्य-वाणी की थी कि मैं एक ऐसे आन्दोलनका नेतृत्व कर रहा हूँ जिसके द्वारा निश्चय ही दुनियाके पददलित लोगोंको आशाका एक सन्देश प्राप्त होगा। इसलिए आप यह समझ सकेंगे कि इस समय जो काम मैंने उठाया है उसमें ग्रेट ब्रिटेन और पश्चिमके देशोंके खिलाफ दुश्मनीका कोई भाव नहीं है। 'अण्टु दिस लास्ट' में दिये गये सर्वोदयके सन्देशको अच्छी तरह पचाने और आत्मसात् करनेके बाद मैं उस फासिज्म या नाजीवादका समर्थनकर्ता नहीं बन सकता जिसका ध्येय व्यक्तिका और उसकी स्वतन्त्रताका दमन करना है। १४

इस जीवनमें मेरी अपनी कोई गुप्त बात नहीं है। मैंने अपनी कमजोरियोंको स्वीकार किया है। अगर मुझे विषय भोगकी इच्छा हुई तो मैं हिम्मतके साथ उसे कबूल कर लूँगा। जब अपनी पत्नीके साथ समागम करनेमें भी मुझे नफरत मालूम होने लगी और जब मैंने अपनी काफी परीक्षा कर ली उसके बाद ही सन् १९०६ में मैंने ब्रह्मचर्यका व्रत लिया। और यह व्रत मैंने अपने देशकी सेवा अधिक निष्ठा और लगनसे करनेके

आश्रममें मैं चारों ओर स्त्रियोंसे घिरा हुआ सोता हूँ क्योंकि वे हर तरहसे मेरे साथ अपनेको सुरक्षित अनुभव करती हैं। यह याद रखना चाहिये कि सेगाव आश्रममें किसी तरहका एकान्त नहीं है।

अगर मैं विषय-भोगकी दृष्टिसे स्त्रियोंके प्रति आकर्षित हुआ तो इस उमरमें भी मैं बहुविवाहकी हिमायत करनेकी हिम्मत रखता हूँ। मैं स्वतंत्र प्रेममें विश्वास नहीं करता — भले वह गुप्त हो या खुला। स्वतंत्र खुले प्रेमको मैंने कुत्तेका प्रेम माना है। गुप्त प्रेममें कायरता भी भरी हुई है। १४१

"आप अपने लड़केको ही अपने साथ नहीं रख सके और वह स्वेच्छाचारी बना हुआ है। तो क्या यह ज्यादा अच्छा न होगा कि आप अपने घरको ही सुधारें और सन्तोष मानें?"

यह एक ताना माना जा सकता है। लेकिन मैं इसे ताना नहीं मानता। क्योंकि यह सवाल विरोधीके दिलमें उठे उससे पहले मेरे ही दिलमें उठ चुका था। मैं पूर्वजन्म और पुनर्जन्मको मानता हूँ। हमारे सारे सम्बन्ध पूर्वके संस्कारोंका फल होते हैं। ईश्वरका कानून अगम्य है। वह अनन्त खोजका विषय है। उसका कोई पार नहीं पा सकता।

अपने पुत्रके बारेमें मैं जो समझता हूँ वह इस प्रकार है मेरे घरमें दुष्पुत्र जन्म ले तो उसे मैं अपने पापका ही फल मानूँगा। मेरे पहले पुत्रका जन्म केवल मेरी मूर्च्छित (मोहान्ध) दशाका फल है। फिर, वह बड़ा भी उस जमानेमें हुआ था जब कि मैं स्वयं बन रहा था। उस समय मैं अपने-आपको कम पहचानता था। आज भी मैं अपने आपको पूरी तरहसे पहचाननेका दावा नहीं करता मगर मैं मानता हूँ कि उस समयकी अपेक्षा आज मैं अपनेको अधिक पहचानता हूँ। वह पुत्र वर्षों अरसे तक मुझसे अलग रहा। उसे गढ़नेका काम पूरी तरह मेरे हाथमें नहीं था। इसलिए उसका जीवन इतोभ्रष्ट ततोभ्रष्ट जैसा हो गया। मेरे खिलाफ उसकी यह शिकायत रही है कि मैंने भूलसे जिसे परमार्थ माना है, उसमें उसकी और उसके भाइयोंकी आहुति दे

हो। मनुष्यकी कमजोरीका अनुकरण नहीं बल्कि उसके गुणोंका अनुकरण करना ही उसकी सच्ची पूजा है। जीवित मनुष्यकी मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करके हम हिन्दू धर्मको पतनकी आखिरी सीढ़ी पर पहुंचा देते हैं। मृत्युके पहले किसी मनुष्यको पूरी तरह अच्छा नहीं कहा जा सकता और मृत्युके बाद भी जिसे उस मनुष्यमें आरोपित गुणोंमें विश्वास होगा वही उसे अच्छा कहेगा। सच तो यह है कि केवल एक ईश्वर ही मनुष्यके हृदयको जानता है। इसलिए किसी जीवित या मृत मनुष्यको पूजनेके बदले जो पूर्ण है और सत्य-स्वरूप है उस ईश्वरको पूजने और उसीका भजन करनेमें सुरक्षितता है। यहां यह प्रश्न अवश्य पैदा होता है कि चित्र रखना भी पूजाका ही एक प्रकार है या नहीं? इसके विषयमें मैं पहले लिख चुका हूं। चित्र रखनेकी प्रथा भी बर्बादी तो है, परन्तु उसे निर्दोष समझकर मैं सहन करता आया हूं। यदि इसके कारण मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीतिसे मूर्तिपूजाको तनिक भी बढ़ावा देता होऊं तो उसे भी हास्यास्पद और हानिकारक समझकर छोड़ दूंगा। मन्दिरके मालिक मूर्तिको हटाकर उस मकानमें खादीका केन्द्र खोलें तो वह सब तरहसे अच्छा होगा और अभी जो पाप वे कर रहे हैं उससे वे बच जायेंगे। उस मकानमें गरीब लोग मजदूरीके लिए रुई धुनें और कातें। दूसरे लोग यज्ञके लिए धुनें और कातें। सब खादी पहनने लगें। यही गीताका कर्मयोग है। जीवनमें इसका आचरण करना ही गीताकी और मेरी सच्ची पूजा मानी जायगी। १४१

जिस प्रकार मेरी सफलतायें और मेरी प्रतिभा ईश्वरदत्त वरदान हैं उसी प्रकार मेरी अपूर्णतायें और असफलतायें भी ईश्वरदत्त वरदान हैं। और मैं इन दोनोंको ईश्वरके चरणोंमें अर्पण कर देता हूं। उसने मेरे जैसे अपूर्ण मानवको इतने महान प्रयोगके लिए क्यों चुना होगा? मुझे लगता है कि उसने जान-बूझकर ऐसा किया होगा। उसे करोड़ों गरीब मूक और अज्ञान लोगोंकी सेवा — सहायता — करनी थी। किसी सम्पूर्ण मानवको पाकर शायद उन्हें निराशा होती। जब उन्होंने देखा कि उन्हींकी जैसी कमजोरियों और खामियोंवाला एक मानव अहिंसाकी दिशामें आगे बढ़ रहा

काम करते हैं। विचारोंमें वह शक्ति आ जाती है। तब उसके बारेमें यह कहा जा सकता है कि बाहरसे दिखाई देनेवाले उसके अकर्ममें ही उसका कर्म समाया हुआ है। मैं उसी दिशामें प्रयत्न कर रहा हूं। १४९

दुनियाके अनेक देशोंसे मुझसे जो सवाल पूछा गया है आज मैं खास तौर पर उसीका जवाब देना पसन्द करूंगा। वह सवाल इस तरह है आपके देशमें राजनीतिक पार्टियां अथवा राजनीतिक ध्येय आगे बढ़ानेके लिए हिंसाका दिनोदिन ज्यादा उपयोग करने लगी हैं। इसकी वजह आप बतायेंगे? ब्रिटिश हुकूमतको खतम करनेके लिए पिछले ३० सालसे अहिंसाका जो तरीका अपनाया गया क्या उसीका तो यह नतीजा नहीं है? क्या अब भी दुनियाके लिए आपका अहिंसाका सन्देश काम आ सकता है? मैंने यहां सवाल पूछनेवालोंकी भावनाओंका अपने शब्दोंमें सार दिया है।

इसके जवाबमें मुझे अहिंसाकी नहीं बल्कि अपना दिवालियापन कबूल करना चाहिये। इसके पहले मैंने साफ कह दिया है कि पिछले तीस बरसोंमें जिस अहिंसाका उपयोग किया गया वह कमजोरोंकी अहिंसा थी। मेरा यह जवाब ठीक या काफी है कि नहीं यह तो दूसरोंको बताना होगा। इसके बाद दूसरी एक बात भी स्वीकार करनी होगी। वह यह कि आजकी बदली हुई परिस्थितियोंमें कमजोरोंकी अहिंसा कुछ काम नहीं दे सकती। हिन्दुस्तानको बहादुरोंकी अहिंसाका अनुभव नहीं है। यदि मैं बार बार यह कहता रहूं कि बहादुरोंकी अहिंसा दुनियामें सबसे बड़ी शक्ति है तो उससे मेरा कोई मतलब हल नहीं होता। इस सत्यका निरन्तर और विशाल पैमाने पर प्रत्यक्ष प्रयोग कर दिखानेकी जरूरत है। मुझमें जितनी शक्ति है उसका पूरा पूरा उपयोग करके मैं यही कर दिखानेकी कोशिश कर रहा हूं। यदि मेरी उत्तम योग्यता बहुत थोड़ी हो तो उससे क्या? कहीं मैं शेखचिल्लीके रास्ते तो नहीं जा रहा हूं? मैं ऐसी निरर्थक खोजमें अपने पीछे चलने या अपना साथ देनेके लिए दूसरोंसे क्यों कहूं? ये सब सवाल पूछने लायक हैं।

इस सवालका मेरा जवाब बिलकुल सीधा और सरल है। मैं किसीसे अपने पीछे चलने या उसका साथ देनेके लिए नहीं कहूंगा। हरएक स्त्री और पुरुषको अपने अन्तरकी आवाजको मानना चाहिये। अगर कोई स्त्री या पुरुष अपने अन्तरकी आवाज न सुन सके तो उसे अपनी योग्यताके अनुसार जितना बन सके उतना कर गुजरना चाहिये। लेकिन कोई स्त्री या पुरुष भेड़की तरह दूसरेके पीछे पीछे न चले।

एक और सवाल भी पूछा गया है और वह अक्सर पूछा जाता है: यदि आपको विश्वास है कि हिन्दुस्तान गलत रास्ते जा रहा है, तो आप गलत काम करनेवालोंसे अपना सम्बन्ध क्यों रखते हैं? आप अकेले ही अपने सही रास्ते क्यों नहीं चलते? और आप यह श्रद्धा क्यों नहीं रखते कि आपकी बात सच हुई तो आपको छोड़ देनेवाले आपके मित्र और अनुयायी आपको फिर खोज लेंगे? यह बिलकुल उचित सवाल है। मैं इसके खिलाफ कोई दलील देनेकी कोशिश नहीं करूंगा। मैं सिर्फ यही कहूंगा कि मेरी श्रद्धा आज भी पहलेकी जैसी ही दृढ़ है। हो सकता है कि मेरा काम करनेका तरीका गलत हो। आजकी अटपटी स्थितिमें तो पहलेकी परखी हुई और पुरानी मिसालें ही दिशा बतानेके लिए हमारे सामने हैं। लेकिन एक बातका ध्यान रखना होगा। किसीको जड़ मशीनकी तरह काम नहीं करना चाहिये। इसलिए मुझे सलाह देनेवाले सब लोगोंसे मैं यही कहूंगा कि मेरे साथ धीरजसे काम लीजिये और मेरी इस श्रद्धामें शामिल भी हो जाइये कि आजकी दुःखी दुनियाके उद्धारके लिए तलवारकी धार जैसे अहिंसाके दुर्गम मार्गके सिवा दूसरी कोई आशा नहीं है। हो सकता है कि इस सत्यको सिद्ध करनेमें मेरे जैसे करोड़ों आदमी असफल रहें। लेकिन यह असफलता अहिंसाके सनातन नियमकी नहीं बल्कि इन करोड़ों लोगोंकी होगी। १५

मेरी इच्छाके विरुद्ध देशका बंटवारा हुआ है। उससे मुझे बड़ा आघात लगा है। लेकिन जिस तरीकेसे देशका बंटवारा हुआ उससे मुझे अधिक आघात लगा है। मैंने आजकी आगको बुझानेके प्रयत्नमें करने या मरनेकी प्रतिज्ञा की है। जिस प्रकार मैं अपने देशवासियोंसे प्रेम

करता हूं उसी प्रकार मैं सारी मानव-जातिसे प्रेम करता हूं। क्योंकि भगवान हर मानवके हृदयमें बसता है और मैं मानव-जातिकी सेवाके जरिये ही जीवनका उच्चतम ध्येय — मोक्ष — सिद्ध करना चाहता हूं। यह सच है कि हमने जिस अहिंसाका आचरण किया वह कमजोरोंकी अहिंसा थी — यानी वह अहिंसा थी ही नहीं। लेकिन मैं यह मानता हूं कि जो अहिंसा मैंने देशवासियोंके सामने रखी वह कायरोंकी अहिंसा नहीं थी। और, अहिंसाका शस्त्र मैंने उनके सामने इसलिए नहीं रखा कि वे कमजोर थे निहत्थे थे या फौजी तालीम पाये हुए नहीं थे बल्कि इसलिए रखा कि इतिहासके मेरे अध्ययनने मुझे यह सिखाया है कि उदात्तसे उदात्त ध्येयके लिए उपयोगमें लायी गयी घृणा और हिंसा केवल घृणा और हिंसाको ही जन्म देती है और शान्तिकी स्थापना करनेके बजाय उसे खतम कर देती है। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों और साधु सन्तोंकी परम्पराके फलस्वरूप हिन्दुस्तानके पास अगर ऐसी कोई विरासत है जिसमें वह सारे संसारको साझेदार बना सकता है तो वह क्षमा और श्रद्धाका यह सन्देश है — जो उसकी गौरवपूर्ण सम्पत्ति है। मेरी यह श्रद्धा है कि संसारने अणुबमकी खोज करके अपने लिए जिस सर्वनाशके भयको न्योता है उसके सामने हिन्दुस्तान भविष्यमें अपनी इसी गौरवपूर्ण विरासतको रखनेवाला है। सत्य और प्रेमका अस्त्र तो अमोघ है लेकिन उसके पुजारी हम लोगोंमें कोई ऐसा दोष है जिसने हमें आजके आत्मघाती संघर्षमें सिर तक डूबा दिया है। इसलिए मैं आत्म परीक्षणका प्रयत्न कर रहा हूं। १५१

मैं अपने जीवनमें अनेक अग्नि-परीक्षाओंमें से पार हुआ हूं। लेकिन यह परीक्षा शायद सबसे कठिन सिद्ध होनेवाली है। मुझे यह प्रिय है। यह अग्नि-परीक्षा जितनी अधिक कठिन होती जाती है उतना ही अधिक निकट अनुसंधान मैं ईश्वरके साथ अनुभव करता हूं और उतनी ही अधिक गहरी श्रद्धा उसकी असीम कृपामें मेरी बढ़ती जाती है। जब तक यह श्रद्धा मुझमें बनी रहेगी तब तक मैं जानता हूं कि मेरा भला ही होगा। १५२

मुझ जैसे एक दुर्बल अशक्त और दुःखी प्राणीके लिए हरएक अन्यायको दूर करना या अपनी आंखोंके सामने होनेवाले सारे अन्यायोंके दोषसे अपनेको मुक्त समझना मुमकिन नहीं है। मेरे भीतरकी आत्मा मुझे एक तरफ खींचती है और देह दूसरी तरफ खींचती है। इन दोनों शक्तियोंके कार्यसे मनुष्य मुक्त हो सकता है लेकिन वह मुक्ति धीरे धीरे और कष्टप्रद प्रयत्नों द्वारा ही प्राप्त होती है। किसी यंत्रकी तरह अपने कर्मको बन्द करके मैं उस मुक्तिको नहीं पा सकता वह तो अनासक्त भावसे ज्ञानपूर्वक कर्म करनेसे ही प्राप्त होगी। इस युद्धको देहके निरंतर दमनका रूप लेना चाहिये जिससे आत्मा पूर्ण रूपसे स्वतंत्र हो जाये। १५५

मुझे तो प्रत्येक धर्मके धर्मगुरु जो कुछ कह गये हैं उनके वचनामृत पर विश्वास है श्रद्धा है। इतना ही नहीं मैं ईश्वरसे सदा प्रार्थना करता हूं कि जो लोग मुझ पर आरोप लगाते हैं उन पर मुझे कभी गुस्सा न आये वे मुझे गोलियोंसे भूननेके लिए तैयार हो जाय तो भी मैं हंसते हंसते भगवानका स्मरण करते हुए ही मरूं। यदि मुझे मारनेवालेको मैं अन्तिम समयमें गाली दूं या उस पर क्रोध करूं तो मुझे आप लोग धिक्कारना और कहना कि वह तो दम्भी महात्मा था। १५६

क्या मुझमें बहादुरोंकी वह अहिंसा है? केवल मेरी मृत्यु ही इसे बतायेगी। अगर कोई मेरी हत्या करे और मैं मुहसे हत्यारेके लिए प्रार्थना करते हुए तथा ईश्वरका नाम जपते हुए और हृदय-मंदिरमें उसकी जीती-जागती उपस्थितिका भान रखते हुए मरूं तो ही कहा जायगा कि मुझमें बहादुरोंकी अहिंसा थी। १५७

मैं सारी शक्तियोंके क्षीण हो जानसे अपंग बनकर — एक हारे हुए आदमीके रूपमें नहीं मरना चाहता। किसी हत्यारेकी गोली भले मेरे जीवनका अंत कर दे। मैं उसका स्वागत करूंगा। लेकिन सबसे ज्यादा तो मैं अंतिम श्वास तक अपना कर्तव्य करते हुए ही मरना पसंद करूंगा। १५८

स्वर्गका अन्तिम स्थान है, तो मेरे जानेसे पैदा हुई रिक्तता बड़ी हद तक पूरी हो जायगी। १६३

मैं फिरसे जन्म लेना नहीं चाहता। लेकिन अगर मेरा दूसरा जन्म हो तो मैं अछूतके रूपमें पैदा होना चाहूंगा ताकि मैं उनके दुःख-दर्दोंमें उनकी मुसीबतोंमें और उनके अपमानोंमें हिस्सा ले सकूं और मैं अपने आपको तथा अछूतोंको उस दयनीय स्थितिसे मुक्त करनेका प्रयत्न कर सकूं। १६४

२
धर्म और सत्य

धर्मसे मेरा अभिप्राय औपचारिक धर्म या रूढ़िगत धर्मसे नहीं परन्तु उस धर्मसे है जो सब धर्मोंकी बुनियाद है और जो हमें अपने सर्जनहारका साक्षात्कार कराता है। १

मैं समझा दूं कि धर्मसे मेरा क्या मतलब है। मेरा मतलब हिन्दू धर्मसे नहीं है जिसे मैं बेशक और सब धर्मोंसे अधिक पसन्द करता हूं। मेरा मतलब उस मूल धर्मसे है जो हिन्दू धर्मको लांघ गया है, जो मनुष्यके स्वभाव तकका परिवर्तन कर देता है, जो भीतरी सत्यके साथ हमारा अटूट सम्बन्ध जोड़ता है और जो हमें निरंतर शुद्ध और अधिक पवित्र करता रहता है। यह मानव-स्वभावका शाश्वत तत्त्व है जो अपनी सम्पूर्ण अभिव्यक्तिके लिए कोई भी कीमत चुकानेको तैयार रहता है और आत्माको उस समय तक बिलकुल बेचैन रखता है जब तक उसे अपने स्वरूपका पता नहीं लग जाता, सर्जनहारका ज्ञान नहीं हो जाता तथा स्रष्टाके और अपने बीचका सच्चा सम्बन्ध समझमें नहीं आ जाता। २

अन्तर्यामीको मैंने देखा नहीं है, जाना नहीं है। संसारकी ईश्वर-विषयक श्रद्धाको मैंने अपनी श्रद्धा बना लिया है। यह श्रद्धा किसी प्रकार

सिद्ध नहीं की जा सकती। इसलिए श्रद्धाके रूपमें पहचानना छोड़कर मैं उसे अनुभवके रूपमें पहचानता हूं। फिर भी इस प्रकार अनुभवके रूपमें उसका परिचय देना भी सत्य पर एक प्रकारका प्रहार करना है। इसलिए कदाचित् यह कहना [illegible] अधिक उचित होगा कि शुद्ध रूपमें उसका परिचय करानेवाला कोई शब्द मेरे पास नहीं है। ३

इस विश्वमें ऐसी एक शक्ति है, जिसका निश्चित और स्पष्ट शब्दोंमें वर्णन नहीं किया जा सकता और जो विश्वकी हर वस्तुमें व्याप्त है। मैं उसका अनुभव करता हूं यद्यपि वह मुझे दिखाई नहीं देती। यही वह अदृश्य शक्ति है जो अपना अनुभव कराती है और फिर भी सारे प्रमाणोंसे परे है, क्योंकि वह ऐसे समस्त पदार्थोंसे सर्वथा भिन्न है, जिन्हें मैं अपनी इन्द्रियों द्वारा देखता और अनुभव करता हूं। वह इन्द्रियातीत है, इन्द्रियोंकी पहुंचके बाहर है। परन्तु एक सीमा तक ईश्वरके अस्तित्वको तर्क द्वारा सिद्ध किया जा सकता है। ४

मैं अस्पष्ट रूपमें यह जरूर देख और समझ सकता हूं कि यद्यपि मेरे आसपास प्रत्येक वस्तु निरन्तर बदलती, निरन्तर नष्ट होती रहती है, फिर भी इस परिवर्तनके पीछे ऐसी एक सजीव चेतन शक्ति है जो कभी नहीं बदलती, जो सबको एकसाथ बांधे रखती है, जो सर्जन करती है, नाश करती है और पुनः नवसर्जन करती है। यह घट-घटमें बसी हुई चेतन शक्ति या तत्त्व ही ईश्वर है। और ऐसी कोई वस्तु, जिसे मैं केवल इन्द्रियोंसे देखता हूं और अनुभव करता हूं, शाश्वत नहीं हो सकती या नहीं होगी। इसलिए एकमात्र ईश्वरकी ही सत्ता शाश्वत है। ५

और यह शक्ति कल्याणकारिणी है या अकल्याण करनेवाली? मैं तो इसे शुद्ध कल्याणकारिणी शक्तिके रूपमें ही देखता हूं। क्योंकि मैं देख सकता हूं कि मृत्युके बीच जीवनका अस्तित्व बना रहता है, असत्यके बीच सत्य टिका रहता है और अन्धकारके बीच प्रकाश जीवित रहता है। इसलिए मैं इस निर्णय पर पहुंचता हूं कि ईश्वर जीवन है, सत्य है, प्रकाश है। वह प्रेम है, वह सर्वोच्च शिव है—शुभ है। ६

मैं यह भी जानता हूं कि अगर मैं प्राणोंकी बाजी लगाकर भी बुराईके खिलाफ युद्ध नहीं करूंगा तो मुझे ईश्वरका ज्ञान कभी नहीं होगा। मेरा यह विश्वास मेरे अपने ही नम्र और सीमित अनुभवसे दृढ़ हुआ है। मैं जितना शुद्ध बननेकी कोशिश करता हूं उतनी ही ईश्वरसे निकटता अनुभव करता हूं। जब मेरी श्रद्धा आजकी तरह नाममात्रकी न रहकर हिमालयकी भांति अचल और उसके शिखर पर चमकनेवाली बर्फकी तरह निर्मल और तेजस्वी हो जायगी तब मैं उससे कितनी अधिक निकटता अनुभव करूंगा? ७

ईश्वरमें इस विश्वासकी बुनियाद श्रद्धा पर रखनी होगी जो बुद्धिसे परे है। वास्तवमें कथित साक्षात्कारकी जड़में भी श्रद्धाका कुछ तत्त्व तो होता ही है क्योंकि उसके बिना उसकी सत्यता सिद्ध नहीं हो सकती। वस्तुत ऐसा ही होना चाहिये। अपने शरीरकी मर्यादाओंको कौन लांघ सकता है? मेरा मत है कि इस शरीरधारी जीवनमें संपूर्ण साक्षात्कार असंभव है। इसकी जरूरत भी नहीं। मानव-प्राणी अधिकसे अधिक जितनी आध्यात्मिक उच्चता प्राप्त कर सकते हैं उसके लिए जरूरत सिर्फ अटल और सजीव श्रद्धाकी ही है। ईश्वर हमारे इस पार्थिव शरीरके बाहर नहीं है। इसलिए बाहरी प्रमाण कुछ हो भी तो वह बहुत कामका नहीं है। इन्द्रियों द्वारा ईश्वरको पहचाननेमें हम हमेशा असफल रहेंगे क्योंकि वह इन्द्रियोंसे परे है। हां हम इन्द्रियोंसे अपनेको विरत कर लें तो उसका अनुभव कर सकते हैं। दैवी संगीत हमारे भीतर सतत चलता रहता है परन्तु इन्द्रियोंके कोलाहलमें वह कोमल संगीत दब जाता है क्योंकि वह इन्द्रियोंसे प्रतीत होनेवाली वस्तुसे भिन्न और अनन्त गुना श्रेष्ठ है। ८

परन्तु जो ईश्वर केवल बुद्धिको संतोष देता है वह ईश्वर नहीं है। ईश्वर तभी ईश्वर कहा जायगा जब वह हृदय पर शासन करे और उसका रूपान्तर कर दे। उसे अपने भक्तके छोटेसे छोटे काममें प्रगट होना चाहिये। यह तभी हो सकता है जब पांचों इन्द्रियोंसे होनेवाले ज्ञानसे भी अधिक वास्तविक रूपमें उसका निश्चित साक्षात्कार सिद्ध किया जाय। इन्द्रियोंसे होनेवाला ज्ञान हमें कितना ही वास्तविक क्यों न

दिखाई दे वह झूठा और भ्रमपूर्ण हो सकता है और अक्सर होता है। लेकिन अतीन्द्रिय ज्ञान अचूक होता है। इसका प्रमाण बाहरी प्रमाणोंसे नहीं मिलता। परन्तु जिन लोगोंने ईश्वरके वास्तविक अस्तित्वको अपने भीतर अनुभव किया है उनके आचरण और चरित्रमें होनेवाले परिवर्तनसे मिलता है। ऐसा प्रमाण सब देशोंमें होनेवाले पैगम्बरों और ऋषियोंकी अटूट परम्पराके अनुभवोंमें पाया जाता है। इस प्रमाणको अस्वीकार करना अपने आपको अस्वीकार करनेके बराबर है। १

मेरी दृष्टिमें ईश्वर सत्य है और प्रेम है, ईश्वर नीति है और सदाचार है, ईश्वर निर्भयता है। ईश्वर प्रकाश और जीवनका स्रोत है और फिर भी वह इन सबसे ऊपर और परे है। ईश्वर विवेक-बुद्धि है। वह नास्तिककी नास्तिकता भी है। ... वह वाणी और बुद्धिसे परे है।
उन लोगोंके लिए वह साकाररूप ईश्वर है जो साकाररूपमें उसकी उपस्थितिकी आवश्यकता महसूस करते हैं। ऐसे लोगोंके लिए वह साकार ईश्वर है जो उसके स्पर्शकी आवश्यकता अनुभव करते हैं। वह शुद्धतम सारतत्त्व है। वह केवल उन्हीं लोगोंके लिए है जो श्रद्धालु हैं। वह सब मनुष्योंके लिए सब-कुछ है। वह हमारे भीतर है और फिर भी हमसे ऊपर और हमसे परे है। ... वह दीर्घकालसे बाट देखकर हमारे दोषोंको सहन करता आया है। वह धैर्यशाली है परन्तु वह भयंकर भी है। ... वह अज्ञानके लिए कभी क्षमा नहीं करता। और इस सबके बावजूद वह सदा क्षमा करनेवाला है, क्योंकि वह हमें सदा पश्चात्ताप करनेका अवसर देता है। वह संसारका सबसे बड़ा प्रजातन्त्रवादी है क्योंकि वह हमें भले और बुरेके बीच चुनाव करनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ देता है। वह दुनियाका सबसे क्रूर स्वामी है, क्योंकि वह प्राय हमारे मुंहके सामने आयी रोटीको छीन लेता है और इच्छाकी स्वतन्त्रताकी आड़में हमें इतनी अपर्याप्त छूट देता है कि हमसे कुछ करते-धरते नहीं बनता और हमारी इस परेशानीसे वह अपने लिए केवल विनोदकी सामग्री ही जुटाता है। ... इसीलिए हिन्दू धर्म इस सबको उसकी लीला अथवा उसकी माया कहता है। १

ऐसे व्यापक सत्य-नारायणके प्रत्यक्ष दर्शनके लिए जीवमात्रके प्रति आत्मवत् प्रेमकी परम आवश्यकता है। और जो मनुष्य ऐसा करना चाहता है, वह जीवनके किसी भी क्षेत्रसे बाहर नहीं रह सकता। यही कारण है कि सत्यकी मेरी पूजा मुझे राजनीतिमें खींच लायी है। जो मनुष्य यह कहता है कि धर्मका राजनीतिसे कोई संबंध नहीं है, वह धर्मको नहीं जानता ऐसा कहनेमें मुझे संकोच नहीं होता और न ऐसा कहनेमें मैं अविनय करता हूं। ११

आत्मशुद्धिके बिना जीवमात्रके साथ ऐक्य सध ही नहीं सकता। आत्मशुद्धिके बिना अहिंसा-धर्मका पालन सर्वथा असंभव है। अशुद्ध आत्मा परमात्माके दर्शन करनेमें असमर्थ है। अतएव जीवन-मार्गके सभी क्षेत्रोंमें शुद्धिकी आवश्यकता है। यह शुद्धि साध्य है क्योंकि व्यष्टि और समष्टिके बीच ऐसा निकटका संबंध है कि एककी शुद्धि अनेकोंकी शुद्धिके बराबर हो जाती है। १२

लेकिन मैं प्रतिक्षण यह अनुभव करता हूं कि शुद्धिका यह मार्ग विकट है। शुद्ध बननेका अर्थ है मनसे वचनसे और कायसे निर्विकार बनना राग-द्वेषादिसे रहित होना। इस निर्विकारता तक पहुंचनेका प्रतिक्षण प्रयत्न करते हुए भी मैं पहुंच नहीं पाया हूं इसलिए लोगोंकी स्तुति मुझे भुलावेमें नहीं डाल सकती। उलटे यह स्तुति प्रायः मुझे तीव्र वेदना पहुंचाती है। मनके विकारोंको जीतना संसारको शस्त्र-युद्धसे जीतनेकी अपेक्षा मुझे कठिन मालूम होता है। १३

मैं तो अपने पथ पर कठिनाईसे बढ़ रहा एक ऐसा दुर्बल प्राणी हूं जो पूरी तरह शुद्ध और सात्त्विक बननेके लिए तड़प रहा है जो पूरी तरह मन-कर्म वचनसे सत्य-परायण और अहिंसक बनना चाहता है परन्तु जिस आदर्शको वह सच्चा मानता है उस तक पहुंचनेमें सदा असफल रहता है। यह एक कष्टपूर्ण चढ़ाई है परन्तु मेरे लिए इसका कष्ट एक सच्चा आनन्द है। ऊपरकी ओर एक एक कदम बढ़ाने पर मुझे पहलेसे ज्यादा शक्ति महसूस होती है और अगला कदम उठानेकी योग्यता प्राप्त होती है। १४

जिस प्रकार ईश्वरने विभिन्न धर्मोंकी सृष्टि की है उसी प्रकार उन धर्मोंके अनुयायियोंकी भी सृष्टि की है। इस विचारको मैं गुप्त रूपसे भी अपने हृदयमें कैसे स्थान दे सकता हूं कि मेरे पड़ोसीका धर्म मेरे धर्मसे घटिया है इसलिए उसे अपना धर्म छोड़कर मेरा धर्म स्वीकार कर लेना चाहिये? एक सच्चे और विश्वसनीय मित्रकी हैसियतसे मैं केवल यही इच्छा कर सकता हूं यही प्रार्थना कर सकता हूं कि मेरा पड़ोसी अपने ही धर्ममें रहकर पूर्णताको प्राप्त करे। उस ईश्वरके अनेक घर हैं और वे सब एक समान पवित्र हैं। २१

कोई अपने मनमें एक क्षणके लिए भी यह डर न रखे कि दूसरे धर्मोंका आदरके साथ अध्ययन करनेसे हमारे अपने धर्ममें हमारी श्रद्धा कमजोर हो जायगी या हिल जायगी। हिन्दू दर्शन-पद्धति यह मानती है कि सारे धर्मोंमें सत्यके तत्त्व हैं और यह आदेश देती है कि हमें उन सब धर्मोंके प्रति आदरका भाव रखना चाहिये। बेशक, इसमें यह मान लिया गया है कि अपने धर्मके प्रति तो हमारा आदर-भाव होना ही चाहिये। दूसरे धर्मोंके आदर और अध्ययनसे अपने धर्मके प्रति हमारा आदर और श्रद्धा घटनी नहीं चाहिये। बल्कि इस आदर और श्रद्धाके फल स्वरूप हमारा आदर दूसरे धर्मों तक फैलना चाहिये। २२

अधिक अच्छा तो यह होगा कि शब्दोंके बजाय हमारे जीवन ही दुनियासे हमारे विषयमें कहें। केवल १९ वर्ष पूर्व एक ही बार ईश्वरने आत्म बलिदान नहीं किया। वह तो आज भी ऐसा करता है। वह प्रतिदिन मरता है और प्रतिदिन जन्म लेता है। अगर दुनियाको २ वर्ष पहले मरे हुए ऐतिहासिक ईश्वर पर निर्भर करना पड़े तो उसे बहुत थोड़ा आश्वासन मिलेगा। इसलिए लोगोंको इतिहासके ईश्वरका उपदेश मत सुनाइये बल्कि अपने जीवनके द्वारा उसके आजके रूपका लोगोंको दर्शन कराइये। २३

दूसरोंसे अपने धर्मके बारेमें बात करके धर्म-परिवर्तनकी दृष्टिसे कुछ कहनेमें मेरा विश्वास नहीं है। धर्मके प्रचारके लिए कुछ कहना नहीं

पड़ता। उसे तो जीवनमें उतारना पड़ता है। और तब यह स्वयं अपना प्रचार कर लेता है। २४

ईश्वरीय ज्ञान पुस्तकोंसे उधार नहीं लिया जाता। उसे अपने ही भीतर अनुभव करना पड़ता है। अधिकसे अधिक पुस्तकोंसे इस सम्बन्धमें मदद मिल जाती है, बहुत बार वे इसमें बाधक भी हो जाती हैं। २५

मैं जगतके समस्त महान धर्मोंके मूलभूत सत्यमें विश्वास रखता हूं। मेरा यह विश्वास है कि वे सब ईश्वरप्रदत्त हैं और मेरा यह भी विश्वास है कि वे धर्म उन प्रजाओंके लिए आवश्यक थे जिनके बीचमें उनका प्रकटीकरण हुआ था। मैं मानता हूं कि अगर हम सब विभिन्न धर्मोंके धर्मग्रंथोंको उन धर्मोंके अनुयायियोंकी दृष्टियोंसे पढ़ सकें तो हमें पता चलेगा कि बुनियादमें वे सब एक हैं और सब एक-दूसरेके सहायक हैं। २६

एक ईश्वरमें विश्वास होना सभी धर्मोंका मूल आधार है। लेकिन मैं भविष्यमें ऐसे किसी समयकी कल्पना नहीं करता जब इस धरती पर व्यवहारमें केवल एक ही धर्म रहेगा। सिद्धान्तकी दृष्टिसे चूंकि ईश्वर एक है इसलिए धर्म भी एक ही हो सकता है। परन्तु व्यवहारमें ऐसे कोई दो मनुष्य मेरे जाननेमें नहीं आये जो ईश्वरके विषयमें एकसी ही कल्पना करते हों। इसलिए मनुष्योंके विभिन्न स्वभावों तथा भौगोलिक परिस्थितियोंके अनुसार शायद धर्म भी सदा भिन्न ही रहेंगे। २७

मेरा यह विश्वास है कि दुनियाके समस्त महान धर्म लगभग सच्चे हैं। 'लगभग' मैं इसलिए कहता हूं कि मेरा ऐसा विश्वास है कि मनुष्यका हाथ जिस किसी वस्तुको छूता है वह अपूर्ण हो जाती है, इसका कारण यह है कि मनुष्य स्वयं अपूर्ण है। पूर्णता एकमात्र ईश्वरका गुण है। और वह अवर्णनीय है, शब्दोंसे उसे समझाया नहीं जा सकता। मेरा यह विश्वास अवश्य है कि प्रत्येक मानवके लिए ईश्वरके समान

पूर्ण बनना सम्भव है। उस पूर्णताकी आकांक्षा रखना हम सबके लिए आवश्यक है। परन्तु जब वह दिव्य आनन्दमय स्थिति प्राप्त होती है, तब उसका वर्णन करना और उसकी व्याख्या करना असम्भव होता है। और इसलिए मैं अत्यन्त नम्र भावसे स्वीकार करता हूं कि वेद, कुरान और बाइबल भी ईश्वरके अपूर्ण वचन हैं और चूंकि हम अनेक विकारोंमें इधर-उधर बह जानेवाले अपूर्ण प्राणी हैं इसलिए ईश्वरकी इस वाणीको पूरी तरह समझना भी हमारे लिए असम्भव है। २८

मैं केवल वेदोंको ही ईश्वरीय प्रेरणाका फल नहीं मानता हूं। बाइबल, कुरान और जेन्द-अवेस्ताको भी मैं उतने ही ईश्वर-प्रेरित मानता हूं। हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें मेरा विश्वास होनेसे यह जरूरी नहीं हो जाता कि मैं उनके प्रत्येक शब्दको प्रत्येक श्लोकको ईश्वर-प्रेरित मान लूं। मैं ऐसे किसी अर्थसे, भले वह कितना ही विद्वत्तापूर्ण क्यों न हो, बंधनेसे इनकार करता हूं जो बुद्धि या नीतिकी भावनाके विरुद्ध हो। २९

मंदिर, मसजिद या गिरजाघर ... ईश्वरके इन विभिन्न निवासस्थानोंमें मैं कोई फर्क नहीं करता। वे वैसे ही हैं जैसे मनुष्यकी श्रद्धाने उन्हें बनाया है। वे मनुष्यकी किसी तरह अदृश्य शक्ति तक पहुंचनेकी आकांक्षाके परिणाम हैं। १

प्रार्थनाने मेरे जीवनकी रक्षा की है। उसके बिना मैं कभीका पागल हो जाता। मेरी आत्मकथा आपको बतायगी कि मुझे भी कटुसे कटु सार्वजनिक और व्यक्तिगत अनुभवोंका काफी हिस्सा मिला है। उनसे मैं थोड़ी देरके लिए निराशामें डूब गया परन्तु मुझे छुटकारा मिला तो प्रार्थनाके कारण ही मिला। मैं आपको यह बता दूं कि जिस अर्थमें सत्य मेरे जीवनका अंग रहा है उस अर्थमें प्रार्थना मेरे जीवनका अंग नहीं रही है। वह तो केवल आवश्यकतावश आयी क्योंकि मैं ऐसी स्थितिमें पड़ गया जब प्रार्थनाके बिना सुखी नहीं हो सकता था। और ईश्वरमें मेरी श्रद्धा जितनी बढ़ती गई उतनी ही प्रार्थनाकी लगन अदम्य होती गई। उसके बिना जीवन मुझे निस्तेज और सूना प्रतीत होता था।

मैंने दक्षिण अफ्रीकामें ईसाई प्रार्थनामें भाग लिया था लेकिन वह मेरे दिलको पकड़ नहीं सकी। मैं प्रार्थनामें उनके साथ शरीक नहीं हो सका। वे ईश्वरसे भिक्षा मांगते थे परन्तु मैं नहीं मांग सका। मैं बुरी तरह असफल हुआ। शुरूमें मेरा ईश्वर और प्रार्थनामें विश्वास नहीं था और जीवनमें बहुत काल तक मुझे ऐसा महसूस नहीं हुआ कि किसी चीजकी कमी है। लेकिन एक समय ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे शरीरके लिए अन्न अनिवार्य है वैसे ही आत्माके लिए प्रार्थना अनिवार्य है। असलमें शरीरके लिए अन्न इतना जरूरी नहीं है जितनी आत्माके लिए प्रार्थना है क्योंकि शरीरको स्वस्थ रखनेके लिए निराहार रहना अक्सर जरूरी होता है, परन्तु प्रार्थनाका उपवास तो हो ही नहीं सकता। प्रार्थनामें सम्भवत कभी अति हो ही नहीं सकती। जगतके गुरु ईसा और मुहम्मद जैसे महानसे महान तीन शिक्षक अपने पीछे यह शुद्ध प्रमाण छोड़ गये हैं कि प्रार्थनासे उन्हें दिव्य ज्योति प्राप्त हुई थी और कदाचित् वे प्रार्थनाके बिना जी ही नहीं सकते थे। करोड़ों हिन्दू मुसलमान और ईसाई एकमात्र प्रार्थनाके द्वारा ही जीवनमें आश्वासन प्राप्त करते हैं। या तो आप उन्हें झूठे कहिये या आत्म-वंचनामें फंसे हुए लोग कहिये। अगर इस झूठने ही मुझे जीवनका मुख्य आधार दिया हो जिसके बिना मैं एक क्षण भी नहीं जी सकता तो सत्य-शोधकके नाते मैं कहूंगा कि यह झूठ मेरे लिए एक आकर्षणकी वस्तु है। राजनीतिक क्षितिज पर मेरे सामने निराशा छाई रहने पर भी मैंने कभी अपनी शांति नहीं खोई। सच तो यह है कि मेरी शांतिसे ईर्ष्या करनेवाले लोग मैंने देखे हैं। मैं कहता हूं कि यह शांति प्रार्थनासे आती है। मैं विद्वान आदमी नहीं हूं परन्तु मैं प्रार्थना-परायण मनुष्य होनेका नम्रतापूर्वक दावा करता हूं। मुझे इसकी परवाह नहीं कि प्रार्थनाका स्वरूप क्या हो। इस बारेमें हरएकको अपना नियम खुद ही बनाना चाहिये। परन्तु कुछ सुनिश्चित मार्ग है और प्राचीन पुरुषोंके चलाये हुए इन मार्गों पर चलना सुरक्षित है। प्रार्थनाके बलमें मैंने अपनी निजी गवाही दे दी। अब हरएक आदमी कोशिश करके देख ले कि रोज प्रार्थना करके वह अपने जीवनमें कोई नई चीज जोड़ता है या नहीं। ११

मनुष्यका अंतिम लक्ष्य ईश्वर-साक्षात्कार है और उसकी सामाजिक राजनीतिक और धार्मिक सभी प्रवृत्तियां ईश्वर-दर्शनके अंतिम उद्देश्यसे प्रेरित होनी चाहिये। समस्त मानव-प्राणियोंकी तात्कालिक सेवा इस प्रयत्नका आवश्यक अंग बन जाती है क्योंकि ईश्वरको पानेका एकमात्र उपाय यह है कि उसे उसकी सृष्टिमें देखा जाय और उसके साथ एकता अनुभव की जाय। यह एकता सबकी सेवासे ही अनुभव की जा सकती है। मैं सम्पूर्णका एक अविभाज्य अंग हूं और मैं उस ईश्वरको शेष मानव जातिसे अलग नहीं पा सकता। मेरे देशवासी मेरे निकटतम पड़ोसी हैं। वे इतने असहाय, इतने साधनहीन, इतने जड़ हो गये हैं कि मुझे उनकी सेवामें अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिये। अगर मुझे यह विश्वास हो जाय कि मैं ईश्वरको हिमालयकी किसी गुफामें पा सकता हूं, तो मैं तुरन्त वहांके लिए चल पड़ूंगा। परन्तु मैं जानता हूं कि उसे मानव जातिसे अलग मैं कहीं नहीं पा सकता। १२

यह बड़े दुःखकी बात है कि धर्म आज हमारे लिए खाने-पीने पर लगाये गये प्रतिबन्धोंके सिवा ऊंच-नीचकी भावनासे चिपके रहनेके सिवा दूसरा कोई अर्थ नहीं रखता। मैं आपसे कह दूं कि इससे बढ़कर दूसरा कोई अज्ञान नहीं हो सकता। जन्म और बाह्य आचार — बाहरी कर्मकांड — मनुष्यकी उच्चता और नीचताका निर्णय नहीं कर सकते। केवल चरित्र ही इस बातका निर्णायक प्रमाण हो सकता है। ईश्वरने उच्चताका या नीचताका बिल्ला लगाकर मनुष्योंको पैदा नहीं किया है। जो धर्मग्रंथ जन्मके आधार पर किसी स्त्री या पुरुषको नीचा या अछूत मानता है, वह हमारी भक्ति और श्रद्धाका पात्र नहीं हो सकता। ऐसा मानना ईश्वर और सत्यसे — जो ईश्वर है — इनकार करना है। १३

मेरा यह पक्का विश्वास है कि संसारके समस्त महान धर्म सच्चे हैं और ईश्वर-दत्त हैं। वे ईश्वरका हेतु पूरा करते हैं और उन मनुष्योंका हेतु पूरा करते हैं जो उस वातावरणमें और उन उन धर्मोंमें पल-पुस कर बड़े हुए हैं। मैं नहीं मानता कि ऐसा समय कभी आयेगा जब हम यह कह सकेंगे कि संसारमें केवल एक ही धर्म है। एक अर्थमें आज भी संसारमें

एक मूलभूत धर्म है। लेकिन कुदरतमें सीधी रेखा जैसी कोई चीज नहीं है। धर्म एक महान वृक्ष है, जिसकी अनेक शाखायें हैं। शाखाओंके रूपमें आप कह सकते हैं कि धर्म अनेक हैं परन्तु वृक्षके रूपमें तो धर्म एक ही है। १४

मान लीजिये कि एक ईसाई मेरे पास आता है और कहता है कि भागवतके पाठसे वह मुग्ध हो गया है इसलिए अपनेको हिन्दू घोषित करना चाहता है। तो मैं उससे कहूंगा "नहीं ऐसा मत करो। जो बात भागवत कहती है वही बाइबल भी कहती है। तुमने उसे खोजनेका प्रयत्न नहीं किया है। वह प्रयत्न करो और अच्छे ईसाई बनो। १५

मैं धर्मको मनुष्यकी अनेक प्रवृत्तियोंमें से एक नहीं मानता। एक ही प्रवृत्ति धर्मकी वृत्तिसे भी हो सकती है और अधर्मकी वृत्तिसे भी हो सकती है। अत: मेरे लिए राजनीतिक प्रवृत्ति छोड़कर धर्मकी प्रवृत्ति ग्रहण करनेकी बात है ही नहीं। मेरा तो हर काम छोटीसे छोटी प्रवृत्ति भी जिसे मैं अपना धर्म मानता हूं उसीसे नियमित होती है। १६

इसमें कोई शक नहीं कि यह चराचर जगत एक कानूनसे चलता है। अगर कानून बनानेवालेके बिना आप कानूनकी कल्पना कर सकते हैं, तो मैं कहता हूं कि वह कानून ही कानून बनानेवाला यानी ईश्वर है। हम जब उस कानूनकी प्रार्थना करते हैं तब हम उस कानूनको जानने और उसका पालन करनेके लिए उत्कण्ठा दिखाते हैं। हम जिसकी आकांक्षा रखते हैं वही बन जाते हैं। इसीलिए प्रार्थनाकी जरूरत है। हमारा वर्तमान जीवन पिछले जीवनसे नियमित होता है। इसी कार्य-कारणके नियमसे हमारा भावी जीवन हमारे वर्तमान कामोंसे बनेगा। हमारे सामने दो या दोसे अधिक कामोंके बीच चुनाव करनेका सवाल खड़ा हो तो हमें वह चुनाव करना ही पड़ता।

बुराई इस दुनियामें क्यों है और वह क्या चीज है ये प्रश्न हमारी मर्यादित बुद्धिसे परे हैं। हमारे लिए इतना जानना काफी है कि बुराई

और भलाई दोनोंका अस्तित्व है और जब जब हम इन दोनोंका भेद कर सकें तब तब हमें भलाईको पसन्द करना चाहिये और बुराईको छोड़ना चाहिये। १७

जिनका ईश्वरके मार्गदर्शनमें विश्वास है वे जो अच्छेसे अच्छा उनसे हो सकता है वही करते हैं और कभी चिन्ता नहीं रखते। सूर्यको कभी अधिक परिश्रमसे थकावट नहीं होती फिर भी सूर्यके समान अनोखी नियमितताके साथ कौन ज्यादा परिश्रम करता है। और हम यह क्यों समझें कि सूर्य जड़ पदार्थ है? उसके और हमारे बीच यह अन्तर हो सकता है कि उसे बिलकुल आजादी नहीं है और हमें थोड़ी-बहुत है भले वह कितनी ही अनिश्चित क्यों न हो। लेकिन इस तरहकी अटकलोंमें क्या रखा है? हमारे लिए इतना काफी है कि अचूक शक्तिके प्रमाणके रूपमें हमारे सामने सूर्यका उज्ज्वल उदाहरण मौजूद है। अगर हम अपनेको पूरी तरह उसकी (ईश्वरकी) मरजी पर छोड़ दें और सचमुच शून्यवत् बन जायें तो हम भी स्वेच्छासे अपना चुनाव करनेका अधिकार छोड़ देते हैं और फिर हमारे लिए थकनेकी कोई बात नहीं रहती। १८

हां कुछ ऐसे विषय हैं जिनमें बुद्धि हमें बहुत दूर नहीं ले जा सकती। हमें उन्हें श्रद्धापूर्वक मानना पड़ता है। ऐसी जगह श्रद्धा बुद्धिकी विरोधिनी नहीं होती। वह बुद्धिसे परे होती है। इस प्रकार हम श्रद्धाको छठी इन्द्रिय भी कह सकते हैं जो उन मामलोंमें निर्णय देती है जो बुद्धिके क्षेत्रसे बाहर हैं। तो ये तीन कसौटियां मिल जाने पर धर्मके नाम पेश किये गये किसी भी दावेकी जांच करनेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं होती। इस तरह यह दावा कि ईसा परमात्माके एकमात्र औरस पुत्र हैं मुझे बुद्धिके विपरीत मालूम होता है। क्योंकि परमात्मा विवाह करके बच्चे नहीं पैदा कर सकता। इसलिए यहां पुत्र शब्द तो आलंकारिक भाषामें ही प्रयुक्त हो सकता है। और उस अर्थमें तो हर व्यक्ति जो ईसाकी तुलनामें खड़ा हो सकता है, ईश्वरका औरस पुत्र कहला सकता है। अगर कोई मनुष्य आध्यात्मिक

करके मानते रहे हैं कि अगर हम हैं तो ईश्वर है ही और अगर ईश्वर नहीं है तो हम भी नहीं हैं। और चूंकि ईश्वरमें विश्वास उतना ही पुराना है जितनी मानव-जाति पुरानी है, ईश्वरका अस्तित्व सूर्यके अस्तित्व से भी अधिक निश्चित सत्य माना जाता है। इस जीवित श्रद्धाने जीवन-की अनेक उलझनोंको सुलझा दिया है। उसने हमारा दुःख कम कर दिया है। यह श्रद्धा जीवनमें हमारा सहारा बनती है और मृत्युमें हमें सान्त्वना प्रदान करती है। सत्यकी खोज भी इस श्रद्धाके कारण रसप्रद और करने योग्य बन जाती है। परन्तु सत्यकी खोज ईश्वरकी खोज है। सत्य ईश्वर है। ईश्वर है, क्योंकि सत्य है। हम इस खोजमें लगते हैं क्योंकि हमारा यह विश्वास है कि सत्य है और परिश्रमपूर्ण खोजसे तथा खोजके प्रसिद्ध और अनुभव-सिद्ध नियमोंके आग्रहपूर्ण पालनसे सत्यको प्राप्त किया जा सकता है। इतिहासमें इस बातका कोई प्रमाण नहीं है कि ऐसी खोज कभी असफल सिद्ध हुई है। नास्तिकोंने भी जिन्होंने ईश्वरमें अविश्वास रखनेका ढोंग किया है, सत्यमें विश्वास रखा है। उन्होंने ईश्वरको नया नाम देनेके बजाय दूसरा नाम देनेकी युक्ति निकाली है। उसके नाम तो हजारों हैं। और सत्य उनमें सबसे श्रेष्ठ है।

जो बात ईश्वरके विषयमें सच है वही यद्यपि थोड़ी कम मात्रामें कुछ बुनियादी नैतिक नियमोंकी सत्यताको मान लेनेके विषयमें भी सच है। सच पूछा जाय तो वे नियम ईश्वर या सत्यके विश्वासमें ही समाये हुए हैं। उनका पालन न करनेवालोंको अपार कष्टोंका सामना करना पड़ा है। आचरणकी कठिनाई और अविश्वास — दोनोंको एक ही समझनेकी गलती नहीं करनी चाहिये। हिमालयकी चढ़ाईके लिए भी सफलताकी अपनी निश्चित शर्तें हैं। इन शर्तोंका पूरा करनेकी कठिनाई चढ़ाईको असम्भव नहीं बना देती। यह तो खोजमें हमारे रस और उत्साहको बढ़ाती है। बेशक ईश्वर अथवा सत्यकी खोजकी यह चढ़ाई हिमालयकी असंख्य चढ़ाइयोंसे अनन्त गुना अधिक महत्त्व रखती है और इसलिए यह कहीं ज्यादा रसप्रद है। अगर हममें उसके लिए उत्साह न हो तो इसका कारण हमारी श्रद्धाकी कमजोरी है। जो कुछ हम अपने इन चर्म-चक्षुओंसे देखते हैं वह हमें एकमात्र सत्य — ईश्वर — से अधिक

वास्तविक लगता है। हम जानते हैं कि बाहरी रूप धोखा देनेवाले हैं — निरे भ्रम हैं। और यह जानते हुए भी हम तुच्छ और भ्रामक वस्तुओंको वास्तविक वस्तु मानते हैं। तुच्छ वस्तुओंको हम तुच्छ समझने लगें तो आधी लड़ाई जीत ली जाती है। ऐसा समझना सत्य अथवा ईश्वरकी आधीसे अधिक खोज कर लेनेके बराबर है। जब तक हम तुच्छ वस्तुओंसे अपना सम्बन्ध हम तोड़ नहीं लेते तब तक इस महान खोजके लिए हमें फुरसत भी नहीं मिलेगी। या इस खोजके कार्यको हमें अपने फुरसतके समयके लिए ही रख छोड़ना है? ५२

परमेश्वरकी व्याख्यायें अनगिनत हैं क्योंकि उसकी विभूतियां भी अनगिनत हैं। ये विभूतियां मुझे आश्चर्यचकित करती हैं। क्षणभरके लिए ये मुझे मुग्ध भी करती हैं। किन्तु मैं पुजारी तो सत्यरूपी परमेश्वरका ही हूं। वह एक ही सत्य है दूसरा सब मिथ्या है। वह सत्य मुझे मिला नहीं है; लेकिन मैं इसका शोधक हूं। इस शोधके लिए मैं अपनी प्रियसे प्रिय वस्तुका त्याग करनेको भी तैयार हूं और मुझे यह विश्वास है कि इस शोधरूपी यज्ञमें अपने इस शरीरको भी होमनेकी मेरी तैयारी और शक्ति है। लेकिन जब तक मैं इस सत्यका साक्षात्कार न कर लूं तब तक मेरी अन्तरात्मा जिसे सत्य समझती है उस काल्पनिक सत्यको अपना आधार मानकर, उसे अपना दीपस्तम्भ समझकर, उसीके सहारे मैं अपना जीवन व्यतीत करता हूं। ५३

मैं दूर दूरसे विशुद्ध सत्यकी — ईश्वरकी — झांकी भी कर रहा हूं। मेरा यह विश्वास दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता है कि एक सत्य ही है, उसके अलावा दूसरा कुछ भी इस जगतमें नहीं है। यह विश्वास किस प्रकार बढ़ता गया है इसे जो जानना चाहें वे जानकर मेरे प्रयोगोंके साझेदार बनें और उस सत्यकी झांकी भी मेरे साथ करना चाहें तो भले करें। साथ ही मैं यह भी अधिकाधिक मानने लगा हूं कि जितना कुछ मेरे लिए सम्भव है उतना एक बालकके लिए भी सम्भव है, और इसके लिए मेरे पास सबल कारण हैं। सत्यकी शोधके साधन जितने कठिन हैं उतने ही सरल भी हैं। वे अभिमानीको असम्भव मालूम होंगे और

एक निर्दोष बालकको बिलकुल सम्भव समझें। सत्यके शोधकको रजकणसे भी नीचे रहना पड़ता है। ४४

पूर्ण सत्यका अगर हमने देखा होता तो फिर सत्यका आग्रह किसलिए रखते? तब तो हम परमेश्वर हो जाते। क्योंकि सत्य ही परमेश्वर है, ऐसी हमारी भावना है। हम पूरे सत्यको पहचानते नहीं हैं इसलिए उसका आग्रह रखते हैं और इसीलिए पुरुषार्थके लिए स्थान है। इसमें हमारी अपूर्णताका स्वीकार आ जाता है। अगर हम अपूर्ण हैं तो हमारी कल्पनाका धर्म भी अपूर्ण है। स्वतंत्र धर्म सम्पूर्ण है। उसे हमने देखा नहीं है जैसे हमने ईश्वरको देखा नहीं है। हमारा माना हुआ धर्म अपूर्ण है और उसमें हमेशा परिवर्तन हुआ करते हैं, हुआ करेंगे। ऐसा हो तभी हम ऊपर और ऊपर उठ सकते हैं, सत्यकी ओर, ईश्वरकी ओर प्रतिदिन आगे बढ़ सकते हैं। और अगर आदमीके माने हुए सब धर्मोंको हम अपूर्ण मानें तो फिर किसीको ऊंचा या नीचा माननेकी बात नहीं रहती। सब धर्म सच्चे हैं लेकिन सब अपूर्ण हैं इसलिए उनमें दोष हो सकते हैं। समभाव होने पर भी हम उन धर्मोंमें दोष देख सकते हैं। अपने धर्ममें भी हम दोष देखें। उन दोषोंके कारण हम अपने धर्मको छोड़ न दें लेकिन उन दोषोंको मिटायें। अगर हम इस तरह समभाव रखेंगे तो दूसरे धर्मोंसे जो कुछ लेने लायक होगा उसे अपने धर्ममें जगह देनेमें हमें हिचकिचाहट नहीं होगी इतना ही नहीं बल्कि ऐसा करना हमारा धर्म हो जायेगा।

सब धर्म ईश्वरके दिये हुए हैं। लेकिन वे मनुष्यकी कल्पनाके हैं। और मनुष्य उनका प्रचार करता है इसलिए वे अपूर्ण हैं। ईश्वरका दिया हुआ धर्म पहुंचके परे—अगम्य है। मनुष्य उसे अपनी भाषामें रखता है उसका अर्थ भी मनुष्य करता है। किसका अर्थ सच्चा है? सब अपनी अपनी दृष्टिसे जब तक उस दृष्टिके अनुसार वे बरतते हैं तब तक सच्चे हैं। लेकिन सबका गलत होना भी असम्भव नहीं। इसलिए हम सब धर्मोंकी ओर समभाव रखें। इससे अपने धर्मके प्रति हृदयमें उदासीनता नहीं आती लेकिन अपने धर्मके प्रति हमारा जो प्रेम है वह अंधा न होकर ज्ञानमय बनता है, और इसलिए वह ज्यादा सात्विक ज्यादा निर्मल बनता

है। जब धर्मोंकी ओर समभाव हो तभी हमारे दिव्यचक्षु खुल सकते हैं। धर्मांधता और दिव्य दर्शनमें उत्तर-दक्षिणका अन्तर है। धर्मका सच्चा ज्ञान होने पर सारी अड़चनें दूर होती हैं और सब धर्मोंके बीच समभाव पैदा होता है। ४५

मेरा यह विश्वास है कि अगर हम मनुष्यसे डरना छोड़ दें और केवल ईश्वरके सत्यकी ही खोज करें, तो हम सब ईश्वरसे डर सकते हैं। मैं निश्चित रूपसे यह मानता हूं कि मैं केवल ईश्वरके सत्यकी ही खोज कर रहा हूं और मनुष्यसे मैं बिलकुल नहीं डरता। ४६

मुझे ईश्वरकी इच्छाका कोई विशेष स्पष्टीकरण नहीं हुआ है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि वह अपनेको प्रत्येक मानव-प्राणीके सामने रोज प्रगट करता है, मगर हम भीतरके इस धीमे सूक्ष्म नादके प्रति अपने कान बन्द कर लेते हैं। हम अपने सामने दिखाई देनेवाले स्पष्ट ईश्वरीय तेजके प्रति आंखें मूंद लेते हैं। ४७

मुझे केवल ईश्वरको ही अपना मार्गदर्शक मानकर चलना चाहिये। वह ईर्ष्यालु स्वामी है। वह अपनी सत्तामें किसीको भी हिस्सा बटाने नहीं देता। इसलिए हमें अपनी सारी कमजोरियोंके साथ हाथोंमें कोई भेंट लिये बिना पूर्ण समर्पणकी भावनासे उसके सामने खड़े होना चाहिये। अगर हम ऐसा करें तो वह हमें सारी दुनियाके सामने अकेले खड़े रहनेकी शक्ति प्रदान करता है और सारे संकटोंसे हमारी रक्षा करता है। ४८

यदि मैं अपने भीतर ईश्वरकी उपस्थितिका अनुभव न करता तो मैं प्रति-दिन इतना अधिक दुःखदर्द और निराशा देखता हूं कि उसकी वजहसे मैं पागल हो जाता और मेरा स्थान हुगलीकी गोदमें होता। ४९

एक वैज्ञानिक दृष्टिसे देखा जाय तो ईश्वर भलाई और बुराई दोनोंके मूलमें है। वह खूनीका खंजर और चीर-फाड़ करनेवाले डॉक्टरका चाकू, दोनोंका संचालन करता है। परन्तु इसके बावजूद हमारे जीवनके हितकी

दृष्टिसे भलाई और बुराई एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न और असंगत हैं। हमारे लिए वे प्रकाश और अन्धकारकी ईश्वर और शैतानकी प्रतीक हैं। ५

मुझे आपके और मेरे इस कमरेमें बैठे होनेका जितना विश्वास है उससे अधिक विश्वास ईश्वरके अस्तित्वका है। और मैं यह भी कह सकता हूँ कि मैं हवा और पानीके बिना रह सकता हूँ परन्तु ईश्वरके बिना नहीं रह सकता। आप मेरी आँखें निकाल लें परन्तु इससे मैं मरूँगा नहीं। आप मेरी नाक काट डालें तो भी मैं नहीं मरूँगा। परन्तु आप ईश्वरमें मेरा विश्वास नष्ट कर दें तो मैं निष्प्राण हो जाऊँगा। आप इसे अन्धविश्वास कह सकते हैं। परन्तु मैं स्वीकार करता हूँ कि यह ऐसा अन्धविश्वास है जिसे मैं अपनी छातीसे लगाये रखता हूँ। अपने बचपनमें जब मुझे कोई खतरा या डर मालूम होता था तब मैं इसी तरह रामनामसे चिपटा रहता था। एक बूढ़ी दाईने मुझे यही सिखाया था। ५१

जब तक हम अपनेको शून्यवत् नहीं बना देते तब तक हम अपने भीतरके दोषोंको जीत नहीं सकते। यही एकमात्र सच्ची स्वतंत्रता है जो प्राप्त करने योग्य है। इस स्वतंत्रताके मूल्यके रूपमें ईश्वर हमसे संपूर्ण आत्म-समर्पण चाहता है। और जब मनुष्य इस तरह अपनेको भुला देता है तब वह तुरन्त अपनेको प्राणीमात्रकी सेवामें लीन पाता है। यह सेवा उसके लिए आनंद और मनोरंजनका रूप ले लेती है। वह बिलकुल नया आदमी बन जाता है और ईश्वरकी सृष्टिकी सेवामें अपने-आपको खपाते हुए कभी थकता ही नहीं। ५२

आपके जीवनमें ऐसे क्षण आते हैं जब आपके लिए कोई कदम उठाना अनिवार्य हो जाता है भले आप अपने घनिष्ठ मित्रोंको भी अपने साथ न ले सकें। जब कर्तव्यका संघर्ष पैदा हो तब आपके भीतरकी शांत सूक्ष्म आवाज ही सदा अन्तिम निर्णायक होनी चाहिये। ५३

मैं धर्मके बिना एक क्षण भी नहीं जी सकता। मेरे अनेक राजनीतिक मित्र मुझसे निराश होते हैं क्योंकि वे कहते हैं कि मेरी राजनीति भी धर्मसे

जन्म लेती है। और उसका कहना बिलकुल ठीक है। मेरी राजनीति और मेरी अन्य सारी प्रवृत्तियां धर्ममें ही जन्म लेती हैं। मैं इससे आगे जाता हूं और कहता हूं कि धर्म-परायण मनुष्यकी हर प्रवृत्तिका जन्म उसके धर्ममें ही होना चाहिये क्योंकि धर्मका अर्थ है ईश्वरसे अनुसंधान —अर्थात् जीवनकी हर बात पर ईश्वरका शासन। ५४

मेरी दृष्टिमें धर्मसे कोई संबंध न रखनेवाली राजनीति बिलकुल कूड़ा-करकट जैसी है जिससे सदा दूर ही रहना चाहिये। राजनीतिका संबंध राष्ट्रोंसे होता है और जिसका संबंध राष्ट्रोंके कल्याणके साथ होता है, उसका सम्बन्ध धार्मिक मनुष्यके जीवनसे—दूसरे शब्दोंमें ईश्वर और सत्यकी खोज करनेवाले मनुष्यके जीवनसे होना ही चाहिये। मेरी दृष्टिमें ईश्वर और सत्य एक-दूसरेका स्थान ले सकनेवाले शब्द हैं। और यदि कोई मुझसे कहे कि ईश्वर असत्यका देवता है अथवा यातनाका देवता है, तो मैं उसकी पूजा करनेसे इनकार कर दूंगा। इसलिए राजनीतिमें भी हमें ईश्वरी राज्यकी स्थापना करनी होगी। ५५

जब तक मैं सारी मानव-जातिके साथ एकता सिद्ध न कर लूं तब तक मैं धार्मिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकता। और यह मैं तब तक नहीं कर सकता जब तक मैं राजनीतिमें भाग न लूं। आज मनुष्यकी सारी प्रवृत्तियां एक अविभाज्य वस्तु बन गई हैं। आप सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक कार्योंको एक-दूसरेसे अलग करके बिलकुल अलग अलग विभागोंमें नहीं बांट सकते। मैं मानवीय प्रवृत्तिसे अलग किसी धर्मको नहीं जानता। इससे अन्य सब प्रवृत्तियोंको नैतिक आधार मिलता है, जो और किसी तरहसे नहीं मिलता और जिसके बिना जीवन निरर्थक कोलाहल बन जाता है। ५६

श्रद्धा ही हमें सुरक्षित रूपमें तूफानी समुद्रके पार ले जाती है। श्रद्धा ही पर्वतोंको हिला देती है और श्रद्धा ही महासागरको कूद कर पार कर जाती है। यह श्रद्धा हमारे भीतर बसे हुए ईश्वरके जीवित और पूर्णतया जाग्रत भानके सिवा और कुछ नहीं है। जिसने यह श्रद्धा प्राप्त कर ली है

उसे और कुछ नहीं चाहिये। शरीरसे रोगग्रस्त होते हुए भी आध्यात्मिक दृष्टिसे वह पूर्ण स्वस्थ है, भौतिक दृष्टिसे गरीब होते हुए भी आध्यात्मिक दृष्टिसे वह सम्पन्न होता है। ५७

रूप तो अनेक हैं, परन्तु उन रूपोंको अनुप्राणित करनेवाली आत्मा एक ही है। जहां बाहरी विभिन्नताके मूलमें सबको अपने भीतर समा लेनेवाली यह मूलभूत एकता काम करती हो, वहां ऊंच और नीचके भेदोंके लिए गुंजाइश ही कैसे हो सकती है? क्योंकि यह एक ऐसा सत्य है, जिसका दैनिक जीवनमें कदम कदम पर हमें अनुभव होता है। समस्त धर्मोंका अंतिम ध्येय यही मूलभूत एकता सिद्ध करना है। ५८

अपने बचपनमें मुझे हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें जिन्हें ईश्वरके सहस्रनाम (विष्णु सहस्रनाम) कहा जाता है उनका जप करना सिखाया गया था। परन्तु इन सहस्र नामोंमें ईश्वरकी सारी नामावली समाप्त नहीं हो जाती। हम मानते हैं — और मेरे खयालमें यही सत्य है — कि जगतमें जितने प्राणी हैं उतने ही ईश्वरके नाम हैं और इसलिए हम यह भी कहते हैं कि ईश्वर अनाम है और चूंकि ईश्वरके अनेक रूप हैं, इसलिए हम उसे अरूप भी समझते हैं और चूंकि वह हमसे कई वाणियोंमें बात करता है इसलिए हम उसे अवाक् समझते हैं इत्यादि इत्यादि। इसी तरह जब मैंने इस्लामका अध्ययन किया तब मुझे पता चला कि इस्लाममें भी ईश्वरके अनेक नाम हैं।

जो लोग कहते थे कि ईश्वर प्रेम है, उनके साथ मैं भी कहता था कि ईश्वर प्रेम है। परन्तु अपने हृदयकी गहराईमें मैं यही कहा करता था कि ईश्वर प्रेमरूप हो सकता है, मगर सबसे ज्यादा तो ईश्वर सत्य रूप है। अगर मानव-वाणीके लिए ईश्वरका संपूर्ण वर्णन करना संभव हो तो मैं स्वयं तो इस निश्चय पर पहुंचा हूं कि ईश्वर सत्य है — सत्य शब्द ही उसका सर्वोत्तम वाचक शब्द है। परन्तु दो वर्ष पूर्व मैं एक कदम और आगे गया। मैंने कहा कि न केवल ईश्वर सत्यरूप है, बल्कि सत्य ही ईश्वर है। ईश्वर सत्य है और सत्य ही ईश्वर है, इन दोनों कथनोंके सूक्ष्म भेदको आप समझ लेंगे। इस निर्णय पर मैं लगभग पचास वर्षोंकी दीर्घ अनवरत और कठिन खोजके बाद पहुंचा हूं। इसकी

बाद मुझे पता चला कि सत्य तक पहुंचनेका निकटतम मार्ग प्रेम है। परन्तु मैंने यह भी पाया कि कमसे कम अंग्रेजी भाषामें लव (प्रेम) शब्दके अनेक अर्थ हैं, और विकारके अर्थमें मानव-प्रेम तो एक मलिन वस्तु है, जो मनुष्यका पतन करती है। मैंने यह भी देखा कि अहिंसाके अर्थमें प्रेमके पुजारियोंकी संख्या दुनियामें इनी-गिनी ही है। परन्तु सत्यके बारेमें दो अर्थ नहीं हैं और नास्तिकोंने भी सत्यकी आवश्यकता या शक्तिको स्वीकार किया है। परन्तु सत्यको ढूंढ निकालनेकी अपनी लगनमें नास्तिकोंने ईश्वरके अस्तित्वसे भी इनकार करनेमें संकोच नहीं किया है, और अपने दृष्टिकोणसे उन्होंने ठीक ही किया है। इस तरह सोचते हुए मेरी समझमें आया कि ईश्वर सत्य है, यह कहनेके बजाय मुझे ऐसा कहना चाहिये कि सत्य ही ईश्वर है। ईश्वर सत्य है ऐसा कहनेमें एक दूसरी कठिनाई यह है कि ईश्वरका नाम करोड़ों लोगोंने लिया है और उसके नाम पर अवर्णनीय अत्याचार किये हैं। यह बात नहीं है कि सत्यके नाम पर वैज्ञानिक लोग क्रूरताएं नहीं करते।

हिन्दू तत्त्वज्ञानमें एक चीज और है। वह कहता है — एक ईश्वर ही है उसके सिवा किसी और वस्तुकी सत्ता नहीं है। यही सत्य आप इस्लामके कलमेमें जोरके साथ कहा हुआ पाते हैं। वहां साफ साफ कहा गया है कि एक ईश्वर है, और कुछ भी नहीं है। असलमें संस्कृतमें सत्यके लिए जो शब्द है — सत् — उसका शब्दार्थ ही जो है होता है। इस कारणसे और अन्य कई कारणोंसे जो मैं आपको बता सकता हूं मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि सत्य ही ईश्वर है यह व्याख्या मुझे सबसे अधिक संतोष देती है। और जब आप सत्यको ईश्वरके रूपमें पाना चाहते हैं तब उसका एकमात्र अनिवार्य साधन प्रेम अर्थात् अहिंसा ही है। और चूंकि मैं मानता हूं कि अंतमें साधन और साध्य समानार्थक शब्द हो जाते हैं इसलिए मुझे यह कहनेमें संकोच नहीं होगा कि ईश्वर प्रेम है। ५९

शुद्ध सत्यकी यानी आत्माकी दृष्टिसे सोचने पर शरीर भी परिग्रह है। भोगकी इच्छासे हमने शरीरका आवरण पैदा किया है और उसे हम टिकाये रखते हैं। अगर भोगकी इच्छा बिलकुल कम हो जाय तो शरीरकी आव-

स्मरता न रह जाय यानी मनुष्यको नया शरीर लेनेकी जरूरत न पड़े। आत्मा सर्वव्यापी होनेसे शरीर-रूपी पिंजरेमें क्योंकर कैद रहेगी? इस पिंजरेको बनाये रखनेके लिए हम बुरा काम क्यों करें? औरोंको क्यों मारें? इस तरह विचार करते हुए हम आखिर त्याग तक पहुंच जाते हैं, और जब तक शरीर है तब तक उसका उपयोग सिर्फ सेवाके लिए करना सीखते हैं, यहां तक कि सेवा ही उसकी सच्ची खुराक हो जाती है। मनुष्य खाता है पीता है उठता है, बैठता है, जागता है, सोता है यह सब सेवाके लिए ही होता है। इसमें से पैदा होनेवाला सुख सच्चा सुख है और ऐसा करते हुए मनुष्य अन्तमें सत्यकी झांकी करता है। १

सत्य क्या है? प्रश्न कठिन है, परन्तु मैंने अपने लिए उसे यह कह कर हल कर लिया है कि जो तुम्हारी अन्तरात्मा कहे वही सत्य है। आप पूछेंगे तब विभिन्न लोग विभिन्न और विरोधी सत्योंकी कल्पना कैसे करते हैं? इसका उत्तर यह है कि मानव-मन असंख्य माध्यमों द्वारा काम करता है और मानव-मनका विकास हरएकमें एकसा नहीं हुआ है, इसलिए यह परिणाम तो आयेगा ही कि जो एकके लिए सत्य हो वह दूसरेके लिए असत्य हो। और इसलिए जिन लोगोंने सत्यके प्रयोग किये हैं वे इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि इन प्रयोगोंमें कुछ शर्तोंका पालन करना जरूरी है। जैसे सफलता पूर्वक वैज्ञानिक प्रयोग करनेके लिए अमुक वैज्ञानिक तालीम चाहिये ठीक वैसे ही आध्यात्मिक क्षेत्रमें प्रयोग करनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए यम-नियमोंकी कठोर प्रारंभिक साधना जरूरी है। इसलिए कोई अपनी अन्तरात्माकी आवाजकी बात करे, उसके पहले उसे अपनी मर्यादाएं अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये। आजकल हरएक आदमी यम-नियमकी कोई भी तालीम लिये बिना ही अपने अन्तःकरणकी आवाजके अधिकारका दावा करता है। इसके फलस्वरूप संसारको इतना असत्य प्रदान किया जा रहा है कि वह हैरान है। इसलिए मैं आपसे सच्ची नम्रतासे इतना ही निवेदन कर सकता हूं कि सत्यकी प्राप्ति ऐसे किसी व्यक्तिको नहीं हो सकती जिसमें नम्रताकी विपुल भावना न हो। अगर आप सत्यके महासागरकी छाती पर तैरना चाहते हैं तो आपको शून्य बन जाना होगा। ११

प्रत्येक मानवके हृदयमें सत्यका वास है। हमें वहीं सत्यकी खोज करनी चाहिये। और जिस सत्यके हम दर्शन करते हैं उसीके मार्गदर्शनमें हमें काम करना चाहिये। लेकिन किसीको यह अधिकार नहीं है कि वह सत्यकी अपनी दृष्टिके अनुसार दूसरोंको बरतनेके लिए मजबूर करे। १२

जीवन एक महत्त्वाकांक्षा है। उसका उद्देश्य पूर्णताके लिए प्रयत्न करना है। और यह पूर्णता आत्म-साक्षात्कार है। हमारी कमजोरियों या अपूर्णताओंके कारण इस आदर्शको हमें नीचा नहीं करना चाहिये। मुझे दुःखके साथ अपनी कमजोरियों और अपूर्णताओंका भान है। मैं प्रतिदिन सत्यसे यह मूक याचना करता हूं कि वह मुझे अपनी इन कमजोरियों और अपूर्णताओंको दूर करनेमें सहायता करे। १३

मेरी रचनाओंमें असत्यके लिए कोई स्थान नहीं हो सकता, क्योंकि मेरा यह अविचल विश्वास है कि सत्यके सिवा दूसरा कोई धर्म नहीं है और क्योंकि मैं सत्यकी कुरबानी करके प्राप्त हुई किसी भी वस्तुका त्याग करनेकी शक्ति रखता हूं। मेरी रचनाओंमें किसी मनुष्यके प्रति घृणाकी भावना हो ही नहीं सकती, क्योंकि मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि प्रेम ही पृथ्वीका आधार है। जहां प्रेम है वहीं जीवन है। प्रेमविहीन जीवन मृत्यु है। प्रेम और सत्य एक ही सिक्केकी दो बाजुएं हैं; उसके एक ओर सत्य है, तो दूसरी ओर प्रेम। यह मेरी दृढ़ श्रद्धा है कि सत्य और प्रेमके द्वारा हम सारे जगत पर विजय पा सकते हैं। १४

मैं केवल सत्यकी ही उपासना और भक्ति करता हूं। और मैं सत्यके सिवा अन्य किसीका अनुशासन नहीं मानता। १५

सत्य ही मूल वस्तु है; पहले सत्यको पाना चाहिये। लेकिन सत्य शिव और सुन्दर होता है। अतः सत्यको प्राप्त कर लेने पर कल्याण और सौन्दर्य तुम्हें मिल ही जायेंगे। ईसाने अपने गिरि-प्रवचनमें वास्तवमें यही सिखाया है। ईसाको मैं महान कलाकार मानता हूं क्योंकि उन्होंने सत्यकी उपासना की, उसे देखा और अपने जीवनमें उसे प्रकट किया। इसी तरह मुहम्मद भी एक बड़े कलाकार थे। कुरान अरबी साहित्यकी

सर्वश्रेष्ठ रचना है, पण्डितजन तो ऐसा ही कहते हैं। दोनोंने पहले सत्यकी प्राप्तिका प्रयत्न किया, यही कारण है कि उनकी वाणीमें अभिव्यक्तिका सौंदर्य अपने-आप आ गया। लेकिन ईसा या मुहम्मद किसीने भी कला पर कुछ नहीं लिखा। ऐसे ही सत्य और सौंदर्यकी आकांक्षा मैं करता हूं, मैं उसीके लिए जी रहा हूं और जरूरत पड़ने पर उसके लिए अपने प्राण भी दे दूंगा। १६

ईश्वरकी व्याख्या करना कठिन है। सत्यकी व्याख्या तो सब मानवोंके हृदयोंमें मौजूद है। तुम जिसे इस क्षण सच मानते हो, वही तुम्हारा सत्य है और वही तुम्हारा परमेश्वर है। अपनी कल्पनाके इस सत्यकी आराधना करते हुए मनुष्य अन्तिम शुद्ध सत्य तक पहुंच ही जाता है। और वही परमात्मा है। १७

मुझे (सत्यका) मार्ग मालूम है। वह कठिन और तंग है। वह तलवारकी धारकी तरह दुर्गम है। मुझे उस पर चलनेमें मजा आता है। जब मैं फिसल जाता हूं तो रोता हूं। परन्तु ईश्वरका अभय-वचन है कि नहि कल्याणकृत् कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति — जो कल्याणमय प्रयत्न करता है उसका कभी नाश नहीं होता। मुझे इस वचनमें अटूट श्रद्धा है। इसलिए यद्यपि मुझे अपनी कमजोरीके कारण हजार बार असफलता मिलती है, फिर भी मैं श्रद्धा नहीं छोड़ूंगा और आशा रखूंगा कि किसी न किसी दिन जब इन्द्रियां पूरी तरह मेरे वशमें हो जायंगी तब मुझे उस दिव्य प्रकाशका दर्शन अवश्य होगा। १८

मैं केवल सत्यका शोधक हूं। मेरा यह दावा है कि मुझे सत्यका मार्ग मिल गया है। मेरा दावा है कि मैं सत्यको पानेका सतत प्रयत्न कर रहा हूं। परन्तु मैं स्वीकार करता हूं कि मुझे अभी तक वह मिला नहीं है। सत्यको पूरी तरह प्राप्त कर लेना अपनेको और अपने लक्ष्यको प्राप्त कर लेना है अर्थात् संपूर्ण हो जाना है। मुझे अपनी अपूर्णताओंका दुःखद भान है। और इसीमें मेरा सारा बल समाया हुआ है, क्योंकि अपनी मर्यादाओंको जान लेना मनुष्यके लिए दुर्लभ वस्तु है। १९

इस दुनियामें चारों ओर घिरे हुए घोर अंधकारके बीच मैं प्रकाशकी ओर जानेवाला मार्ग खोज रहा हूं। मैं बहुधा गलती करता हूं और झूठी धारणायें बना लेता हूं। मेरा विश्वास एकमात्र ईश्वरमें है। और मैं मनुष्यों पर इसीलिए विश्वास करता हूं कि मैं ईश्वर पर विश्वास करता हूं। अगर मुझे ईश्वरका आधार न होता तो मैं एथेन्सके टिमनकी तरह मनुष्य-जातिसे घृणा करने लगता। ७०

मैं धर्मका वेष धारण किया हुआ राजनीतिज्ञ नहीं हूं। लेकिन चूंकि सत्य ही सर्वोच्च ऊंची बुद्धिमत्ता है, इसलिए कभी कभी मेरे काम ऊंचीसे ऊंची राजनीतिज्ञताके अनुरूप मालूम होते हैं। लेकिन मुझे आशा है कि सत्य और अहिंसाकी नीतिके सिवा दूसरी कोई नीति मुझमें नहीं है। मेरे देश या धर्मके उद्धारके लिए भी मैं सत्य और अहिंसाकी कुरबानी नहीं करूंगा। इसका मतलब यह हुआ कि दोनोंका ही उद्धार सत्य और अहिंसाकी कुरबानी करके नहीं हो सकता। ७१

मुझे लगता है कि मैं अहिंसाके आदर्शकी अपेक्षा सत्यके आदर्शको अधिक अच्छी तरह समझता हूं। और मेरा अनुभव मुझे बताता है कि अगर मैं सत्यके साथ चिपटा न रहूं तो मैं अहिंसाकी पहेलीको कभी सुलझा नहीं सकूंगा। दूसरे शब्दोंमें शायद सीधे मार्ग पर चलनेकी हिम्मत मुझमें नहीं है। मुझमें दोनों एक ही हैं क्योंकि शंका श्रद्धाके अभाव या कमजोरीका अनिवार्य परिणाम है। इसलिए मैं दिन-रात ईश्वरसे यही प्रार्थना किया करता हूं कि हे प्रभु, मुझे श्रद्धा प्रदान कर। ७२

अपमानों तथाकथित पराजयों और तूफानोंसे भरी जिन्दगीमें भी मैं अपनी शांति कायम रख सकता हूं क्योंकि ईश्वरमें मेरी अटल श्रद्धा है — जिसे मैं सत्य कहता हूं। हम करोड़ों वस्तुओंके रूपमें ईश्वरका वर्णन कर सकते हैं लेकिन मैंने अपने लिए जो रूप अपनाया है वह है सत्य ईश्वर है। ७३

मैं कोई अचूक मार्गदर्शन या प्रेरणा प्राप्त करनेका दावा नहीं करता। जहां तक मेरे अनुभवका सम्बन्ध है, मनुष्यका अचूक मार्गदर्शन पानेका

दावा सिद्ध नहीं सकता। क्योंकि हम देखते हैं कि प्रेरणा भी उसीको मिल सकती है, जो सुख-दुःखादि द्वन्द्वोंके प्रभावसे मुक्त है और किसी खास समय पर यह निर्णय करना कठिन होगा कि मनुष्यका सुख-दुःखादि द्वन्द्वोंसे मुक्त होनेका दावा उचित है या नहीं। इस प्रकार अचूक मार्गदर्शन पानेका दावा करना सदा अत्यन्त खतरनाक होगा। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि हम किसी भी प्रकारके मार्गदर्शनसे सर्वथा वंचित रहेंगे। दुनियाके सन्तों और पैगम्बरोंके अनुभवोंके भंडारका लाभ तो हमें प्राप्त हो ही सकता है और सदा-सर्वदा प्राप्त होता रहेगा। इसके सिवा जगतमें अनेक बुनियादी सत्य नहीं हैं बल्कि एक ही बुनियादी सत्य है और वह स्वयं सत्य ही है जिसे अहिंसा भी कहा जाता है। मर्यादित शक्तिवाला अपूर्ण मनुष्य पूर्ण सत्य और प्रेमको नहीं जान सकता जो स्वयं असीम और अनन्त है। फिर भी हम अपने मार्गदर्शनके लिए इन दोनोंका काफी ज्ञान रखते हैं। इनके प्रयोगमें हम गलती करेंगे और कभी कभी शोचनीय गलतियां करेंगे। लेकिन मनुष्य आत्म-शासन करनेवाला प्राणी है और आत्म-शासनमें जैसे गलतियां करनेका अधिकार शामिल है वैसे ही जब जब गलतियां हों तब तब उन्हें सुधारनेका अधिकार भी शामिल है। ७४

मैं भूलोंके लायक हो सकता हूं। लेकिन जब सत्य मेरे जरिये बोलता है तब मैं अजेय बन जाता हूं। ७५

मैंने अपने जीवनमें ऐसी बात कहनेका अपराध कभी नहीं किया जो मेरे मनमें न रही हो — मेरा स्वभाव सीधे हृदय तक पहुंचनेका है। आज मैं भले ऐसा करनेमें अक्सर असफल रहूं लेकिन मैं जानता हूं कि अन्तमें सत्य अवश्य सुना और समझा जाता है। मुझे अक्सर ऐसा अनुभव हुआ है। ७६

मैं एक नम्र किन्तु अत्यन्त सच्चा सत्यशोधक हूं। और जितने भी मेरे साथी सत्यशोधक हैं, उनको मैं अपने प्रयोगोंमें भागीदार बनाता हूं ताकि मैं अपनी गलतियां जान लूं और उन्हें दुरुस्त कर सकूं। मैं कबूल

करता हूं कि मेरे अनुमान और निर्णय कई बार गलत निकले हैं। और चूंकि ऐसे हर मौके पर मैंने अपना कदम पीछे हटा लिया इसलिए देशको कोई स्थायी हानि नहीं पहुंची। इसके विपरीत इससे अहिंसाका मूल सिद्धान्त पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक स्पष्ट हो गया और देशको भी कोई स्थायी नुकसान नहीं पहुंचा। ७७

मैं सत्यमें या सत्यके द्वारा सौन्दर्यको देखता और अनुभव करता हूं। समस्त सत्य — न केवल सत्यमय विचार किन्तु सत्यमय चेहरे, सत्यमय चित्र या सत्यमय गीत उच्च कोटिका सौन्दर्य रखते हैं। लोग सामान्यतः सत्यमें सौन्दर्यका दर्शन नहीं कर पाते। सामान्य मनुष्य सत्यमें निहित सौन्दर्यसे दूर भागता है और उसकी ओर ध्यान नहीं देता। सच्ची कलाका जन्म तभी होगा जब मनुष्य सत्यमें सौन्दर्यको देखने लगेंगे। ७८

सच्चे कलाकारके लिए वही मुख सुन्दर है जिसमें उसका बाहरी रूप कैसा भी हो आत्माके भीतरका सत्य प्रकाशित होता है। सत्यसे अलग कोई सौन्दर्य है ही नहीं। इसके विपरीत सत्य ऐसे रूपोंमें प्रकट हो सकता है जो बाहरसे बिलकुल सुन्दर न हों। हमें बताया गया है कि सुकरात अपने जमानेका सबसे सच्चा आदमी था पर उसका चेहरा यूनानमें सबसे कुरूप था। मेरे विचारसे वह सुन्दर था क्योंकि उसका सारा जीवन सत्यकी खोजका एक प्रयत्न था। और आप याद रखें कि उसके इस बाहरी रूपसे फीडियसको उसके भीतरी सत्यके सौन्दर्यकी कद्र करनेमें बाधा नहीं हुई, यद्यपि एक कलाकारकी तरह उसे बाह्य रूपोंमें भी सौन्दर्य देखनेका अभ्यास था। ७९

परन्तु सत्यके पूरे दर्शन इस देहसे असंभव हैं। उसकी तो सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है। इस क्षणजीवी देहके जरिये शाश्वत धर्मका साक्षात्कार — दर्शन संभव नहीं है। इसलिए अन्तमें श्रद्धाका उपयोग तो करना ही पड़ता है। ८

मैं केवल अपने ही भीतर दिव्य तत्त्व होनेका दावा नहीं करता। मेरा पैगम्बर होनेका भी दावा नहीं है। मैं तो केवल सत्यका एक नम्र शोधक

हूं और उसका पता लगानेके लिए दृढ़निश्चय हूं। ईश्वरका प्रत्यक्ष दर्शन करनेके लिए मैं किसी भी त्यागको बहुत बड़ा नहीं मानता। मेरी सारी प्रवृत्ति फिर वह सामाजिक हो, राजनीतिक हो, मानव-दयासे प्रेरित हो या नैतिक हो, इसी एक हेतुसे चलती है। और चूंकि मैं जानता हूं कि ईश्वरके दर्शन ऊंचे और शक्तिशाली मानवोंके बजाय अक्सर उसके छोटेसे छोटे और नीचेसे नीचे मानवोंमें हमें होते हैं, इसलिए मैं इनकी स्थितिको पहुंचनेका जीतोड़ प्रयत्न कर रहा हूं। और उनकी सेवाके बिना मैं ऐसा नहीं कर सकता। इसलिए मुझमें दबे और कुचले हुए वर्गोंकी सेवाकी इतनी उत्कट लगन है। और चूंकि राजनीतिमें प्रवेश किये बिना मैं यह सेवा नहीं कर सकता, इसीलिए मैंने राजनीतिमें प्रवेश किया है। इस प्रकार मैं मालिक नहीं हूं, मैं तो भारतका और उसके द्वारा सारी मानव-जातिका कल्याणसाधनाके बीच प्रयत्न करनेवाला गलतियां करनेवाला एक नम्र सेवक हूं। ८१

सत्य और पवित्रतासे बड़ा दूसरा कोई धर्म नहीं है। ८२

सच्चे धर्म और सच्ची नीतिका एक-दूसरेके साथ अटूट सम्बन्ध है। नीतिके लिए धर्मका वही महत्त्व है, जो पानीका जमीनमें बोये हुए बीजके लिए है। ८३

मैं ऐसे किसी भी धार्मिक सिद्धांतको माननेसे इनकार करता हूं, जिसे बुद्धि स्वीकार नहीं करती और जो नीतिके खिलाफ है। मैं विवेकहीन धार्मिक भावनाको भी तभी सहन करता हूं, जब वह नीतिके खिलाफ नहीं जाती। ८४

ज्यों ही हमने नीतिका आधार खोया कि हमारे धार्मिक जीवनका अन्त हुआ समझिये। धर्म और नीतिमें विरोध हो ही नहीं सकता। उदाहरणके लिए, झूठा, निष्ठुर और संयमहीन होते हुए कोई मनुष्य ईश्वरका कृपापात्र बननेका दावा नहीं कर सकता। ८५

हमारी इच्छाओं और हेतुओंको दो वर्गोंमें बांटा जा सकता है — स्वार्थपूर्ण और परोपकारपूर्ण। स्वार्थपूर्ण इच्छायें सब अनीतिमय हैं, जब कि दूसरोंका भला करनेके लिए अपनेको उन्नत बनानेकी इच्छा सचमुच नीतिमय है। सबसे बड़ा नैतिक कानून यह है कि हम निरन्तर मानव-जातिके भलेके लिए काम करें। ८६

अगर मेरा ऐसा कोई काम जिसके आध्यात्मिक होनेका मैं दावा करूं अव्यावहारिक साबित हो तो उसे मेरी असफलता ही समझना चाहिये। मेरा तो यह विश्वास है कि सबसे बड़ा आध्यात्मिक कार्य सच्चे अर्थोंमें सबसे अधिक व्यावहारिक होता है। ८७

धर्मतत्त्व बुद्धि और सत्यसे परे नहीं हो सकते। उनका हेतु बुद्धिको शुद्ध बनाना और सत्यको प्रकाशित करना है। ८८

भूल प्रायश्चित्तसे मुक्ति पानेका दावा नहीं कर सकती भले ही दुनियाके सारे धर्मग्रंथोंसे उसका समर्थन क्यों न किया जा सके। ८९

कोई झूठ अपने बहुत प्रचारके कारण सत्यका स्थान नहीं ग्रहण कर सकता और न सत्य इसलिए मिथ्या हो सकता कि उसे कोई देखता नहीं। ९

मैं यह नहीं मानता कि केवल पुरानी होनेसे ही हर पुरानी बात अच्छी होती है। प्राचीन परम्पराके सम्बन्धमें ईश्वरकी दी हुई तर्कबुद्धिका त्याग करनेको मैं नहीं कहता। मगर चाहे कितनी ही पुरानी परम्परा क्यों न हो नीतिसे विरुद्ध होने पर वह त्याज्य है। अस्पृश्यता शायद पुरानी परम्परा मानी जाये, बाल-वैधव्य और बाल-विवाहकी प्रथा भी पुरानी परम्परा मानी जाय और दूसरे कई भयंकर विश्वास तथा वहम भी शायद पुरानी परम्परायें मान जाय। लेकिन अगर मुझमें ताकत हो तो मैं उन्हें मिटा दूं। ९१

मैं मूर्तिपूजामें अविश्वास नहीं रखता। हां किसी मूर्तिको देखकर मेरे हृदयमें आदरकी भावना जाग्रत नहीं होती। लेकिन मेरा ख्याल है कि

मूर्तिपूजा मानवीय स्वभावका एक अंग है। हमारे मनमें स्थूल उपकरणका सहारा लेनेकी अभिलाषा बनी रहती है। ९२

प्रार्थनामें मैंने साकार मूर्तिका निषेध नहीं किया है बल्कि निराकारको उससे ऊंची जगह दी है। शायद इस तरहका भेद करना ठीक न हो। किसीको कुछ और किसीको कुछ अनुकूल आता है। इसमें मुकाबलेकी गुंजाइश नहीं हो सकती। ९३

मैं यह बात अनुभवसे कह रहा हूं कि मनुष्योंकी तरह शब्दोंके अर्थमें भी क्रमशः विकास होता है और उसीके अनुसार उनका अर्थ लगाना चाहिये। उदाहरणके लिए, संसारके महानसे महान शब्द — ईश्वर — का सब लोग एक ही अर्थ नहीं समझते। हर मनुष्यके अनुभवके अनुसार उसमें भेद होगा। ९४

अपने जीवनमें मुझे न तो विरोध दिखाई देता है और न पागलपन। हां यह बात सच है कि मनुष्य जिस प्रकार अपनी पीठको नहीं देख सकता उसी तरह वह अपने दोषको अपने पागलपनको भी नहीं देख सकता। परन्तु ज्ञानी लोगोंने धार्मिक मनुष्य और पागलमें भेद नहीं किया है। इसीलिए मैं यह सन्तोष मानकर बैठा हूं कि मैं पागल नहीं हूं बल्कि सचमुच धार्मिक पुरुष हूं। पर इसका इन्साफ तो मेरी मौतके बाद ही हो सकता है। ९५

जब मैं किसी गलती करनेवाले आदमीको देखता हूं तो मैं अपने-आपसे कहता हूं कि मैंने भी गलतियां की हैं जब मैं किसी विषय-लोलुप मनुष्यको देखता हूं तो मैं अपने-आपसे कहता हूं कि एक समय मैं भी ऐसा ही था। इस तरह मैं दुनियामें हर मानवके साथ आत्मीयता अनुभव करता हूं और मुझे लगता है कि जब तक हममें से छोटेसे छोटा मनुष्य भी सुखी नहीं होगा तब तक मैं सुखी नहीं हो सकता। ९६

अगर मैं किसी आदमीको उसकी पात्रतासे कम दूं तो मुझे अपने सर जनहार प्रभुके सामने इसका जवाब देना पड़ेगा। लेकिन अगर वह यह

जाने कि मैंने किसी आदमीको उसकी पात्रतासे अधिक दिया है तो मेरा विश्वास है कि वह मुझे आशीर्वाद देगा। ९७

हमेशा कार्यमें लगे रहनेके कारण मेरा जीवन आनन्दमय रहता है। मैं एक पक्षीके समान स्वतंत्र हूं क्योंकि मुझे इस बातकी चिंता नहीं रहती कि कल मेरा क्या होगा। यह विचार कि मैं ईमानदारीके साथ निरन्तर अपनी शारीरिक आवश्यकताओंसे लड़ रहा हूं मुझे टिकाये रखता है। ९८

जिस मानव-जातिका मैं एक सदस्य हूं उसकी अपूर्णताओंका मुझे इतना ज्यादा भान है कि मैं किसी मनुष्य पर गुस्सा हो ही नहीं सकता। मेरा उपाय यह है कि जहां कहीं मैं बुराईको देखूं वहां उसे दूर करनेका प्रयत्न करूं लेकिन बुरा काम करनेवालेको चोट न पहुंचाऊं — जिस प्रकार मैं यह नहीं चाहूंगा कि कोई मुझे उन गलतियोंके लिए चोट पहुंचाये जो मैं लगातार करता रहता हूं। ९९

मैं इसलिए आशावादी नहीं हूं कि मैं सत्यकी विजय होनेका कोई प्रमाण दे सकता हूं लेकिन इसका कारण मेरी यह अटल श्रद्धा है कि अन्तमें सत्यकी ही विजय होनी चाहिये। हमें प्रेरणा तो इस श्रद्धासे ही मिल सकती है कि अन्तमें सत्यकी ही जीत होनी चाहिये। १

मनुष्यकी क्षमता और शक्तिकी मर्यादा होती है। जिस क्षण वह ऐसा मानने लगता है कि वह सारे काम अपने हाथमें ले सकता है, उसी क्षण ईश्वर उसके अभिमानको चूर चूर करके उसे नम्र बना देता है। जहां तक मेरी अपनी बात है ईश्वरने मुझे इतनी नम्रता प्रदान की है कि मैं बालकों और दूध पीते शिशुओंकी ओर भी मददकी आशासे देख सकता हूं। १ १

महासागरमें रहनेवाला जलबिन्दु अपने जनककी महानता और विशालताका भागी बनता है, यद्यपि उसे इस बातका भान नहीं होता। परन्तु ज्यों ही वह जलबिन्दु महासागरसे अलग हो जाता है त्यों ही वह सूख जाता

है। जब हम यह कहते हैं कि जीवन पानीका बुलबुला है, तब हम कोई अतिशयोक्ति नहीं करते। १२

मैं इसलिए अदम्य आशावादी हूं कि मेरा अपने-आपमें पूरा विश्वास है। इससे मेरा अहंकार प्रकट होता है, है न? लेकिन मैं यह बात अत्यन्त नम्रतासे ही कहता हूं। मैं ईश्वरकी सर्वोच्च सत्तामें विश्वास रखता हूं। सत्यमें मेरा विश्वास है, इसलिए इस देशके भविष्य या मानव-जातिके भविष्यके विषयमें मुझे कोई शंका नहीं है। १३

मेरा धर्म संकुचित नहीं है। उसमें ईश्वरके छोटेसे छोटे प्राणीके लिए भी स्थान है। लेकिन वह धृष्टता और जाति, वर्ण या रंगके अभिमानसे परे है। १४

मेरा यह विश्वास नहीं है कि इस संसारमें एक धर्म हो सकता है या भविष्यमें कभी होगा। इसलिए मैं सब धर्मोंमें एक समान वस्तु खोजनेका और सब धर्मोंके लोगोंको परस्पर सहिष्णुता रखनेकी बात समझानेका प्रयत्न कर रहा हूं। १५

मैं यह मानता हूं कि आध्यात्मिक पूर्णता साधनेके लिए जीवनमें मन वचन और कर्मसे पाला जानेवाला पूर्ण ब्रह्मचर्य आवश्यक है। और जिस राष्ट्रमें ऐसे आदमी नहीं होते वह इस कमीके कारण अधिक कंगाल रहता है। १६

ईश्वरकी दृष्टिमें पापी और संत दोनों बराबर हैं। दोनोंको समान न्याय मिलेगा और दोनोंको आगे बढ़ने या पीछे हटनेका समान अवसर मिलेगा। दोनों उसकी सन्तान हैं, दोनों उसकी सृष्टि हैं। जो सन्त अपनेको पापीसे श्रेष्ठ समझता है, वह अपना सन्तपन खो देता है और पापीसे भी बुरा बन जाता है, क्योंकि पापीको यह ज्ञान नहीं होता कि वह क्या कर रहा है, जब कि सन्तको होता है या होना चाहिये। १७

हम अक्सर आध्यात्मिक ज्ञान और आध्यात्मिक सिद्धिका भेद नहीं समझते। आध्यात्मिकताका अर्थ शास्त्रोंको जानना और उन पर दार्शनिक

चर्चा करते रहना नहीं है। यह तो हृदयकी संस्कृतिका प्रकार अभिन्न विषय है। आध्यात्मिकता या आत्मशक्तिको प्राप्त करनेके लिए निर्भयताका होना बहुत जरूरी है। इसके लिए सबसे पहले निर्भय बनना होता है। कायरमें कभी नैतिक बल हो ही नहीं सकता। १०८

मनुष्यका यह कर्तव्य है कि वह ईश्वरकी सृष्टिके सभी प्राणियोंका भला चाहे और प्रार्थना करे कि भगवान उसे ऐसा करनेकी शक्ति दे। सब प्राणियोंका भला चाहनेमें ही मनुष्यका अपना भला समाया हुआ है। जो अपना या अपनी कौमका ही भला चाहता है वह खुदगरज है। उसका कभी भला नहीं होता। मनुष्यके लिए यह जरूरी है कि जिस बातको वह खूब अच्छी समझता है और जो दरअसल उसके लिए अच्छी है, उन दोनोंके बीचके फर्कको वह समझ ले। १०९

मैं ईश्वरके और इसलिए मनुष्य-जातिके पूर्ण एकत्वको मानता हूँ। हमारे शरीर यदि अनेक हैं तो क्या हुआ? आत्मा तो हमारे अन्दर एक ही है। सूर्यकी किरणें परावर्तनके द्वारा अनेक दिखाई देती हैं। परन्तु उनका उद्गम-स्थान तो एक ही है। इसलिए मैं न तो अपनेको अत्यन्त दुष्ट मनुष्यसे भी अलग कर सकता और न सज्जनोंके साथ मेरी तद्रूपताको ही इनकार कर सकता। ११०

अगर मैं डिक्टेटर होऊँ तो धर्म और राज्य दोनोंको एक-दूसरेसे अलग रखूँ। मुझे अपने धर्म पर पूरी श्रद्धा है। उसके लिए अपनी जान दे देनेमें भी मैं आगा-पीछा नहीं करूँगा। लेकिन मेरा धर्म मेरी अपनी चीज है। राज्यसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं। राज्य प्रजाके लौकिक कल्याण, स्वास्थ्य, वाहन तथा डाक-व्यवहार, विदेश-नीति, सिक्कोंके चलन वगैराकी देखभाल करेगा लेकिन आपके या मेरे धर्मकी नहीं। धर्म तो हरएकका व्यक्तिगत मामला है। १११

मैं अविश्वासियों और नास्तिकोंके बीच फिर गया हूँ। अविश्वासियोंके बीच रहने पर भी अभी तक मुझे सत्य मिला नहीं है। परन्तु इतना तो मुझे

लगता है कि मैं ईश्वर और सत्यके अधिक निकट पहुंचा हूं। इससे मेरी कितनी ही पुरानी [illegible] टूट भी गई हैं फिर भी मुझे इसका बिलकुल अफसोस नहीं होता। यह चीज मैं ईश्वरके समीप जानेकी जो बातें करता हूं उनका एक सबूत है। इसीलिए मैं सबको साफ बातें कह सकता हूं और लिख सकता हूं। जिन ११ व्रतोंका मैंने प्रतिपादन किया है, उन्हें मैं पूरी तरह आचरणमें ला सका हूं। यह ५ वर्षकी तपस्याका परिणाम है। वर्षोंसे जिस पवित्रता और सत्यके दर्शनोंके लिए मैं तरस रहा था उसकी झांकी मैंने इस मासमें की है। ११२

हम सिर्फ इतना ही जानते हैं कि हमें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिये और फलको ईश्वर पर छोड़ देना चाहिये। मनुष्य अपना भाग्य खुद बनानेवाला कहा जाता है। यह एक हद तक ही सही है। मनुष्य उसी हद तक अपना भाग्य खुद बना सकता है, जिस हद तक वह महान शक्ति जो हमारे सारे इरादों और योजनाओंको खतम करके अपनी योजनायें पूरी करती है उसे ऐसा करने दे। उस महान शक्तिको मैं ईश्वर, खुदा या गॉड कहकर नहीं पुकारता मैं उसे सत्य कहता हूं। पूर्ण सत्य तो सिर्फ उस महान शक्तिमें — जिसे मैं सत्य कहता हूं — ही समाया हुआ है। ११३

ईश्वरके नाम पर निर्दोष लोगों पर जुल्म करना सबसे बड़ा पाप है। इससे बड़ा दूसरा कोई पाप मैं नहीं जानता। ११४

जब एक ओर मैं अपनी अल्पताका और अपनी मर्यादाओंका विचार करता हूं और दूसरी ओर मुझसे रखी जानेवाली आशाओंका विचार करता हूं तो कुछ क्षणोंके लिए मैं स्तब्ध रह जाता हूं। परन्तु ज्यों ही मैं यह समझ लेता हूं कि ये आशायें मेरे — जो शुभ और अशुभका एक अनोखा मिश्रण है — महत्त्वकी द्योतक नहीं हैं बल्कि सत्य और अहिंसा जैसे अमूल्य गुणोंके महत्त्वकी द्योतक हैं — जिनका मेरे भीतर अत्यन्त अपूर्ण किन्तु औरोंकी तुलनामें अधिक बड़ा आविर्भाव हुआ है — तो मैं पुनः स्वस्थ बन जाता हूं। ११५

सत्य और अहिंसाको छोड़कर दुनियामें ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसका मैं देशके खातिर त्याग न कर सकूं। सारी दुनियाके खातिर भी मैं इन दोनों त्याग नहीं करूंगा। क्योंकि मेरे लिए सत्य ईश्वर है और अहिंसाके मार्गके सिवा सत्यको पानेका दूसरा कोई मार्ग नहीं है। मैं सत्य अथवा ईश्वरका त्याग करके भारतकी सेवा करना नहीं चाहता। क्योंकि मैं जानता हूं कि जो मनुष्य सत्यको छोड़ देता है वह अपने देशको और अपने प्रियसे प्रिय जनोंको भी छोड़ सकता है। १११

२

साधन और साध्य

जीवनके मेरे तत्त्वज्ञानमें साधन और साध्य पर्यायवाची शब्द हैं। दोनों एक-दूसरेका स्थान ले सकते हैं। १

लोग कहते हैं "साधन आखिर साधन ही है।" मैं कहूंगा "साधन ही आखिर सब-कुछ है।" जैसे साधन होंगे वैसा ही साध्य होगा। साधन और साध्यके बीच दोनोंको अलग करनेवाली कोई दीवार नहीं है। केवल सरजनहार प्रभुने साधनों पर नियंत्रण रखनेकी शक्ति हमें दी है (वह भी अत्यन्त सीमित मात्रामें) परन्तु साध्य पर नियंत्रण रखनेकी कोई शक्ति नहीं दी है। लक्ष्यकी सिद्धि ठीक साधनकी सिद्धिके अनुपातमें ही होती है। यह एक ऐसा सिद्धांत है जिसमें अपवादकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। २

अहिंसा और सत्य ऐसे ओतप्रोत—तानेबानेकी तरह एक-दूसरेमें मिले हुए—हैं जैसे सिक्केके दो रुख या चिकनी चकतीके दो पहलू। उनमें उलटा कौनसा और सीधा कौनसा यह कौन कह सकता है? फिर भी अहिंसाको हम साधन मानें और सत्यको साध्य। साधन हमारे बसकी बात है, इसलिए अहिंसा परम धर्म हुई और सत्य परमेश्वर हुआ। साधनकी चिन्ता हम करते रहेंगे तो साध्यके दर्शन किसी न किसी

दिन अमर करेंगे। इतना निश्चय किया कि जग जीत लिया। हमारे मार्गमें चाहे जो संकट आयें, बाह्य दृष्टिसे देखने पर हमारी चाहे जितनी हार होती दिखाई दे तो भी हम विश्वासको न छोड़ते हुए केवल एक ही मंत्रका जाप करें — सत्य है। वही है। वही एक परमेश्वर है। ३

मैं यह नहीं मानता कि हिंसात्मक छोटे रास्तोंसे सफलता मिलती है। मैं ऊंचे उद्देश्यकी चाहे जितनी प्रशंसा करूं और उनके साथ चाहे जितनी सहानुभूति दिखलाऊं, किन्तु श्रेष्ठसे श्रेष्ठ कार्यके लिए भी मैं हिंसात्मक पद्धतिका दृढ़ विरोधी हूं। अतएव हिंसावादियोंके और मेरे बीच मेलकी वास्तवमें कोई गुंजाइश ही नहीं है। इतना होने पर भी मेरा अहिंसा धर्म मुझे अराजकतावादियोंके साथ और अन्य सभी हिंसावादियोंके साथ संपर्क रखनेसे न केवल रोकता नहीं है बल्कि संपर्क रखनेके लिए मजबूर करता है। किन्तु यह संपर्क केवल इसी आशयसे है कि मैं उस गलतीसे उन्हें बचाऊं, जो मुझे गलत दिखाई देती है। क्योंकि मुझे अपने अनुभवसे यह विश्वास हो गया है कि शाश्वत कल्याण असत्य और हिंसासे कभी हो ही नहीं सकता। यदि मेरा यह विश्वास केवल एक भ्रम ही हो तो भी लोग यह स्वीकार करेंगे कि यह एक मनोहारी भ्रम है। ४

आप मानते हैं कि साधन और साध्यके बीच कोई सम्बन्ध नहीं है; यह बहुत बड़ी भूल है। इस भूलके कारण जो लोग धार्मिक माने गये हैं उन्होंने घोर कृत्य किये हैं। यह तो धतूरेका पौधा बोकर मोगरेके फूल पानेकी इच्छा करने जैसा हुआ। मेरे लिए तो समुद्रको पार करनेका साधन जहाज ही हो सकता है। अगर मैं पानीमें बैलगाड़ीको डाल दूं, तो वह गाड़ी और मैं दोनों समुद्रके तलमें पहुंच जायेंगे। जैसे देव वैसी पूजा — यह वाक्य खूब सोचने लायक है। इसका गलत अर्थ करके लोग भुलावेमें पड़ गये हैं। साधन बीज है और साध्य — प्राप्य वस्तु — पेड़ है। इसलिए जितना सम्बन्ध बीज और पेड़के बीच है उतना ही साधन और साध्यके बीच है। शैतानको भजकर मैं ईश्वर-भजनका फल पाऊं, यह कभी हो ही नहीं सकता। इसलिए यह कहना कि हमें तो ईश्वरको

ही मानना है, साधन भले ही शैतान हो — बिलकुल अज्ञानकी बात है। जैसी करनी वैसी भरनी। ५

समाजवाद एक सुन्दर शब्द है। जहां तक मैं जानता हूं, समाजवादमें समाजके सारे सदस्य बराबर होते हैं, न कोई नीचा और न कोई ऊंचा। किसी आदमीके शरीरमें सिर इसलिए ऊंचा नहीं है कि वह सबसे ऊपर है और पांवके तलुवे इसलिए नीचे नहीं हैं कि वे जमीनको छूते हैं। जिस तरह मनुष्यके शरीरके सारे अंग बराबर हैं, उसी तरह समाज-रूपी शरीरके सारे अंग भी बराबर हैं। यही समाजवाद है।

इस वादमें राजा और प्रजा, धनी और गरीब, मालिक और मजदूर सब बराबर हैं। इस तरह समाजवाद यानी अद्वैतवाद। उसमें द्वैत या भेदभावकी गुंजाइश ही नहीं है। सारी दुनियाके समाज पर नजर डालें तो हम देखेंगे कि हर जगह द्वैत ही द्वैत है। अद्वैत कहीं नामको भी दिखाई नहीं देता। मेरे अद्वैतवादमें वे सब एक हो जाते हैं, एकतामें समा जाते हैं।

इस वाद तक पहुंचनेके लिए हम एक-दूसरेकी ओर ताकते न बैठें। जब तक सारे लोग समाजवादी न बन जायं तब तक हम कोई कार्य न करें, अपने जीवनमें कोई फेरफार न करके भाषण देते रहें, पार्टियां बनाते रहें और बाज पक्षीकी तरह जहां शिकार मिल जाय वहां उस पर टूट पड़ें — यह समाजवाद हरगिज नहीं है। समाजवाद जैसी शानदार चीज झपट मारनेसे हमसे दूर ही जानेवाली है।

समाजवादकी शुरुआत पहले समाजवादीसे होती है। अगर एक भी ऐसा समाजवादी हो तो उस पर सिफर बढ़ाये जा सकते हैं। हरेक सिफरसे उसकी कीमत दस गुनी बढ़ती जायगी। लेकिन अगर पहला सिफर ही हो दूसरे शब्दोंमें अगर कोई आरंभ ही न करे, तो उसके आगे कितने ही सिफर क्यों न बढ़ाये जायं उनकी कीमत सिफर ही रहेगी। सिफरोंको लिखनेमें मेहनत और कागजकी बरबादी ही होगी।

यह समाजवाद बड़ी शुद्ध चीज है। इसलिए इसे पानेके साधन भी शुद्ध ही होने चाहियें। गन्दे साधनोंसे मिलनेवाली चीज भी गन्दी ही

होगी। इसलिए राजाको मारकर राजा और प्रजा समान नहीं बन सकेंगे। मालिकका सिर काटकर मजदूर मालिक नहीं हो सकेंगे। यही बात सब पर लागू की जा सकती है।

कोई असत्यसे सत्यको नहीं पा सकता। सत्यको पानेके लिए हमेशा सत्यका आचरण करना ही होगा। अहिंसा और सत्यकी तो जोड़ी है न? हरगिज नहीं। सत्यमें अहिंसा छिपी हुई है और अहिंसामें सत्य। इसलिए मैंने कहा है कि सत्य और अहिंसा एक ही सिक्केके दो पहलू हैं। दोनोंकी कीमत एक ही है। केवल पढ़नेमें ही फर्क है; एक तरफ अहिंसा है, दूसरी तरफ सत्य। संपूर्ण पवित्रताके बिना अहिंसा और सत्य टिक ही नहीं सकते। शरीर या मनकी अपवित्रताको छिपानेसे असत्य और हिंसा पैदा होगी ही।

इसलिए केवल सत्यवादी अहिंसक और पवित्र समाजवादी ही दुनियामें या हिंदुस्तानमें समाजवाद कायम कर सकते हैं। ६

आत्मशुद्धिका आध्यात्मिक शस्त्र जो अदृश्य होता है अपने आसपासके वायुमंडलमें शांति उत्पन्न करने तथा बाहरी बंधनोंको ढीला करनेका अत्यंत शक्तिशाली साधन है। यह सूक्ष्म और अदृश्य रूपमें काम करता है; यह एक तीव्र प्रक्रिया है यद्यपि यह लम्बी थकानेवाली और लम्बी प्रक्रिया मालूम हो सकती है। यह मुक्तिका सीधेसे सीधा अत्यंत निश्चित और अत्यंत त्वरित मार्ग है और उसके लिए कोई भी प्रयत्न बहुत बड़ा नहीं कहा जा सकता। उसके लिए आवश्यकता है श्रद्धाकी — वह श्रद्धा जो पर्वतकी तरह अचल है और जो किसी भी चीजसे हार नहीं मानती। ७

मेरे अपने देशवासियोंके कष्टोंको रोकनेसे अधिकतर मानव-स्वभावको पशुकी तरह क्रूर और निर्दय बननेसे रोकनेकी मुझे अधिक चिंता है। मैं जानता हूं कि जो लोग स्वेच्छासे कष्ट सहते हैं वे अपने आपको और संपूर्ण मानव जातिको ऊंचा उठाते हैं। लेकिन मैं यह भी जानता हूं कि जो लोग अपने विरोधियों पर विजय पाने या कमजोर राष्ट्रों अथवा कमजोर मनुष्योंका शोषण करनेके अविचारी प्रयत्नमें पशुओंकी तरह क्रूर बन जाते हैं वे न सिर्फ अपनेको नीचे गिराते हैं बल्कि सारी मानव जातिको नीचे

गिराते हैं। और मानव-स्वभावको क्रूरताके दलदलमें फंसा हुआ देखना मेरे लिए या अन्य किसीके लिए आनन्दकी बात नहीं हो सकती। अगर हम सब मानव उसी ईश्वरकी सन्तान हैं और हम सबमें वही दिव्य तत्त्व है तो हमें हर आदमीके पापमें भागीदार बनना चाहिये — फिर वह हमारी जातिका आदमी हो या अन्य किसी जातिका आदमी हो। आप समझ सकते हैं कि किसी भी मनुष्यके भीतर पशुको जगाना कितना घृणित कार्य है; तब फिर अंग्रेजोंके भीतर — जिनमें मेरे अनेक मित्र हैं — पशुको जगाना तो कितना अधिक घृणित कार्य होगा। ८

सत्याग्रहकी पद्धति अधिकसे अधिक स्पष्ट और सुरक्षित है; क्योंकि अगर ध्येय उच्चा न हो तो सत्याग्रहियोंको और केवल सत्याग्रहियोंको ही कष्ट भोगने पड़ते हैं। ९

४

अहिंसाका मार्ग

अहिंसा मनुष्य-जातिके हाथमें बड़ीसे बड़ी शक्ति है। मनुष्यने बुद्धि चातुर्यसे संहार और सर्वनाशके जो प्रबलसे प्रबल अस्त्र-शस्त्र बनाये हैं उनसे भी अहिंसा अधिक प्रबल शक्ति है। सर्वनाश और संहार मानव-धर्म नहीं है। मनुष्य आवश्यकता पड़ने पर अपने भाईके हाथों मरनेके लिए तैयार रह कर स्वतंत्रतासे जीता है, उसे मार कर कभी नहीं। प्रत्येक हत्या अथवा दूसरेको पहुंचाई गई चोट फिर उसका उद्देश्य कुछ भी रहा हो मानवताके खिलाफ एक अपराध है। १

अहिंसाकी पहली शर्त यह है कि जीवनके हर क्षेत्रमें सर्वत्र न्यायका व्यवहार हो। शायद मानव-स्वभावसे ऐसे न्यायकी आशा रखना बहुत अधिक होगा। लेकिन मैं ऐसा नहीं मानता। मानव-स्वभावकी ऊंचे उठने या नीचे गिरनेकी क्षमताके बारेमें किसीको सिद्धान्त बनाकर कुछ नहीं कहना चाहिये। २

जैसे हिंसाकी तालीममें मारना सीखना पड़ता है उसी तरह अहिंसाकी तालीममें मरना सीखना पड़ता है। हिंसामें भयसे मुक्ति नहीं मिलती किन्तु भयसे बचनेका इलाज ढूंढ़ना पड़ता है। अहिंसामें भयके लिए स्थान ही नहीं है। भयमुक्त होनेके लिए अहिंसाके उपासकको उच्च कोटिकी त्यागवृत्ति विकसित करनी चाहिये। चाहे जमीन जाये धन जाये शरीर भी जाये लेकिन इसकी वह परवाह ही न करे। जिसने सब प्रकारके भयको नहीं जीता वह पूर्ण अहिंसाका पालन नहीं कर सकता। इसलिए अहिंसाका पुजारी एक ईश्वरका ही भय रखे दूसरे सब भयोंको जीत ले। ईश्वरकी शरण ढूंढ़नेवालेको यह भान होना ही चाहिये कि आत्मा शरीरसे भिन्न है। और आत्माका भान होते ही क्षणभंगुर शरीरका मोह छूट जाता है। इस तरह अहिंसाकी तालीम हिंसाकी तालीमसे एकदम उलटी होती है। बाहरकी चीजोंकी रक्षाके लिए हिंसाकी आवश्यकता पड़ती है आत्माकी स्वमानकी रक्षाके लिए अहिंसाकी आवश्यकता होती है। ३

जो लोग हमसे प्रेम करते हैं केवल उन्हींसे यदि हम प्रेम करें, तो वह अहिंसा नहीं है। अहिंसा तभी कही जायगी जब हम अपनेसे नफरत करनेवालों पर भी अपना प्यार बरसायें। मैं जानता हूं कि प्रेमके इस महान नियमका अनुसरण करना कितना कठिन है। लेकिन क्या सभी अच्छे और बड़े काम करना कठिन नहीं होता? घृणा करनेवालेसे प्रेम करना सबसे ज्यादा कठिन है। लेकिन अगर हम करना चाहें तो ईश्वरकी कृपासे यह सबसे कठिन वस्तु भी आसान बन जाती है। ४

मैंने देखा है कि विनाशके बीच भी जीवन कायम रहता है, और इसलिए मेरा विश्वास है कि विनाशके नियमसे कोई बड़ा नियम अवश्य है। केवल उसी नियमके अधीन सुव्यवस्थित समाजकी रचना सम्भव होगी और जीवन जीने योग्य होगा। और अगर यह नियम ही जीवनका सच्चा नियम है, तो हम दैनिक जीवनमें उस पर अमल करना होगा। जहां कहीं भी विग्रह पैदा हो जहां भी आपको किसी विरोधीका सामना करना पड़े वहां आप उसे प्रेमसे जीतिये। मैंने उक्त नियम अपने जीवनमें इसी सादे ढंगसे कार्यान्वित किया है। इसका यह अर्थ नहीं कि मेरी तमाम मुश्किलें

गिरते हैं। और मानव-स्वभावको कृपाके वातावरणमें फला हुआ देखना मेरे लिए या अन्य किसीके लिए आश्चर्यकी बात नहीं हो सकती। अगर हम सब मानव उसी ईश्वरकी सन्तान हैं और हम सबमें वही दिव्य तत्त्व है तो हमें हर आदमीके पापमें साझीदार बनना चाहिये — फिर वह हमारी जातिका आदमी हो या अन्य किसी जातिका आदमी हो। आप समझ सकते हैं कि किसी भी मानवके भीतर पशुको जगाना कितना मुश्किल कार्य है; तब फिर अंग्रेजोंके भीतर — जिनमें मेरे अनेक मित्र हैं — पशुको जगाना तो कितना अधिक मुश्किल कार्य होगा। ८

सत्याग्रहकी पद्धति अधिकसे अधिक स्पष्ट और सुरक्षित है; क्योंकि अगर ध्येय सच्चा न हो तो सत्याग्रहियोंको और केवल सत्याग्रहियोंको ही कष्ट भोगने पड़ते हैं। ९

४

अहिंसाका मार्ग

अहिंसा मनुष्य-जातिके हाथमें बड़ीसे बड़ी शक्ति है। मनुष्यकी बुद्धि कल्पनाने संहार और सर्वनाशके जो प्रबलसे प्रबल अस्त्र-शस्त्र बनाये हैं उनसे भी अहिंसा अधिक प्रबल शक्ति है। सर्वनाश और संहार मानव-धर्म नहीं है। मनुष्य आवश्यकता पड़ने पर अपने भाईके हाथों मरनेके लिए तैयार रह कर स्वतंत्रतासे जीता है, उसे मार कर कभी नहीं। प्रत्येक हत्या अथवा दूसरेको पहुंचाई गई चोट फिर उसका उद्देश्य कुछ भी रहा हो मानवताके खिलाफ एक अपराध है। १

अहिंसाकी पहली शर्त यह है कि जीवनके हर क्षेत्रमें सर्वत्र न्यायपूर्ण व्यवहार हो। शायद मानव-स्वभावसे ऐसे न्यायकी आशा रखना बहुत अधिक होगा। लेकिन मैं ऐसा नहीं मानता। मानव-स्वभावकी ऊंचे उठने या नीचे गिरनेकी क्षमताके बारेमें किसीको निश्चित रूपसे कुछ नहीं कहना चाहिये। २

जैसे हिंसाकी तालीममें मारना सीखना जरूरी है, उसी तरह अहिंसाकी तालीममें मरना सीखना पड़ता है। हिंसामें भयसे मुक्ति नहीं मिलती किन्तु भयसे बचनेका इलाज ढूंढ़ना पड़ता है। अहिंसामें भयके लिए स्थान ही नहीं है। भयमुक्त होनेके लिए अहिंसाके उपासकको उच्च कोटिकी त्यागवृत्ति विकसित करनी चाहिये। चाहे जमीन जाय धन जाये शरीर भी जाये लेकिन इसकी वह परवाह ही न करे। जिसने सब प्रकारके भयको नहीं जीता वह पूर्ण अहिंसाका पालन नहीं कर सकता। इसलिए अहिंसाका पुजारी एक ईश्वरका ही भय रखे दूसरे सब भयोंको जीत ले। ईश्वरकी शरण ढूंढ़नेवालेको यह भान होना ही चाहिये कि आत्मा शरीरसे भिन्न है। और आत्माका भान होते ही क्षणभंगुर शरीरका मोह छूट जाता है। इस तरह अहिंसाकी तालीम हिंसाकी तालीमसे एकदम उल्टी होती है। बाहरकी चीजोंकी रक्षाके लिए हिंसाकी आवश्यकता पड़ती है, आत्माकी स्वमानकी रक्षाके लिए अहिंसाकी आवश्यकता होती है। ३

जो लोग हमसे प्रेम करते हैं केवल उन्हींसे यदि हम प्रेम करें, तो वह अहिंसा नहीं है। अहिंसा तभी कही जायगी जब हम अपनेसे नफरत करनेवालों पर भी अपना प्यार बरसायें। मैं जानता हूं कि प्रभुके इस महान नियमका अनुसरण करना कितना कठिन है। लेकिन क्या सभी अच्छे और बड़े काम करना कठिन नहीं होता? घृणा करनेवालेसे प्रेम करना सबसे ज्यादा कठिन है। लेकिन अगर हम करना चाहें तो ईश्वरकी कृपासे यह सबसे कठिन वस्तु भी आसान बन जाती है। ४

मैंने देखा है कि विनाशके बीच भी जीवन कायम रहता है, और इसलिए मेरा विश्वास है कि विनाशके नियमसे कोई बड़ा नियम अवश्य है। केवल उसी नियमके अधीन सुव्यवस्थित समाजकी रचना सम्भव होगी और जीवन जीने योग्य होगा। और अगर यह नियम ही जीवनका सच्चा नियम है, तो हमें दैनिक जीवनमें उस पर अमल करना होगा। जहां कहीं भी विग्रह पैदा हो जहां भी आपको किसी विरोधीका सामना करना पड़े वहां आप उसे प्रेमसे जीतिये। मैंने उक्त नियम अपने जीवनमें इसी भांति अमल कार्यान्वित किया है। इसका यह अर्थ नहीं कि मेरी तमाम मुश्किलें

रद्द हो गई है। लेकिन मैंने इतना देखा है कि प्रेमके कानूनने जो काम किया है वह विनाशके कानूनने कभी नहीं किया।

उदाहरणके लिए मैं क्रोध नहीं कर सकता ऐसी बात नहीं है, लेकिन मैं लगभग हर मौके पर अपने भावोंको वशमें रखनेमें सफल हो जाता हूं। परिणाम चाहे जो हो, लेकिन मेरे भीतर अहिंसाके कानूनका निरंतर और विचारपूर्वक पालन करनेके लिए सतत संघर्ष सदा चलता ही रहता है। ऐसा संघर्ष मनुष्यको अधिक बलवान बनाता है। जितना अधिक मैं इस कानूनका पालन करता हूं उतना ही अधिक मैं जीवनमें और विश्वकी योजनामें आनन्द अनुभव करता हूं। इससे मुझे ऐसी शांति मिलती है और कुदरतके रहस्योंका ऐसा अर्थ प्राप्त होता है, जिसका वर्णन करना मेरी शक्तिके बाहर है। ५

मैंने देखा है कि व्यक्तियोंकी तरह राष्ट्रोंका निर्माण भी [illegible] पीड़ा सहनेसे ही होता है, दूसरे किसी मार्गसे नहीं। आनंद दूसरोंको दुःखी बनानेसे नहीं मिलता बल्कि स्वयं स्वेच्छापूर्वक दुःख भोगनेसे मिलता है। ६

यदि हम विश्वके इतिहासके आदिकालसे लेकर हमारे अपने समय तकके क्रम पर नजर डालें तो हमें पता चलेगा कि मनुष्य अहिंसाकी तरफ लगातार बढ़ता चला जा रहा है। हमारे प्राचीन पूर्वज मानव-भक्षी थे। फिर एक समय ऐसा आया जब लोग मानव-भक्षणसे ऊब गये और पशु-पक्षियोंके शिकार पर गुजर करने लगे। आगे चलकर मनुष्यको आवारा शिकारीका जीवन व्यतीत करनेमें भी शर्म आने लगी। इसलिए वह खेती करने लगा और अपने भोजनके लिए मुख्यतः वह धरती-माता पर निर्भर हो गया। इस प्रकार एक खानाबदोशकी जिन्दगीको छोड़कर उसने सभ्य और स्थिर जीवन अपनाया, गांव और शहर बसाये और एक परिवारके सदस्यसे आगे बढ़कर वह समाज और राष्ट्रका सदस्य बन गया। ये सब उत्तरोत्तर बढ़ती हुई अहिंसा और घटती हुई हिंसाके चिह्न हैं। इससे उलटा होता तो जैसे बहुतसी निचली योनियोंके प्राणियोंकी जातियां लुप्त हो गई हैं वैसे ही मानव-जाति भी अब तक लुप्त हो गई होती।

पैगम्बरों और अवतारोंने भी थोड़ा-बहुत अहिंसाका ही पाठ पढ़ाया है। उनमें से एकने भी हिंसाकी शिक्षा देनेका दावा नहीं किया। और करते भी कैसे? हिंसा सिखानी नहीं पड़ती। पशुके नाते मनुष्य हिंसक है, और आत्माके रूपमें अहिंसक है। जब मनुष्यको आत्माका भान हो जाता है, तब वह हिंसक रह ही नहीं सकता। या तो वह अहिंसाकी ओर बढ़ता है या अपने विनाशकी ओर दौड़ता है। यही कारण है कि पैगम्बरों और अवतारोंने सत्य, मैत्रभाव, भ्रातृभाव और न्याय आदिके पाठ पढ़ाये हैं। ये सब अहिंसाके गुण हैं। ७

मेरा दावा है कि आज भी यद्यपि हमारे समाजकी रचनाका आधार सोच-समझकर अपनायी हुई अहिंसा नहीं है, सारे संसारमें आदमी एक दूसरेकी भलमनसाहत पर ही जी रहा है और अपनी सम्पत्तिको बचाये हुए है। अगर ऐसा न होता तो दुनियामें बहुत ही थोड़े और अतिशय क्रूर आदमी जिन्दा रहते। लेकिन सचाई यह नहीं है। परिवारोंमें परस्पर स्नेहके बन्धनसे बंधे रहते हैं और परिवारोंकी तरह ही सभ्य माने जानेवाले समाजोंमें मानव-समूह — राष्ट्र — भी परस्पर स्नेहके बन्धनोंमें बंधे हुए हैं। भेद इतना ही है कि वे जीवनमें अहिंसाके नियमको सर्वोपरि नहीं मानते। इसका मतलब यह हुआ कि अभी उन्होंने अहिंसाकी असीम शक्तियोंकी खोज ही नहीं की है। मैं यह कहूंगा कि अब तक सिर्फ अपनी जड़ताके कारण ही हमने यह मान लिया है कि अहिंसाका सम्पूर्ण पालन अपरिग्रह आदि संयम-सूचक व्रतोंको धारण करनेवाले कुछ इने-गिने लोग ही कर सकते हैं। यह बात सही है कि अहिंसाकी खोजका काम उसके मुट्ठीभर उपासक ही कर सकते हैं और वे ही उसकी अन्तर्निहित शक्तियोंका समय समय पर नया नया प्रयोग बता सकते हैं। फिर भी अगर अहिंसा मनुष्यों पर शासन करनेवाला एक सनातन नियम हो तो वह सबके लिए कल्याणकारी होना चाहिये। जो सतत असफलतायें हमारे सामने आती हैं वे इस नियमकी नहीं बल्कि इसका पालन करनेवालोंकी हैं। क्योंकि उनमें से कइयोंको तो यह पता तक नहीं होता कि वे जान-अनजाने इस नियमके अधीन बरत रहे हैं। जब मा अपने बच्चेके लिए खुद

खत्म हो गई है। लेकिन मैंने इतना देखा है कि प्रेमके कानूनने जो काम किया है वह विनाशके कानूनने कभी नहीं किया।

उदाहरणके लिए, मैं क्रोध नहीं कर सकता ऐसी बात नहीं है लेकिन मैं लगभग हर मौके पर अपने भावोंको वशमें रखनेमें सफल हो जाता हूं। परिणाम चाहे जो हो लेकिन मेरे भीतर अहिंसाके कानूनका निरन्तर और विचारपूर्वक पालन करनेके लिए जाग्रत संघर्ष सदा चलता ही रहता है। ऐसा संघर्ष मनुष्यको अधिक बलवान बनाता है। जितना अधिक मैं इस कानूनका पालन करता हूं उतना ही अधिक मैं जीवनमें और विश्वकी योजनामें आनन्द अनुभव करता हूं। इससे मुझे ऐसी शान्ति मिलती है और कुदरतके रहस्योंका ऐसा अर्थ प्राप्त होता है जिसका वर्णन करना मेरी शक्तिके बाहर है। ५

मैंने देखा है कि व्यक्तियोंकी तरह राष्ट्रोंका निर्माण भी आत्म-बलिदानकी पीड़ा सहनेसे ही होता है, दूसरे किसी मार्गसे नहीं। आनन्द दूसरोंको दुःखी बनानेसे नहीं मिलता बल्कि स्वयं स्वेच्छापूर्वक दुःख भोगनेसे मिलता है। ६

यदि हम लिखित इतिहासके आदिकालसे लेकर हमारे अपने समय तकके क्रम पर नजर डालें तो हमें पता चलेगा कि मनुष्य अहिंसाकी तरफ लगातार बढ़ता चला आ रहा है। हमारे प्राचीन पूर्वज मानवभक्षी थे। फिर एक समय ऐसा आया जब लोग मानव-भक्षणसे ऊब गये और पशु-पक्षियोंके शिकार पर गुजर करने लगे। आगे चलकर मनुष्यको आवारा शिकारीका जीवन व्यतीत करनेमें भी शर्म आने लगी। इसलिए वह खेती करने लगा और अपने भोजनके लिए मुख्यतः धरती-माता पर निर्भर हो गया। इस प्रकार एक खानाबदोशकी जिन्दगीको छोड़कर उसने सभ्य और स्थिर जीवन अपनाया, गांव और शहर बसाये और एक परिवारके सदस्यसे आगे बढ़कर वह समाज और राष्ट्रका सदस्य बन गया। ये सब उत्तरोत्तर बढ़ती हुई अहिंसा और घटती हुई हिंसाके चिह्न हैं। इससे उलटा होता तो जैसे बहुतसे निचली श्रेणीके प्राणियोंकी जातियां लुप्त हो गई हैं वैसे ही मानव-जाति भी अब तक लुप्त हो गई होती।

असंभव है, ऐसा कहना भी युगधर्मके विपरीत है। जो बातें सपनेमें भी नहीं सोची जा सकती थीं वे बातें रोज होती देखी जा रही हैं। असंभव निरंतर संभव होता जा रहा है। हिंसाके क्षेत्रमें जो आश्चर्यजनक आविष्कार इन दिनों हो रहे हैं वे हमें लगातार चकित कर रहे हैं। परन्तु मैं मानता हूं कि इससे कहीं अधिक अकल्पित और असंभव दिखाई देनेवाले आविष्कार अहिंसाके क्षेत्रमें किये जायेंगे। १०

मनुष्य और उसका काम दो अलग चीजें हैं। किसी तंत्रके खिलाफ झगड़ा शोभा देता है, लेकिन तंत्र चलानेवालेके खिलाफ झगड़नेका अर्थ है स्वयं अपने खिलाफ झगड़ना। क्योंकि हम सब एक ही कूचीसे बनाये गये हैं, एक ही ब्रह्माकी संतान हैं। तंत्रको चलानेवालेमें अनंत शक्ति भरी है। उसका अनादर—तिरस्कार—करनेमें उस शक्तिमाका अनादर होता है। इससे तंत्र चलानेवालेको और सारे जगतको नुकसान पहुंचता है। ११

अहिंसाका सिद्धांत एक सार्वभौम सिद्धांत है और विरोधी वातावरणके कारण उसका उपयोग सीमित नहीं होता। केवल उसकी सफलताकी कसौटी तभी होती है जब वह विरोधके बावजूद और विरोधके बीच भी अपना काम करे। अगर हमारी अहिंसा अपनी विजयके लिए शासकोंकी सद्भावना पर निर्भर करे, तब तो वह खोखली और निकम्मी ही मानी जायगी। १२

इस शक्तिके सफल उपयोगकी एकमात्र शर्त यह है कि हम आत्माके अस्तित्वको शरीरसे अलग मानें और आत्माकी अमरताको स्वीकार करें। और इस स्वीकृतिको जीती-जागती श्रद्धाका रूप देना चाहिये। यह केवल बुद्धिसे मानी हुई चीज नहीं रहनी चाहिये। १३

कुछ मित्रोंने मुझसे कहा है कि सत्य और अहिंसाका राजनीति और दुनियावी व्यवहारमें कोई स्थान नहीं है। मैं इससे सहमत नहीं हूं। व्यक्तिगत मोक्षके साधनोंके रूपमें सत्य और अहिंसाका मेरे लिए कोई उपयोग

मनुष्यको तैयार हो जाती है, तो वह अनजाने ही इस नियमका पालन करती है। मैं पिछले पचास वर्षोंसे लोगोंको यह समझाता रहा हूं कि वे इस नियमको समझ-बूझकर अपनायें और असफल होने पर भी इसके पालनमें दत्तचित्त बने रहें। पचास वर्षोंसे इस प्रयोगका परिणाम आश्चर्यजनक हुआ है और अहिंसामें मेरी श्रद्धा उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। मैं दावेके साथ कहता हूं कि लगातार प्रयत्न करते रहनेसे एक समय ऐसा आयेगा जब लोग सर्वत्र ईमानदारीसे कमाये हुए धनका स्वेच्छासे आदर करेंगे और उसकी रक्षामें सहायक होंगे। इसमें शक नहीं कि यह धन पापका धन न होगा। और उसमें असमानताओंका वह स्थूल प्रदर्शन भी न होगा जिससे आज हम घिरे हुए हैं। अहिंसाके पुजारीको अन्याय और अनीतिसे कमाये जानेवाले धनमें आसक्ति नहीं होनी चाहिये। क्योंकि उसके पास हिंसाका प्रतिकार करनेके लिए सत्याग्रह और असहयोगका अहिंसक अस्त्र मौजूद है। जहां कहीं इस अस्त्रका सच्चाईके साथ पर्याप्त उपयोग किया गया है, वहां हिंसक अस्त्रोंकी कोई आवश्यकता ही नहीं रह गई है। अहिंसाके संपूर्ण शास्त्रको जनताके सामने रखनेका दावा मैंने कभी नहीं किया। उसके लिए ऐसा दावा कभी किया भी नहीं जा सकता। जहां तक मैं जानता हूं किसी भी भौतिक शास्त्रके लिए, यहां तक कि गणित जैसे निश्चित शास्त्रके लिए भी इस तरहका दावा नहीं किया जा सकता। मैं तो अहिंसाका केवल एक शोधक ही हूं। ८

सत्याग्रहका प्रयोग करते हुए अत्यन्त प्रारंभिक कालमें मैंने देखा कि सत्यका पालन हमारे विरोधीके साथ हिंसक व्यवहार करनेकी इजाजत नहीं देता। वह विरोधीको धीरज और सहानुभूतिके साथ उसकी गलतीसे दूर हटानेका रास्ता बताता है। क्योंकि एक आदमीको जो सत्य मालूम होता है, वह दूसरेको गलत मालूम हो सकता है। और धीरजका अर्थ है स्वयं कष्ट उठाना। इसलिए सत्याग्रहके सिद्धान्तका अर्थ यह हुआ कि सत्यकी स्थापना विरोधीको दुःख देकर नहीं परन्तु खुद दुःख सहन करके की जाय। ९

आश्चर्यकी इस युगमें कोई यह नहीं कहेगा कि अमुक विचार नया है इसलिए वह निकम्मा है। इसी तरह अमुक कार्य कठिन है इसलिए वह

असंभव है ऐसा कहना भी युगधर्मके विपरीत है। जो बातें सपनेमें भी नहीं सोची जा सकती थीं वे बातें रोज होती देखी जा रही हैं। असंभव निरंतर संभव होता जा रहा है। हिंसाके क्षेत्रमें जो आश्चर्यजनक आविष्कार इन दिनों हो रहे हैं, वे हमें लगातार चकित कर रहे हैं। परंतु मैं मानता हूं कि इससे कहीं अधिक अकल्पित और असंभव दिखाई देनेवाले आविष्कार अहिंसाके क्षेत्रमें किये जायेंगे। १०

मनुष्य और उसका काम दो अलग चीजें हैं। किसी तंत्रके खिलाफ लड़ना शोभा देता है, लेकिन तंत्र चलानेवालेके खिलाफ लड़नेका अर्थ है स्वयं अपने खिलाफ लड़ना। क्योंकि हम सब एक ही कूचीसे बनाये गये हैं, एक ही ब्रह्माकी संतान हैं। तंत्रको चलानेवालेमें अनंत शक्ति भरी है। उसका अनादर — तिरस्कार — करनेमें उन शक्तियोंका अनादर होता है। इससे तंत्र चलानेवालेको और सारे जगतको नुकसान पहुंचता है। ११

अहिंसाका सिद्धांत एक सार्वभौम सिद्धांत है और विरोधी वातावरणके कारण उसका उपयोग सीमित नहीं होता। बल्कि उसकी सफलताकी कसौटी तभी होती है जब वह विरोधके बावजूद और विरोधके बीच भी अपना काम करे। अगर हमारी अहिंसा अपनी विजयके लिए शासकोंकी सद्भावना पर निर्भर करे, तब तो वह खोखली और निकम्मी ही मानी जायगी। १२

इस शक्तिके सफल उपयोगकी एकमात्र शर्त यह है कि हम आत्माके अस्तित्वका शरीरसे अलग मानें और आत्माकी अमरताको स्वीकार करें। और इस स्वीकृतिको जीती-जागती श्रद्धाका रूप लेना चाहिये। यह केवल बुद्धिसे मानी हुई चीज नहीं रहनी चाहिये। १३

कुछ मित्रोंने मुझसे कहा है कि सत्य और अहिंसाका राजनीति और दुनियावी व्यवहारमें कोई स्थान नहीं है। मैं इससे सहमत नहीं हूं। व्यक्तिगत मोक्षके साधनके रूपमें सत्य और अहिंसाका मेरे लिए कोई उपयोग

नहीं है। प्रतिदिनके जीवनमें उन्हें स्थान देने तथा उनका उपयोग करनेका प्रयोग मैं सदासे ही करता आया हूं। १४

जो मनुष्य सक्रिय रूपमें अहिंसाका पालन करता है, वह किसी भी जगह होनेवाले सामाजिक अन्यायके खिलाफ खड़ा हो सकता है। १५

सत्याग्रह या आत्मबलको अंग्रेजीमें पैसिव रेजिस्टेन्स कहा जाता है। जिन लोगोंने अपने अधिकार पानेके लिए खुद दुःख सहन किया था उनके दुःख सहनेके ढंगके लिए यह शब्द बरता गया है। उसका उद्देश्य लड़ाईके उद्देश्यसे उलटा है। जब मुझे कोई काम पसंद न आये और वह काम मैं न करूं तो उसमें मैं सत्याग्रह या आत्मबलका उपयोग करता हूं। मिसालके तौर पर, मुझ पर लागू होनेवाला कोई कानून सरकारने पास किया। मुझे वह पसंद नहीं है। अब अगर मैं सरकार पर आक्रमण करके वह कानून रद करवाता हूं तो कहा जायगा कि मैंने शरीर-बलका उपयोग किया। अगर मैं उस कानूनको स्वीकार ही न करूं और उस कारणसे होनेवाली सजा भुगत लूं तो कहा जायगा कि मैंने आत्मबल या सत्याग्रहसे काम लिया। सत्याग्रहमें मैं अपना ही कुछ त्याग करता हूं अपना ही बलिदान देता हूं।

यह तो सब कोई कहेंगे कि दूसरेका भोग (बलिदान) लेनेसे अपना भोग देना ज्यादा अच्छा है। इसके सिवा सत्याग्रहसे लड़ते हुए यदि लड़ाई गलत ठहरी तो सिर्फ लड़ाई छेड़नेवाला ही दुःख भोगता है। यानी अपनी भूलकी सजा वह खुद भोगता है। ऐसी कई घटनाएं बनी हुई हैं, जिनमें लोग गलतीसे शामिल हुए थे। कोई भी आदमी बेधड़क यह नहीं कह सकता कि अमुक काम खराब ही है। लेकिन जिसे वह खराब लगा उसके लिए तो वह खराब है ही। अगर ऐसा ही है तो फिर उसे वह काम नहीं करना चाहिये और उसके लिए दुःख भोगना चाहिये। यही सत्याग्रहकी कुंजी है। १६

अहिंसावादी उपयोगितावादका (अधिकतम लोगोंके अधिकतम हितका) समर्थन नहीं कर सकता। वह तो सर्वभूत हिताय यानी सबके अधिकतम

मानवके लिए ही प्रयत्न करेगा और इस आदर्शको सिद्ध करनेके प्रयत्नमें मर जायगा। इस तरह वह इसलिए मरना चाहेगा कि दूसरे जी सकें। आप मर कर दूसरोंके साथ साथ वह अपनी सेवा भी करेगा। सबके अधिकतम सुखमें अधिकांशका अधिकतम सुख भी मिला हुआ है और इसलिए अहिंसावादी और उपयोगितावादी दोनों अपने रास्ते पर कई बार मिलेंगे; किन्तु अन्तमें ऐसा अवसर भी आयेगा जब उन्हें अलग अलग रास्ते पकड़ने होंगे और एक-दूसरेका विरोध भी करना पड़ेगा। तर्कसंगत बना रहनेके लिए उपयोगितावादी अपना बलिदान कभी नहीं कर सकता। किन्तु अहिंसावादी अपना बलिदान देनेको भी हमेशा तैयार रहेगा। १७

शायद आप ऐसा कह सकते हैं कि अहिंसक विद्रोह कभी हो ही नहीं सकता और इतिहासमें ऐसा विद्रोह होनेका कोई उदाहरण नहीं मिलता। और, ऐसा उदाहरण दुनियाके सामने रखनेकी मैं अभिलाषा रखता हूँ और यह सपना देखा करता हूँ कि मेरा देश अहिंसाके द्वारा अपनी आजादी हासिल करेगा। और, मैं दुनियाके सामने बार बार यह दोहराना चाहूँगा कि अहिंसाकी कीमत पर मैं अपने देशकी आजादी नहीं खरीदूँगा। अहिंसाके साथ मेरा ऐसा अटूट संबंध बन गया है कि अहिंसाका मार्ग छोड़नेके बजाय मैं आत्महत्या कर लेना ज्यादा पसंद करूँगा। यहाँ मैंने सत्यका उल्लेख इसलिए नहीं किया कि एकमात्र अहिंसाके द्वारा ही सत्य प्रकट किया जा सकता है। १८

पिछले तीस बरसोंका, जिनमें से पहले आठ बरस दक्षिण अफ्रीकामें बीते थे, अनुभव मुझे इस महान आशासे भर देता है कि अहिंसाको अपनानेसे ही हिन्दुस्तानका और सारे जगतका भविष्य उज्ज्वल होगा। मानव-जातिके दलित और पीड़ित वर्गोंके साथ होनेवाले राजनीतिक तथा आर्थिक अन्यायोंका सामना करनेके लिए अहिंसाका मार्ग सबसे निर्दोष और फिर भी सबसे परिणामकारी मार्ग है। मैंने बचपनसे ही यह जाना है कि अहिंसा ऐसा गुण नहीं है, जिसका किसी एकान्त स्थानमें अकेला आदमी अपनी शांति और मोक्षके लिए पालन करे, बल्कि वह तो सारे समाजके लिए सदाचारका नियम है। अगर समाज मानव-प्रतिष्ठाकी रक्षा करने

मिटानेकी दिशामें प्राथमिक कदम उठानेसे भी सरकारने इनकार कर दिया। और इस तरह १९२ में मैं विद्रोही बन गया। तबसे मेरी यह मान्यता दिनोंदिन बढ़ती रही है कि प्रजाके लिए बुनियादी महत्त्व रखनेवाली चीजें केवल बुद्धिसे प्राप्त नहीं की जातीं, लेकिन उन्हें प्रजाको कष्ट-सहन द्वारा खरीदना पड़ता है। कष्ट-सहन मानव-प्राणियोंका कानून है; युद्ध जंगलका कानून है। लेकिन जंगलके कानूनकी अपेक्षा कष्ट-सहन विरोधीका हृदय परिवर्तन करनेकी तथा उसके अन्यथा बंद रहनेवाले कानोंको बुद्धिकी आवाज सुननेके लिए खोलनेकी अनन्त गुनी अधिक शक्ति रखता है। मैंने अन्यायको दूर करानेके लिए जितनी अरजियां लिखी हैं या परित्यक्त उद्देश्योंका जितना समर्थन किया है उतना शायद दूसरे किसीने नहीं किया होगा, और अनुभवके आधार पर मैं इस बुनियादी नतीजे पर आया हूं कि अगर हम सचमुच कोई महत्त्वपूर्ण काम कराना चाहते हों, तो हमें केवल बुद्धिको ही संतुष्ट नहीं करना चाहिये, बल्कि सामनेवालेके हृदयको भी हिलाना चाहिये। बुद्धिकी अपील केवल उसके मस्तिष्कको ही स्पर्श करती है, लेकिन उसके हृदयमें पैठनेका काम तो कष्ट-सहनसे ही संभव होता है। कष्ट-सहन मानवके भीतरकी सद्भावना और सहानुभूतिको जगा देता है। कष्ट-सहन ही मानव-जातिका सच्चा लक्षण है, तलवार या पशुबल नहीं। २

अहिंसा एक ऐसी शक्ति है जिसका सब कोई — बच्चे, नौजवान, स्त्री पुरुष या बुजुर्ग — समान रूपसे उपयोग कर सकते हैं। शर्त इतनी ही है कि प्रेमरूप भगवानमें उनकी जीती-जागती श्रद्धा हो और इसलिए सारे मानवों पर एकसा प्रेम हो। जब अहिंसाको जीवनके कानूनके रूपमें स्वीकार कर लिया जाता है, तब उसका उपयोग अलग अलग कार्योंमें ही नहीं होना चाहिये, बल्कि वह संपूर्ण जीवनमें व्याप्त हो जानी चाहिये। २१

अगर हमें अहिंसक बनना हो तो इस धरती पर हमें ऐसी किसी चीजकी इच्छा नहीं करनी चाहिये, जिसे नीचसे नीच या छोटेसे छोटे मनुष्य प्राप्त नहीं कर सकते। २२

अहिंसाका सिद्धांत इस बातको जरूरी बनाता है कि हम हर प्रकारके शोषणसे सर्वथा दूर रहें। २३

युद्धके खिलाफ मेरा विरोध मुझे इस हद तक नहीं ले जाता कि जो लोग युद्धमें शरीक होना चाहते हैं उनके रास्तेमें मैं रुकावटें डालूं। मैं उन्हें समझाता हूं उनके सामने अहिंसाका उत्तम मार्ग रखता हूं। उसके बाद वे चाहे वह मार्ग पसन्द करें। २४

मैं अपने आलोचकोंसे कहूंगा कि वे मेरे साथ केवल भारतके लोगोंके कष्टोंमें ही शामिल न हों बल्कि सारी दुनियाके लोगोंके — फिर वे युद्धमें लगे हुए हों या न हों — कष्टोंमें शामिल हों। आज दुनियामें जो मानव-संहार चल रहा है उसे मैं उदासीन बनकर नहीं देख सकता। मेरी यह अविचल श्रद्धा है कि आपसमें एक-दूसरेका संहार करना मानवकी प्रतिष्ठाको शोभा नहीं देता। मैं निःसंदेह कह सकता हूं कि इससे बाहर निकलनेका मार्ग जरूर है। २५

जब तक हम इस दुनियामें सशरीर मौजूद हैं तब तक पूर्ण अहिंसाका पालन असंभव है, क्योंकि हमारे रहनेके लिए कमसे कम थोड़ी जगह तो चाहिये ही। जब तक हम इस शरीरमें रहते हैं तब तक पूर्ण अहिंसा रेखागणितके बिन्दु या सरल रेखाकी तरह एक सिद्धांत ही बनी रहनेवाली है। लेकिन हम जीयें तब तक प्रतिक्षण हमें अहिंसाके पालनका प्रयत्न तो करना ही होगा। २६

जीव कैसा धर्म हो सकता है। किसी तरह इस देहको टिकाये रखनेके लिए भी हमें जीव तो लेना ही पड़ेगा जैसे भोजनके लिए साग पात, वनस्पति आदि लेना होगा और स्वास्थ्यके लिए जन्तुनाशक पदार्थों द्वारा मच्छरों आदिके प्राण लेने होंगे और हम यह भी मानते हैं कि ऐसा करनेमें अधर्म नहीं है। परमार्थके लिए भी हम हिंसक प्राणियोंका नाश करते हैं। ऐसा भी हो सकता है कि कुछ मामलोंमें मनुष्य-वध तकको धर्म समझा जाय। मान लीजिये कि पागलपनमें या नशेमें एक आदमी

ममी तलवार लेकर घूमता है और जो कोई सामने आये उसे काटता चला जाता है। उसे जिन्दा पकड़ लेनेकी शक्ति किसीमें नहीं है। अत जो आदमी उसे मार सकेगा वह परोपकारी माना जायेगा। २७

मै देख रहा हू कि हर प्रसग पर देहके आत्यन्तिक नाशके लिए स्वाभाविक सकोच बना रहता है। उदाहरणके लिए, पागल कुत्तेको बन्द करके मुझे मारनेकी सूचना है परन्तु मेरा दया-धर्म मेरे लिए यह वस्तु असम्भव बना सकता है। मै कुत्ते या मनुष्यको लाचारीसे तड़पते नहीं देख सकता। दु खसे तड़पते हुए मनुष्यको मै मारता नहीं क्योंकि उसके लिए मेरे पास आशाजनक इलाज है। तड़पते कुत्तेको मै मार डालूगा क्योंकि उसके लिए मेरे पास कोई आशाजनक इलाज नहीं है। मेरा बच्चा पागल कुत्तेके काटनेसे पागल हो जाय उसके रोगके लिए मेरे पास कोई आशाजनक इलाज न हो और वह दु खसे तड़पता हो तो उसके देहका अन्त लाना मै अपना धर्म समझूगा। वैद्यके ऊपर आधार रखनेके धर्मकी एक मर्यादा है। उपाय कर चुकनेके बाद हम दैवाधीन होते है। तड़पते हुए बालकके लिए किये जानेवाले इलाजोंमें आखिरी इलाज उसकी देहका अंत करना भी है। २८

अपने निषेधक अथवा रचनात्मक रूपमें अहिंसाका अर्थ होता है व्यापकसे व्यापक प्रेम बड़ीसे बड़ी उदारता। अगर मै अहिंसाका अनुयायी हू तो मुझे शत्रुको प्यार करना ही चाहिये। मै अपने अन्याय करनेवाले पिता या पुत्र पर जो नियम लागू करता वे ही नियम मुझे उस अन्यायी पर भी लागू करने चाहिये जो मेरा शत्रु है या मेरे लिए अजनबी है। इस सक्रिय अहिंसामें जरूरी तौर पर सत्य और निडरताका समावेश होता है। क्योंकि मनुष्य अपने प्रियजनको धोखा नहीं दे सकता इसलिए वह न तो उससे डरता है और न उसे डराता है। जीवनका दान सारे दानोंसे बड़ा है। जो मनुष्य सच्चे अर्थमें जीवनका दान देता है, वह संपूर्ण विरोध और शत्रुताको शान्त कर देता है। वह सम्मानपूर्ण समझौतेका मार्ग खोल देता है। और ऐसा कोई भी मनुष्य जो स्वयं भयका शिकार है, यह दान नहीं दे सकता। इसलिए उसे स्वयं निर्भय बन जाना चाहिये। कोई

मनुष्य कायर होकर अहिंसाका पालन नहीं कर सकता। अहिंसाका पालन सबसे बड़े साहसकी मांग करता है। २९

तलवारके त्यागके बाद अपने विरोधियोंको देनेके लिए मेरे पास प्रेमके प्यालेके सिवा दूसरा कुछ नहीं रहा। प्रेमका यह प्याला उनके सामने रखकर ही मैं उन्हें अपने पास खींचनेकी आशा रखता हूं। मैं मनुष्योंके बीच स्थायी शत्रुताकी कल्पना ही नहीं कर सकता। और पुनर्जन्ममें विश्वास रखनेके कारण मैं यह आशा रखता हूं कि अगर इस जन्ममें नहीं तो दूसरे किसी जन्ममें मैं सारी मानव जातिको अपने प्रेमपाशमें बांध सकूंगा। ३

प्रेम संसारकी सबसे प्रबल शक्ति होते हुए भी सबसे नम्र शक्ति है। ११

लोभरहित और द्वेषरहित कष्ट-सहनका सूर्य जब उगता है तब उसके सामने कठोरसे कठोर हृदय भी पिघल जाता है और घोरसे घोर अज्ञान भी नष्ट हो जाता है। १२

अहिंसा दुष्टताके खिलाफ संपूर्ण सच्चे युद्धका त्याग नहीं है। इसके विपरीत मेरी अहिंसा दुष्टता और प्रतिहिंसाके मुकाबले जो कि स्वभावतः दुष्टताको बढ़ाती है अधिक सक्रिय और अधिक सच्चा संग्राम है। मैं अनीतिका मानसिक और इसीलिए नैतिक विरोध करनेका विचार करता हूं। मैं अत्याचारीकी तलवारको उससे भी ज्यादा तेज तलवारसे बेकार बनाना नहीं चाहता बल्कि उसकी इस आशाको निर्मूल करके कि मैं उसका शारीरिक प्रतिकार करूंगा उसे बेकार बना देना चाहता हूं। मैं शारीरिक शक्तिके बदले आत्माकी शक्तिसे उसका प्रतिकार करूंगा जिससे वह भौंचक्का रह जायगा। पहले तो वह इस शक्तिसे चौंधिया जायगा और अंतमें वह इसका लोहा मान लेगा। इससे उसका सिर नीचा नहीं होगा बल्कि ऊंचा उठ जायगा। ऐसा कहा जा सकता है कि यह एक आदर्श स्थिति है। और वास्तवमें यह आदर्श स्थिति है भी। ११

अहिंसा व्यापक वस्तु है। हम हिंसाकी होलीके बीच घिरे हुए पामर प्राणी हैं। यह वाक्य असत्य नहीं है कि जीव जीव पर जीता है। मनुष्य एक क्षणके लिए भी बाह्य हिंसाके बिना जी नहीं सकता। खाते पीते उठते-बैठते सभी क्रियाओंमें इच्छा-अनिच्छासे वह कुछ न कुछ हिंसा तो करता ही रहता है। यदि इस हिंसासे छूटनेके लिए वह महा प्रयत्न करता है यदि उसकी भावनामें केवल अनुकंपा होती है, यदि वह सूक्ष्मसे सूक्ष्म जन्तुका भी नाश नहीं चाहता और यथाशक्ति उसे बचानेका प्रयत्न करता है, तो वह अहिंसाका पुजारी है। उसके कार्योंमें निरन्तर संयमकी वृद्धि होगी उसमें निरन्तर करुणा बढ़ती जायगी। किन्तु कोई देहधारी बाह्य हिंसासे सर्वथा मुक्त नहीं हो सकता।

फिर, अहिंसाकी तहमें ही अद्वैत-भावना निहित है। और, अगर प्राणीमात्रमें अभेद हो तो एकके पापका प्रभाव दूसरे पर पड़ता है, इस कारण भी मनुष्य हिंसासे बिलकुल अछूता नहीं रह सकता। समाजमें रहनेवाला मनुष्य समाजकी हिंसामें अनिच्छासे ही क्यों न हो साझेदार बनता है। दो राष्ट्रोंके बीच युद्ध छिड़ने पर अहिंसामें विश्वास रखनेवाले व्यक्तिका धर्म है कि वह उस युद्धको रोके। जो इस धर्मका पालन न कर सके जिसमें विरोध करनेकी शक्ति न हो जिसे विरोध करनेका अधिकार प्राप्त न हुआ हो वह युद्धकार्यमें सम्मिलित हो और सम्मिलित होते हुए भी उसमें से अपनेको अपने देशको और सारे संसारको उबारनेका हार्दिक प्रयत्न करे। १४

मैंने बंदूकधारीमें और उसकी मदद करनेवालेमें अहिंसाकी दृष्टिसे कोई भेद नहीं माना है। जो मनुष्य लुटेरोंकी टोलीमें उसकी आवश्यक सेवा करने उसका बोझ ढोने उसके लूटके समय पहरा देने तथा घायल होने पर उसकी सेवा करनेके लिए सम्मिलित होता है, वह लूटके मामलेमें लुटेरा जितना ही जिम्मेदार है। इस तरह सोचने पर फौजमें केवल घायलोंकी ही सार-संभाल करनेके काममें लगा हुआ व्यक्ति भी युद्धके दोषोंसे मुक्त नहीं हो सकता। १५

प्रश्न सूक्ष्म है। उसमें मतभेदके लिए अवकाश है। इसीलिए अहिंसा-धर्मके माननेवालों और सूक्ष्म रीतिसे उसका पालन करनेवालोंके सम्मुख यथासंभव स्पष्टतासे मैंने अपनी राय प्रकट की है। सत्यका आग्रही रूढ़िसे चिपटकर ही कोई काम न करे। वह अपने विचारों पर हठपूर्वक डटा न रहे, हमेशा यह मानकर चले कि उनमें दोष हो सकता है और जब दोषका ज्ञान हो जाय तब भारीसे भारी जोखिमोंको उठाकर भी उसे स्वीकार करे और उसके लिए प्रायश्चित्त भी करे। १६

अहिंसा प्रबल शक्तिका रूप ले इसके लिए उसका आरंभ मनसे होना चाहिये। मनके सहयोगके अभावमें केवल शरीरसे पाली जानेवाली अहिंसा कमजोरकी या कायरकी अहिंसा होगी। ऐसी अहिंसामें कोई शक्ति नहीं होगी। अगर हमारे मनमें विरोधीके लिए द्वेष और घृणा भरी हो और हम उससे बदला न लेनेका ढोंग करें, तो वह हमें ही अपना शिकार बनायेगा और सर्वनाशकी दिशामें ले जायगा। अगर दूसरोंको चोट न पहुंचानेकी दृष्टिसे हम केवल शारीरिक हिंसासे बचना चाहें तो भी कमसे कम मनमें घृणाका भाव न रखना तो जरूरी है ही — भले हम अपने भीतर सक्रिय प्रेमका विकास न भी कर पायें। १७

जो मनुष्य व्यापारमें धोखा देकर तिल तिल करके किसी आदमीकी जान लेनेकी बिलकुल परवाह नहीं करता या जो हथियारोंकी मददसे कुछ गायोंकी रक्षा करके कसाईका वध करनेकी कोई चिंता नहीं करता या जो देशका कल्पित भला करनेके लिए कुछ अधिकारियोंकी हत्या करनेमें जरा भी संकोच नहीं करता वह अहिंसाका अनुयायी नहीं है। ये सब काम घृणा कायरता और डरकी वजहसे मनुष्य करता है। १८

मैं हिंसाका विरोध इसलिए करता हूं कि वह जो भला करती दिखाई देती है वह केवल अस्थायी भला होता है। लेकिन हिंसा जो बुराई पैदा करती है वह स्थायी होती है। मैं इस बातको नहीं मानता कि प्रत्येक अंग्रेजको मार डालनेसे हिन्दुस्तानका थोड़ा भी भला होगा। अगर कोई आदमी कल प्रत्येक अंग्रेजकी हत्याका प्रबंध करा दे तो भी देशके करोड़ों लोग

उसी तरह दुःखपूर्ण जीवन बितायेंगे जिस तरह वे आज बिता रहे हैं। आज हमारे लोगोंकी जो स्थिति है उसके लिए अंग्रेजोंकी अपेक्षा हम देशवासी ज्यादा जिम्मेदार हैं। अगर हम केवल भला ही काम करें तो अंग्रेजोंमें बुरा काम करनेकी ताकत नहीं रहेगी। इसीलिए मैं आंतरिक सुधार पर निरंतर जोर देता हूं। ३९

इतिहास हमें यह शिक्षा देता है कि जिन्होंने निस्सन्देह प्रामाणिक उद्देश्योंके साथ लोभी मनुष्योंके विरुद्ध पशुबलका उपयोग करके उन्हें हरा दिया है वे स्वयं समय आने पर उन हारे हुए लोगोंके इस रोगके शिकार बन गये हैं। ४०

विरोधी शासकोंकी हिंसासे हमारे अपने देशवासियोंकी हिंसाकी दिशामें बढ़ जाना बड़ा आसान और स्वाभाविक कदम होगा जिन्हें हम अपने देशकी प्रगतिमें बाधक समझते हों। दूसरे देशोंमें हिंसक कार्योंका चाहे जो परिणाम आया हो लेकिन हमारे देशमें अहिंसाके तत्त्वज्ञानका विचार किये बिना भी इस बातको समझनेके लिए बुद्धि पर अधिक भार डालनेकी जरूरत नहीं है कि अगर हम प्रगतिको रोकनेवाली अनेक बुराइयोंसे समाजको मुक्त करनेके लिए हिंसाका आश्रय लेंगे तो हमारी कठिनाइयां ज्यादा बढ़ जायेंगी और हमारी आजादीका दिन दूर हो जायगा। सुधारोंकी आवश्यकताको न समझनेके कारण जो लोग सुधारोंके लिए तैयार नहीं हैं उन पर अगर सुधार जबरन् लादे जायेंगे तो वे क्रोधसे पागल हो जायेंगे और बदला लेनेके लिए विदेशियोंकी मदद चाहेंगे। क्या पिछले अनेक वर्षोंसे हमारी आंखोंके सामने ऐसा ही नहीं होता आया है, जिसका दुःखद स्मरण आज भी हमारे लिए वैसा ही ताजा है? ४१

अगर सरकारकी संगठित हिंसाके साथ मेरा कोई संबंध नहीं हो सकता तो देशके लोगोंकी असंगठित हिंसासे मेरा और भी कम संबंध हो सकता है। मैं इन दो हिंसाओंके बीच पिस कर मर जाना ज्यादा पसंद करूंगा। ४२

प्रश्न सूक्ष्म है। उसमें मतभेदके लिए अवकाश है। इसीलिए अहिंसा-धर्मके माननेवालों और सूक्ष्म रीतिसे उसका पालन करनेवालोंके सम्मुख यथासंभव स्पष्टतासे मैंने अपनी राय प्रकट की है। सत्यका आग्रही रूढ़िसे चिपटकर ही कोई काम न करे। वह अपने विचारों पर हठपूर्वक डटा न रहे, हमेशा यह मानकर चले कि उनमें दोष हो सकता है, और जब दोषका ज्ञान हो जाय तब भारीसे भारी जोखिमोंको उठाकर भी उसे स्वीकार करे और उसके लिए प्रायश्चित्त भी करे। १६

अहिंसा प्रबल इच्छाशक्ति रूप है। इसके लिए उसका आरंभ मनसे होना चाहिये। मनके सहयोगके अभावमें केवल शरीरसे पाली जानेवाली अहिंसा कमजोरकी या कायरकी अहिंसा होगी। उसमें अहिंसामें कोई शक्ति नहीं होगी। अगर हमारे मनमें विरोधीके लिए द्वेष और घृणा भरी हो और हम उससे बदला न लेनेका ढोंग करें, तो वह हमें ही अपना शिकार बनायेगा और सर्वनाशकी दिशामें ले जायगा। अगर दूसरेको चोट न पहुंचानेकी दृष्टिसे हम केवल शारीरिक हिंसासे बचना चाहें तो भी कमसे कम मनमें घृणाका भाव न रखना तो जरूरी है ही — भले हम अपने भीतर सक्रिय प्रेमका विकास न भी कर पायें। १७

जो मनुष्य व्यापारमें धोखा देकर भिन्न भिन्न तरहसे किसी आदमीकी जान लेनेकी बिलकुल परवाह नहीं करता या जो हथियारोंकी मददसे कुछ गायोंकी रक्षा करके कसाईका वध करनेकी कोई चिन्ता नहीं करता या जो देशका कल्पित भला करनेके लिए कुछ अधिकारियोंकी हत्या करनेमें जरा भी संकोच नहीं करता वह अहिंसाका अनुयायी नहीं है। ये सब काम घृणा कायरता और डरकी वजहसे मनुष्य करता है। १८

मैं हिंसाका विरोध इसलिए करता हूं कि वह जो भला करती दिखाई देती है वह केवल अस्थायी भला होता है। लेकिन हिंसा जो बुराई पैदा करती है वह स्थायी होती है। मैं इस बातको नहीं मानता कि प्रत्येक अंग्रेजको मार डालनेसे हिन्दुस्तानका थोड़ा भी भला होगा। अगर कोई आदमी हर प्रत्येक अंग्रेजकी हत्याको संभव बना दे तो भी देशके करोड़ों लोग

निकट पहुंच सकता हूं। मेरी जीवन-पद्धति जैसे भारतके विभिन्न धर्मोंके बीच कोई भेद नहीं करती वैसे ही दुनियाकी विभिन्न जातियोंके बीच भी कोई भेद नहीं करती। मेरी दृष्टिमें जगतके सारे मनुष्य समान हैं। ४६

मैं तो केवल एक नम्र साधक हूं। मैं सदा ठोकर पर ठोकर खाता रहता हूं तो भी सदा ऊपर चढ़नेका प्रयत्न करता हूं। मेरी निष्फलतायें मुझे पहलेसे अधिक जाग्रत बनाती हैं और मेरी श्रद्धाको अधिक गहरी बनाती हैं। श्रद्धाकी आंखसे मैं यह देख सकता हूं कि सत्य और अहिंसाके विविध धर्मोंके पालनमें ऐसी अमोघ शक्तियां भरी हैं जिनकी हमें बहुत ही धुंधली और अधूरी कल्पना है। ४७

मैं तो अदम्य आशावादी हूं। मेरा आशावाद मेरे इस विश्वास पर आधार रखता है कि व्यक्ति अहिंसाकी शक्तियोंका अमर्याद रूपमें विकास कर सकता है। आप अपने भीतर जितना अधिक अहिंसाका विकास करेंगे उतनी ज्यादा उसकी छूत फैलेगी — यहां तक कि वह आपके आसपासके सारे वातावरण पर छा जायगी और धीरे धीरे संपूर्ण जगतमें फैल सकती है। ४८

मेरी धारणाके अनुसार तो अहिंसा किसी भी रूप या किसी भी अर्थमें निष्क्रिय वृत्ति नहीं है। अहिंसाको जैसा मैं समझता हूं उसके अनुसार तो वह दुनियाकी सबसे बड़ी सक्रिय शक्ति है। अहिंसा एक सार्वभौम और सर्वोच्च नियम है। अपनी आधी शताब्दीके अनुभवमें मुझे एक भी परिस्थिति ऐसी याद नहीं है जब मुझे यह कहना पड़ा हो कि मैं लाचार हूं मेरे पास अहिंसाकी दृष्टिसे इसका कोई उपाय नहीं है। ४९

असलमें देखा जाय तो अहिंसाकी कसौटी ही यह है कि अहिंसक लड़ाईमें कोई कटुता या द्वेषभाव नहीं होता और अन्तमें शत्रु भी हमारे मित्र बन जाते हैं। दक्षिण अफ्रीकामें मुझे ऐसा ही अनुभव जनरल स्मट्सके साथ

मैं पचाससे भी अधिक वर्षोंसे निरन्तर वैज्ञानिक निश्चितताके साथ अहिंसा और उसकी संभावनाओंको आचरणमें उतारता आया हूं। मैंने परिवारमें, संस्थामें आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रमें — जीवनके हर क्षेत्रमें अहिंसाका उपयोग किया है। ऐसा एक भी उदाहरण मैं नहीं जानता जिसमें अहिंसा असफल रही हो। जहां वह कभी कभी असफल होती दिखाई दी वहां मैंने अपनी अपूर्णताओंको उन असफलताओंके लिए दोषी माना है। मैं अपने लिए पूर्णताका दावा नहीं करता। लेकिन मैं सत्यका जो ईश्वरका केवल दूसरा नाम है, उत्कट शोधक होनेका दावा जरूर करता हूं। उसकी शोधके प्रसंगमें ही मुझे अहिंसाके दर्शन हुए हैं। उसका प्रसार और प्रचार करना मेरे जीवनका मिशन है। इस मिशनको आगे बढ़ानेके लिए ही मैं जिन्दा हूं। ४३

मेरे लिए यह व्यक्तिगत संतोषकी बात है कि मुझ पर सामान्यतः उन लोगोंका भी स्नेह और विश्वास बना रहता है, जिनके सिद्धान्त और नीतियोंका मैं विरोध करता हूं। दक्षिण अफ्रीकावासियोंने मुझे अपने व्यक्तिगत विश्वास तथा मित्रताका पात्र बनाया। ब्रिटिश नीति तथा ब्रिटिश शासन-पद्धतिकी कड़ी निन्दा करने पर भी मुझ पर हजारों अंग्रेज पुरुष और स्त्रियां अपना प्रेम बरसाते हैं। और आधुनिक भौतिक सभ्यताको बुरी तरह धिक्कारने पर भी मेरे अमरीकी और यूरोपियन मित्रोंका मंडल सदा बढ़ता ही रहता है। यह भी अहिंसाकी ही विजय है। ४४

मेरा अनुभव जो दिन प्रतिदिन अधिक सबल और समृद्ध बनता जा रहा है मुझसे कहता है कि सत्य और अहिंसाका यथासंभव अधिकसे अधिक पालन किये बिना व्यक्ति या राष्ट्र शांतिका अनुभव नहीं कर सकते। बदला लेनेकी नीतिको कभी भी सफलता नहीं मिली है। ४५

अहिंसाके प्रति मेरा जितना प्रेम है उतना इस लोक या परलोककी दूसरी किसी भी वस्तुके प्रति नहीं है। केवल सत्यका मेरा प्रेम ही इस प्रेमकी बराबरी कर सकता है। सत्यको मैं अहिंसाका समानार्थक शब्द मानता हूं। इस अहिंसाके जरिये ही मैं सत्यका दर्शन कर सकता हूं और उसके

लेकिन यह भी सम्भव है कि अगर ईश्वर मेरी ऐसी क्रूर परीक्षा करे और सांपको मुझे डसने दे तो शायद मुझमें मर जानेकी हिम्मत न रहे, मेरे भीतरका पशु मुझ पर हावी हो जाय और मैं इस नाशवान शरीरको बचानेके लिए सांपकी हत्या करना चाहूं। मैं स्वीकार करता हूं कि अहिंसाकी श्रद्धा मेरी रग रगमें इतनी व्याप्त नहीं हो गई है कि मैं यह बात जोर देकर कह सकूं कि मैं सांपोंसे बिलकुल नहीं डरता और मुझमें सांपोंको अपना मित्र बनानेकी वह शक्ति आ गई है जिसे मैं अपने भीतर पैदा करना चाहूंगा। ५४

मैं विज्ञानकी प्रगतिके विरुद्ध नहीं हूं। इसके विपरीत मैं पश्चिमकी वैज्ञानिक भावनाका प्रशंसक हूं; और अगर मैं अपनी इस प्रशंसाको मर्यादित बनाता हूं तो उसका कारण यह है कि पश्चिमका वैज्ञानिक ईश्वरकी निचली कोटिके प्राणियोंका बिलकुल विचार नहीं करता। प्राणियोंकी चीर-फाड़की क्रियासे मैं अपनी समग्र आत्मासे घृणा करता हूं। विज्ञानके नाम पर और तथाकथित मानव-सेवाके नाम पर निर्दोष प्राणियोंका जो असह्य वध किया जाता है उसे मैं धिक्कारता हूं। निर्दोष प्राणियोंके रक्तसे कलंकित सारे वैज्ञानिक आविष्कारों और सारी शोधोंको मैं बिलकुल निरर्थक समझता हूं। अगर प्राणियोंकी चीर-फाड़के बिना रक्तकी गतिके सिद्धान्तकी शोध नहीं हो सकती थी, तो मानव-जातिका काम उस शोधके बिना भी अच्छी तरह चल सकता था। और मैं उस दिनको आते हुए स्पष्ट देख रहा हूं जब पश्चिमके प्रामाणिक वैज्ञानिक ज्ञानकी शोधकी मौजूदा पद्धतियोंकी मर्यादा बांध देंगे। ५५

अहिंसाको समझना कठिन है; उसे आचरणमें लाना तो हमारे जैसे कम-जोर मनुष्योंके लिए और भी ज्यादा कठिन है। हमें प्रार्थनाकी वृत्ति धारण करके नम्र भावसे काम करना चाहिये और भगवानसे निरंतर याचना करनी चाहिये कि वह हमारी विवेककी आंख खोल दे ताकि प्रतिदिन हमें जो विवेक-दृष्टि प्राप्त हो उसके अनुसार काम करनेके लिए हम सदा तैयार रहें। इसलिए शान्तिके उपासक और सत्याग्रहीके नाते आज

हुआ था। मेरे सबसे कटु विरोधी और आलोचकके रूपमें मेरे साथ उनका सम्बन्ध आरम्भ हुआ था। लेकिन आज वे मेरे घनिष्ठ मित्र हैं। ५

आत्मरक्षाके लिए मारनेकी शक्तिका होना बहुत जरूरी नहीं है। इसके लिए हमारे भीतर मरनेकी शक्ति होनी चाहिये। जब मनुष्य मरनेकी पूरी तैयारी कर लेता है उस समय वह विरोधीका हिंसक विरोध करनेकी इच्छा भी नहीं रखता। बल्कि मैं स्वतःसिद्ध सत्यके रूपमें यह बात रख सकता हूं कि मारनेकी इच्छा मरनेकी इच्छासे बिलकुल उलटी है। और इतिहास ऐसे मनुष्योंके उदाहरणोंसे भरा पड़ा है जिन्होंने हृदयमें साहस और ओठों पर करुणाका भाव लिये मर कर अपने हिंसक विरोधियोंके हृदयको पूरी तरह बदल दिया था। ५१

मैं तो अहिंसाके विज्ञानका एक नम्र शोधक-मात्र हूं। उसकी गुप्त शक्तियां कभी कभी मुझे उसी प्रकार अचरजमें डाल देती हैं जिस प्रकार वे मेरे साथियों और सहयोगियोंको अचरजमें डाल देती हैं। ५२

आजकल यह कहना एक फैशन-सा हो गया है कि समाजका संगठन या संचालन अहिंसाके रास्ते पर नहीं हो सकता। मेरा इस विषयमें मतभेद है। जब परिवारमें पिता अपने सुकुमार बच्चेको थप्पड़ मारता है तब बच्चा बदला लेनेका कोई विचार नहीं करता। बच्चा पिताकी बात मार पड़नेके कारण नहीं मानता बल्कि उसके बुरे व्यवहारसे पिताके प्रेमको जो आघात पहुंचता है उसे समझ जानेके कारण वह पिताकी बात मानता है। मेरी रायमें यही वह सिद्धान्त है जिसके आधार पर समाज चलता है या चलना चाहिये। जो बात परिवारके लिए ठीक है वही समाजके लिए भी ठीक होनी चाहिये क्योंकि समाज भी एक व्यापक परिवार ही है। ५३

मैं एक सांपकी भी जान लेकर खुद जीना नहीं चाहता। उसकी हत्या करनेके बजाय मैं उसे अपनेको डसने दूंगा और मर जाना पसंद करूंगा।

बुद्धने निर्ममतासे शत्रुकी छावनीमें ही युद्ध किया और अहंकारी पुरोहितोंको पराजित कर दिया। ईसाने जेरुसलेमके मन्दिरसे पैसेके लोभियोंको निकाल बाहर किया और ढोंगियों तथा फैरिसियों पर स्वर्गके अभिशाप बरसाये। बुद्ध और ईसा दोनों तीव्र सक्रिय लड़ाईमें विश्वास करते थे। लेकिन पुरोहितों और फैरिसियोंको दंड देते समय भी बुद्ध और ईसाके हर कार्यके पीछे करुणा और प्रेमके दर्शन होते थे। अपने शत्रुओंके खिलाफ एक उंगली भी उठाना वे पसंद नहीं करते थे। इसके विपरीत वे खुशी खुशी अपना बलिदान देनेको तैयार रहते थे परन्तु उस सत्यका बलिदान देना कभी पसंद नहीं करते थे जिसके लिए वे जीते थे। अगर बुद्धके प्रेमका प्रताप पुरोहितोंको झुकानेमें सफल न होता तो वे पुरोहितोंका विरोध करते करते मर जाना पसंद करते। ईसा एक संपूर्ण साम्राज्यका विरोध करते हुए कांटेका ताज पहनकर सूली पर चढ़े और उन्होंने अपने प्राणोंकी आहुति दे दी। जब मैं विदेशी सरकारका अहिंसक विरोध करता हूं तब मैं नम्र भावसे केवल उन महान विभूतियोंके कदमों पर ही चलता हूं। ९

सत्याग्रहका नियम है कि जब मनुष्यके पास और कोई साधन न रहे और उसकी बुद्धि थक कर बैठ जाय तब वह अपने शरीरको त्याग देनेका अन्तिम कदम उठाये। ११

अहिंसा आत्माका बल है और आत्मा अनश्वर है, अपरिवर्तनशील है और शाश्वत है। अणुबम भौतिक शक्तिका सबसे बड़ा रूप है और इस रूपमें वह नाश, अवोत्पत्ति और मृत्युके कानूनके अधीन है, जो भौतिक जगत पर शासन करता है। हमारे धर्मशास्त्र इस बातके प्रमाण हैं कि जब आत्मबल पूर्ण रूपसे जाग्रत हो जाता है तब वह अजेय और अदम्य बन जाता है। लेकिन उसकी पूर्ण जागृतिकी कसौटी और शर्त यह है कि यह हमारी रग रगमें व्याप्त हो जाना चाहिये और हमारे हर श्वाससे प्रकट होना चाहिये।

कठिन किसी भी संस्थाको जबरन् अहिंसक नहीं बनाया जा सकता। अहिंसा और सत्यको विधानमें नहीं लिखा जा सकता। उन्हें स्वेच्छाम

मेरा काम इतना ही है कि हमारी स्वतंत्रताको फिरसे प्राप्त करनेके आरोहणको आगे बढ़ानेमें मैं अधिकतम मानव अहिंसाकी उपासनामें लगा रहूं। और अगर भारत अहिंसक आचरण करके अपनी स्वतंत्रता पानेमें सफल हो जाय तो विश्वशान्तिकी दिशामें यह भारतका सर्वश्रेष्ठ योगदान होगा। ५१

सत्याग्रह ऐसी तलवार है जिसके दोनों ओर धार है। उसे चाहे जैसे काममें लिया जा सकता है। जो उसे चलाता है वह भी सुखी होता है और जिस पर वह चलायी जाती है वह भी सुखी होता है। वह खूनकी एक भी बूंद नहीं गिराती फिर भी उससे बड़ी दूर तक पहुंचनेवाला नतीजा आ सकता है। उसे कभी जंग नहीं लग सकता और न उसे कोई चुराकर ही ले जा सकता। ५७

कानून-भंग सविनय तभी कहा जायगा जब वह प्रामाणिक हो, आदरपूर्ण हो, संयत हो, कभी उद्धत न बने, किसी सुविचारित समझे हुए सिद्धान्त पर आधार रखनेवाला हो, उचित कारणोंसे किया गया हो और सबसे महत्त्वपूर्ण शर्त तो यह है कि उसके पीछे कोई दुर्भावना या घृणाका भाव न हो। ५८

ईसा मसीह, डैनियल और सॉक्रेटिस सत्याग्रह या आत्मबलके सुन्दर उदाहरण थे। ये सब लोग अपनी आत्माकी तुलनामें अपने शरीरको जरा भी महत्त्व नहीं देते थे। टॉल्सटॉय इस सिद्धान्तके सर्वोत्तम और उज्ज्वलतम (आधुनिक) व्याख्याकार थे। उन्होंने इस सिद्धान्तको केवल समझाया ही नहीं बल्कि उसके अनुसार अपना जीवन भी बिताया। यूरोपमें यह सिद्धान्त लोकप्रिय बना उससे बहुत पहले ही भारतमें लोग इसे समझ गये थे और इसके अनुसार सामान्यतः आचरण भी करते थे। यह समझना आसान है कि शरीर-बलसे आत्मबल अनंत गुना श्रेष्ठ है। अगर लोग अन्याय और अत्याचारको दूर करनेके लिए आत्मबलका सहारा लें तो आजका बहुतसा दुःख-दर्द टल जाय। ५९

बुद्धने निर्भयतासे शत्रुकी छावनीमें ही युद्ध किया और अहंकारी पुरोहितोंको पराजित कर दिया। ईसाने जेरुसलेमके मंदिरसे पैसेके लोभियोंको निकाल बाहर किया और ढोंगियों तथा फैरिसियों पर स्वर्गके अभिशाप बरसाये। बुद्ध और ईसा दोनों तीव्र सक्रिय कार्योंमें विश्वास करते थे। लेकिन पुरोहितों और फैरिसियोंको उस वेळे समय भी बुद्ध और ईसाके हर कार्यके पीछे करुणा और प्रेमके दर्शन होते थे। अपने शत्रुओंके खिलाफ एक उंगली भी उठाना वे पसंद नहीं करते थे। इसके विपरीत वे खुशी खुशी अपना बलिदान देनेको तैयार रहते थे, परन्तु उस सत्यका बलिदान देना कभी पसंद नहीं करते थे जिसके लिए वे जीते थे। अगर बुद्धके प्रेमका प्रताप पुरोहितोंको झुकानेमें सफल न होता, तो वे पुरोहितोंका विरोध करते करते मर जाना पसंद करते। ईसा एक संपूर्ण साम्राज्यका विरोध करते हुए कांटोंका ताज पहनकर सूली पर चढ़े और उन्होंने अपने प्राणोंकी आहुति दे दी। जब मैं विदेशी सरकारका अहिंसक विरोध करता हूं तब मैं नम्र भावसे केवल उन महान शिक्षकोंके कदमों पर ही चलता हूं। १

सत्याग्रहका नियम है कि जब मनुष्यके पास और कोई साधन न रहे और उसकी बुद्धि थक कर बैठ जाय तब वह अपने शरीरको त्याग देनेका अन्तिम कदम उठाये। ११

अहिंसा आत्माका बल है और आत्मा अनश्वर है, अपरिवर्तनशील है और शाश्वत है। अणुबम भौतिक शक्तिका सबसे बड़ा रूप है और इस रूपमें वह नाश, अधोगति और मृत्युके कानूनके अधीन है, जो भौतिक जगत पर शासन करता है। हमारे धर्मशास्त्र इस बातके प्रमाण हैं कि जब आत्मबल पूर्ण रूपसे जाग्रत हो जाता है तब वह अजेय और अदम्य बन जाता है। लेकिन उसकी पूर्ण आत्मिकी कसौटी और शर्त यह है कि वह हमारी रग रगमें व्याप्त हो जाना चाहिये और हमारे हर श्वाससे प्रकट होना चाहिये।

लेकिन किसी भी संस्थाको जबरन् अहिंसक नहीं बनाया जा सकता। अहिंसा और सत्यको नियमन नहीं किया जा सकता। उन्हें स्वेच्छासे

मनुष्यको शास्त्रोंके कुएमें डूब नहीं मरना है परन्तु उसे शास्त्रोंके विशाल महासागरमें गोते लगाना है और उसमें से मोती खोज निकालना है। हर कदम पर उसे विवेकका उपयोग करके जानना होगा कि अहिंसा क्या है और हिंसा क्या है। इसमें लज्जा या कायरताके लिए कोई गुंजाइश नहीं है। (गुजराती) कवि प्रीतमने गाया है "हरिनो मारग छे शूरानो नहीं कायरनुं काम जोने — "ईश्वरके पास पहुंचानेवाला मार्ग बहादुरोंका मार्ग है न कि कायरोंका। १४

किसीको पसंद न आनेवाले वचन कहना या लिखना खास करके जब वक्ता या लेखक उन्हें सच्चा मानता हो निश्चय ही हिंसा नहीं है। हिंसाकी मूल जड़ है विचार वाणी या कार्यके पीछे हिंसक हेतु होना — अर्थात् विरोधीको चोट पहुंचानेका इरादा होना।

औचित्यके झूठे विचारोंके कारण या दूसरेके हृदयको पीड़ा पहुंचानेके भयके कारण बहुत बार लोग मनकी सच्ची बात कहनेमें हिचकिचाते हैं और अन्तमें दम्भी बन जाते हैं। अगर हमें व्यक्तियों समाजों या राष्ट्रोंमें विचारकी अहिंसाका विकास करना हो तो सत्य बात कहनी ही चाहिये भले उस समयके लिए वह कितनी ही कठोर या कड़वी क्यों न लगे। १५

इस दुनियामें कोई भी कार्य कारणके बिना कोई काम हुआ नहीं है। मैं 'पैसिव रेजिस्टन्स' — निष्क्रिय विरोध — शब्दप्रयोगको इसलिए स्वीकार नहीं करता कि वह सत्याग्रहकी भावनाको प्रकट करनेमें अपर्याप्त है और उसका अर्थ निर्बलका हथियार किया जाता है। १६

अहिंसा प्रधान वर्गोंकी क्षमताको पहचान मानकर चलती है। वह हमारी बदला लेनेकी वृत्ति पर शासन रखकर तथा जान-बूझकर लगाया हुआ अंकुश है। परन्तु निष्क्रिय होकर भीरुताके जैसे असहाय बनकर आत्म-समर्पण करनेसे तो बदला लेना कहीं ज्यादा अच्छा है। क्षमा उससे भी बड़ी चीज है। बदलेकी भावना भी एक कमजोरी है। बदला लेनेकी इच्छा वास्तविक

या आत्मिक हानिके भयसे उत्पन्न होती है। जब कुत्ता डरता है तभी वह भौंकता और काटता है। एक आदमीको जिसे संसारमें किसीसे भय नहीं है उस आदमी पर क्रोध करना भी एक झंझट ही मालूम होगा जो उसे हानि पहुंचानेकी विफल चेष्टा कर रहा हो। ५७

अहिंसा और कायरता कभी साथ नहीं चलती। मैं पूरी तरह शस्त्रसज्जित मनुष्यके हृदयसे कायर होनेकी कल्पना कर सकता हूं। हथियार रखना कायरता नहीं तो डरका होना तो प्रकट करता ही है। परन्तु सच्ची अहिंसा शुद्ध निर्भयताके बिना असंभव है। ५८

मेरा अहिंसा-धर्म एक अत्यन्त सक्रिय शक्ति है। उसमें कायरता अथवा निर्बलताका भी कोई स्थान नहीं है। किसी हिंसक मनुष्यके बारेमें तो किसी दिन अहिंसक बननेकी आशा रखी जा सकती है परन्तु कायर मनुष्यके बारेमें ऐसी आशा कभी नहीं रखी जा सकती। इसलिए मैंने अनेक बार यह कहा है कि अगर हम अपने आपको अपनी स्त्रियोंको और अपने पूजास्थानोंको कष्ट-सहनकी अर्थात् अहिंसाकी शक्तिसे बचाना नहीं जानते तो हमें अवश्य लड़कर तो — यदि हम वास्तवमें पुरुष हैं — इन सबको बचानेका सामर्थ्य हममें होना ही चाहिये। ५९

बेतियाके पासके एक गांवके लोगोंने मुझसे कहा कि जब पुलिसके जवान उनके घरोंको लूट रहे थे और उनकी स्त्रियोंको सता रहे थे तब वे वहांसे भाग गये थे। जब उन्होंने मुझसे यह कहा कि आपने हमें अहिंसक बने रहनेको कहा था इसीलिए हम भाग गये थे तब मेरा सिर शरमसे झुक गया। मैंने उन्हें इस बातका विश्वास कराया कि मेरी अहिंसाका ऐसा अर्थ नहीं है। मैंने तो उनसे यह आशा रखी थी कि वे अपने आश्रितोंको हानि पहुंचानेके काममें लगी हुई बड़ीसे बड़ी सत्ताको भी ऐसा करनेसे रोकेंगे और बदला लिये बिना मृत्यु तकका खतरा उठानेको भी तैयार रहेंगे लेकिन तूफानके केन्द्रको छोड़कर भागेंगे नहीं। अपनी संपत्ति सम्मान या धर्मको हथियारोंकी मददसे बचानेमें काफी बहादुरी और मर्दानगी है। अत्याचारीको

चोट पहुंचानेकी इच्छा रखे बिना इन सबकी रक्षा करनेमें अधिक बहादुरी या अधिक उदात्तता है। लेकिन अपनी रक्षाके लिए कर्तव्यका स्थान छोड़कर संपत्ति सम्मान या धर्मको अन्यायीकी दया पर छोड़नेमें कायरता है, अस्वाभाविकता है और सम्मानका भंग है। जो लोग मरनेकी कला जानते हैं उन लोगों तक मैं अपना अहिंसाका सन्देश पहुंचा सकता हूं; मृत्युसे डरनेवालों तक यह सन्देश पहुंचानेका मुझे कोई रास्ता नहीं मिलता। ७०

एक सम्पूर्ण जातिको निर्बल और नपुंसक बनानेकी अपेक्षा मैं हिंसाका खतरा उठाना हजार बार पसन्द करूंगा। ७१

मेरे अहिंसा-धर्ममें खतरेके वक्त अपने प्यारोंको मुसीबतमें छोड़कर भाग खड़े होनेके लिए जगह नहीं है। मारना या कायरतासे भाग खड़ा होना — इनमें से मुझे यदि किसीको पसंद करना पड़े तो मेरा उसूल कहता है कि मारनेका — हिंसाका — रास्ता पसंद करो। क्योंकि अगर मैं अंधेको कुदरतकी शोभा देखना सिखा सकूं तो ही नामर्दको अहिंसा धर्म सिखा सकूंगा। अहिंसा बहादुरीकी चरम सीमा है। और मेरा अनुभव है कि हिंसाके मार्गसे तालीम पानेवालोंके सामने अहिंसाकी श्रेष्ठता साबित करनेमें मुझे कठिनाई नहीं हुई। पहले जब मैं खुद डरपोक था मैं भी हिंसाके भाव रखता था। लेकिन ज्यों-ज्यों मेरा डरपोकपन दूर होने लगा त्यों-त्यों मैं अहिंसाकी कीमत समझने लगा। ७२

जो आदमी मरनेसे डरता है और जिसमें सामना करनेकी ताकत नहीं है उसे अहिंसाका पाठ नहीं सिखाया जा सकता। असहाय चूहेको अहिंसक नहीं कह सकते क्योंकि वह तो सदा ही बिल्लीके मुंहका ग्रास बना रहता है। अगर उसमें ताकत होती तो वह हत्यारी बिल्लीको खुद खा जाता। परन्तु वह तो बिल्लीको देखकर हमेशा बिलमें छिपनेको भागता है। हम उसे कायर नहीं कहते क्योंकि प्रकृतिने उसका स्वभाव ही ऐसा बनाया है। लेकिन जो मनुष्य खतरेके सामने चूहेके जैसा बरताव करता है, उसे कायर कहा जाय तो ठीक ही है। उसके हृदयमें हिंसा और

या आर्थिक हानिके भयसे उत्पन्न होती है। जब घृणा करता है तभी वह सोचता और जानता है। एक आदमीका जिसे संसारमें किसीसे भय नहीं है उस आदमी पर क्षमा करना भी एक प्रकार ही मालूम होगा जो उसे हानि पहुंचानेकी निष्फल चेष्टा कर रहा हो। ९७

अहिंसा और कायरता कभी साथ नहीं चलतीं। मैं पूरी तरह शस्त्रसज्जित मनुष्यके हृदयमें कायर होनेकी कल्पना कर सकता हूं। हथियार रखना कायरता नहीं तो डरका होना तो प्रकट करती ही है। परन्तु सच्ची अहिंसा शुद्ध निर्भयताके बिना असंभव है। ९८

मेरा अहिंसा-धर्म एक अत्यंत सक्रिय शक्ति है। उसमें कायरता अथवा निर्बलताका भी कोई स्थान नहीं है। किसी हिंसक मनुष्यके बारेमें तो किसी दिन अहिंसक बननेकी आशा रखी जा सकती है परन्तु कायर मनुष्यके बारेमें ऐसी आशा कभी नहीं रखी जा सकती। इसलिए मैंने अनेक बार यह कहा है कि अगर हम अपने आपको अपनी स्त्रियोंको और अपने पूजास्थानोंको कष्ट-सहनकी अर्थात् अहिंसाकी शक्तिसे बचाना नहीं जानते तो हममें लड़कर तो — यदि हम वास्तवमें पुरुष हैं — इन सबको बचानेका सामर्थ्य हममें होना ही चाहिये। ९९

बेतियाके पासके एक गांवके लोगोंने मुझसे कहा कि जब पुलिसके जवान उनके घरोंको लूट रहे थे और उनकी स्त्रियोंको सता रहे थे तब वे वहांसे भाग गये थे। जब उन्होंने मुझसे यह कहा कि आपने हमें अहिंसक बने रहनेका कहा था इसीलिए हम भाग गये थे तब मेरा सिर शरमसे झुक गया। मैंने उन्हें इस बातका विश्वास कराया कि मेरी अहिंसाका ऐसा अर्थ नहीं है। मैंने तो उनसे यह आशा रखी थी कि वे अपने आश्रितोंको हानि पहुंचानेके काममें लगी हुई बड़ीसे बड़ी सत्ताको भी ऐसा करनेसे रोकने और बदला लिये बिना मृत्यु तकका खतरा उठानेको भी तैयार रहते लेकिन तूफानके केन्द्रको छोड़कर भागेंगे नहीं। अपनी संपत्ति सम्मान या धर्मको हथियारोंकी मददसे बचानेमें काफी बहादुरी और जवांमर्दी है। अन्यायीको

चोट पहुँचानेकी इच्छा रखे बिना इन सबकी रक्षा करनेमें अधिक बहादुरी या अधिक उदारता है। लेकिन अपनी रक्षाके लिए कर्तव्यका स्थान छोड़कर सम्पत्ति सम्मान या धर्मको अन्यायीकी दया पर छोड़नेमें कायरता है अस्वाभाविकता है और सम्मानका भंग है। जो लोग मरनेकी कला जानते हैं उन लोगों तक मैं अपना अहिंसाका सन्देश पहुँचा सकता हूँ मृत्युसे डरनेवालों तक यह सन्देश पहुँचानेका मुझे कोई रास्ता नहीं मिलता। ७०

एक सम्पूर्ण जातिको निर्वीर्य और नपुंसक बनानेकी अपेक्षा मैं हिंसाका खतरा उठाना हजार बार पसन्द करूँगा। ७१

मेरे अहिंसा-धर्ममें खतरेके वक्त अपने प्यारोंको मुसीबतमें छोड़कर भाग खड़े होनेके लिए जगह नहीं है। मारना या कायरतासे भाग खड़ा होना — इनमें से मुझे यदि किसी बातको पसंद करना पड़े तो मेरा उसूल कहता है कि मारनेका — हिंसाका — रास्ता पसंद करो। क्योंकि अगर मैं अंधेको कुदरतकी शोभा देखना सिखा सकूँ तो ही कायरको अहिंसा धर्म सिखा सकूँगा। अहिंसा बहादुरीकी चरम सीमा है। और मेरा अनुभव है कि हिंसाके मार्गसे तालीम पानेवालोंके सामने अहिंसाकी श्रेष्ठता साबित करनेमें मुझे कठिनाई नहीं हुई। पहले जब मैं खुद डरपोक था मैं भी हिंसाके भाव रखता था। लेकिन ज्यों-ज्यों मेरा डरपोकपन दूर होने लगा त्यों-त्यों मैं अहिंसाकी कीमत समझने लगा। ७२

जो आदमी मरनेसे डरता है और जिसमें सामना करनेकी ताकत नहीं है उसे अहिंसाका पाठ नहीं सिखाया जा सकता। असहाय चूहेको अहिंसक नहीं कह सकते क्योंकि वह तो सदा ही बिल्लीके मुंहका ग्रास बना रहता है। अगर उसमें ताकत होती तो वह हत्यारी बिल्लीको खा जाता। परन्तु वह तो बिल्लीको देखकर हमेशा बिलमें छिपनेको भागता है। हम उसे कायर नहीं कहते क्योंकि प्रकृतिने उसका स्वभाव ही ऐसा बनाया है। लेकिन जो मनुष्य खतरेके सामने चूहे जैसा बरताव करता है उसे कायर कहा जाय तो ठीक ही है। उसके हृदयमें हिंसा और

रूप भग होता है। अपनेको चोट पहुंचाये बिना अगर वह मनुष्य मार सके तो मारना भी चाहता है। ऐसा मनुष्य अहिंसासे मीलों दूर है। उसे अहिंसाका उपदेश देना बिलकुल बेकार है। वीरता लेशमात्र भी उसके स्वभावमें नहीं होती। अहिंसाको समझ सकनेके पहले उसे यह सिखाना होगा कि आक्रमण करनेवाले पहाड़ जैसे मनुष्यके सामने भी अपनी जगहपर डटे रहना चाहिये और आक्रमणकारीसे अपनी रक्षा करनेमें मौतकी भी परवाह नहीं करनी चाहिये। दूसरा कुछ करनेसे उसकी कायरता और भी दृढ़ हो जायगी। अहिंसासे वह और दूर जा पड़ेगा। यह सच है कि मैं किसीको बदला लेनेमें मदद नहीं करूंगा लेकिन ऐसी अहिंसाकी आड़में जो अपनी कायरताको छिपाना चाहता है उसे मैं ऐसा नहीं करने दूंगा। अहिंसा शूरोंका मार्ग है। इसे न जाननेसे बहुतोंका यह गलत विश्वास बना है कि जब कोई खतरा आवे — खास करके जिसमें जान जानेका खतरा हो — तब दिलेरीसे सामना करनेके बजाय हर बार पीठ दिखाकर भाग जाना मर्दुमी है। अहिंसाके एक शिक्षकके नाते मुझे यथासंभव ऐसी नामर्दीके विचारसे लोगोंको सावधान कर देना चाहिये। ७३

कोई मनुष्य शरीरसे कितना ही कमजोर क्यों न हो लेकिन यदि भागना लज्जाकी बात हो तो वह विरोधीकी शक्तिके सामने झुकेगा नहीं और अपनी जगह पर अडिग रहकर प्राण निछावर कर देगा। यह अहिंसा और वीरता होगी। भले वह कितना ही कमजोर क्यों न हो परन्तु अपने शत्रुको चोट पहुंचानेमें वह अपनी सारी शक्ति लगा देगा और इस प्रयत्नमें जान दे देगा। यह वीरता है लेकिन अहिंसा नहीं है। जब उसका कर्तव्य खतरेका सामना करना हो तब ऐसा न करके यदि वह भाग जाय तो यह उसकी कायरता होगी। पहले उदाहरणमें मनुष्यमें प्रेम या करुणा होगी। दूसरेमें अरुचि या अविश्वास होगा और तीसरेमें डर होगा। ७४

मान लीजिये मैं एक हबशी हूं और एक गोरा मेरी बहन पर बलात्कार करता है या गोरोंका सारा समाज मनमाने ढंगसे उसकी हत्या कर देता है, तब मेरा क्या कर्तव्य होगा? — मैं अपनेसे पूछता हूं। मुझे

यह उत्तर सूझता है : मुझे उन लोगोंका बुरा नहीं चाहना चाहिये, लेकिन उनके साथ सहयोग भी नहीं करना चाहिये। यह हो सकता है कि मैं सामान्यतः अपनी जीविकाके लिए इस हत्यारे गोरे समाज पर निर्भर करूं। फिर भी मैं उनके साथ सहयोग करनेसे इनकार करता हूं जो भोजन उनसे मिलता है उसे छूनेसे भी मैं इनकार करता हूं और मैं अपने उन हबशी भाइयोंके साथ भी सहयोग करनेसे इनकार करता हूं जो गोरोंके अन्याय और अत्याचारको सहन करते हैं। इसे मैं आत्म-बलिदान कहता हूं। मैंने अपने जीवनमें इस योजनाका सहारा लिया है। बेशक बलिदानकी केवल यांत्रिक प्रक्रियासे कोई लाभ नहीं होगा। प्रतिक्षण जीवन क्षीण होता जाय तो भी हमारी आत्म-बलिदानकी श्रद्धा मंद नहीं पड़नी चाहिये। लेकिन मैं अहिंसा-धर्मका पालन करनेवाला एक बहुत ही सामान्य व्यक्ति हूं। मेरा यह उत्तर आपको विश्वास करने लायक शायद न लगे। लेकिन मैं इस दिशामें तीव्र प्रयत्न कर रहा हूं, और अगर मैं इस जीवनमें पूरी तरह अपने प्रयत्नमें सफल न हुआ तो भी मेरी यह श्रद्धा कम नहीं होगी। ७५

पशुबलके शासनके इस युगमें किसीके लिए यह विश्वास करना लगभग असंभव है कि कोई व्यक्ति पशुबलकी अंतिम सत्ताके कानूनसे इनकार कर सकता है। इसलिए मेरे पास बिना नामके ऐसे पत्र आते हैं जिनमें मुझे यह सलाह दी जाती है कि प्रजामें हिंसा फूट पड़े तो भी मुझे असहयोग आंदोलनकी प्रगतिमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। दूसरे लोग मेरे पास आते हैं और यह मान कर कि मैं गुप्त रूपमें हिंसक कार्रवाई करनेका षड्यंत्र रच रहा हूंगा मुझसे पूछते हैं कि खुली हिंसाकी घोषणा करनेका शुभ समय कब आयेगा। वे मुझे इस बातका विश्वास दिलाते हैं कि अंग्रेज छिपी या खुली हिंसाके सिवा और किसी उपायसे कभी हार माननेवाले नहीं हैं। मुझसे कहा जाता है कि दूसरे कुछ लोग ऐसा विश्वास रखते हैं कि मैं हिंदुस्तानका सबसे दुष्ट आदमी हूं क्योंकि मैं कभी अपना सच्चा इरादा नहीं बताता और उन्हें इस विषयमें जरा भी शक नहीं कि देशके अधिकतर लोगोंकी तरह ही मैं भी हिंसामें विश्वास करता हूं।

मानव-जातिके बहुत बड़े भाग पर तलवारके सिद्धान्तका ऐसा अधिकार होनेके कारण और चूंकि असहयोग आन्दोलनकी सफलता उसे मुलतवी रखनेके रास्तेमें मुख्यतः हिंसाके अभाव पर निर्भर करती है और चूंकि इस विषयमें मेरे विचार लोगोंकी बड़ी संख्याके व्यवहार पर असर डालते हैं, मैं अपने विचारोंको अधिकसे अधिक साफ शब्दोंमें व्यक्त करनेके लिए उत्सुक हूं।

मैं यह जरूर मानता हूं कि जब कायरता और हिंसाके बीच ही चुनाव करना हो तो मैं हिंसाकी सलाह दूंगा। इस तरह जब मेरे सबसे बड़े लड़केने मुझसे पूछा कि जब मुझ पर १९०८में घातक आक्रमण हुआ उस समय अगर वह हाजिर होता तो उसे क्या करना चाहिये था — क्या उसे भाग जाना और मुझे मरने देना चाहिये था या उसे यथाशक्ति शारीरिक बलका उपयोग करके मेरी रक्षा करनी चाहिये थी, तब मैंने उससे कहा कि हिंसाका उपयोग करके भी उसे मेरी रक्षा करनी चाहिये थी। इसी कारणसे मैंने बोअर-युद्धमें तथाकथित जूलू-विद्रोहमें और पिछले महायुद्धमें भाग लिया था। और यही कारण है कि मैं उन लोगोंको हथियारोंकी तालीम देनेकी हिमायत करता हूं, जो हिंसाकी पद्धतिमें विश्वास रखते हैं। हिंदुस्तान कायर या लाचार बनकर विदेशी शासकों द्वारा होनेवाले अपने अपमान और तिरस्कारको देखता रहे, इसकी अपेक्षा मैं चाहूंगा कि वह अपने सम्मानकी रक्षाके लिए हथियारोंका सहारा ले।

लेकिन मेरा यह विश्वास है कि अहिंसा हिंसासे अनन्त गुनी श्रेष्ठ है, दण्डकी अपेक्षा क्षमामें अधिक वीरता है। क्षमा योद्धाका भूषण है। लेकिन इसका त्याग तभी क्षमाका रूप लेता है जब मनुष्यमें दंड देनेकी शक्ति या सत्ता होती है। जब कोई लाचार या असहाय प्राणी इसका त्याग करता है तब वह निरर्थक बन जाता है। जब कोई चूहा बिल्लीको अपने टुकड़े करने देता है तब वह शायद ही बिल्लीको क्षमा करता है। इसलिए मैं उन लोगोंकी भावनाको समझता हूं जो जनरल डायर और उसके जैसे दूसरोंको समुचित सजा देनेकी जोरदार आवाज उठाते हैं। अगर उनमें शक्ति होती तो वे जनरल डायरके टुकड़े टुकड़े कर देते। लेकिन मैं हिंदुस्तानको लाचार और असहाय नहीं मानता। मैं

केवल हिंदुस्तानकी और मेरी अपनी ताकतका अधिक अच्छे हेतुके लिए उपयोग करना चाहता हूं।

मुझे कोई गलत न समझे। शक्ति शारीरिक क्षमतासे नहीं आती। वह तो अदम्य इच्छासे पैदा होती है। एक औसत जूलू किसी औसत अंग्रेजसे हर हालतमें अधिक जिस्मानी ताकत रखता है। लेकिन वह किसी अंग्रेज लड़केको देख कर भाग खड़ा होता है, क्योंकि वह अंग्रेज लड़केकी पिस्तौलसे या उसके खातिर पिस्तौलका उपयोग करनेवालोंसे डरता है। मगर भर-पूर शरीरके बावजूद जूलू मौतसे डरता है और हिम्मत हार जाता है। हम हिंदुस्तानी एक क्षणमें यह समझ सकते हैं कि एक लाख अंग्रेजोंसे तीस करोड़ भारतीयोंको डरनेका कोई कारण नहीं है। इसलिए निश्चित क्षमाका अर्थ होगा अपनी शक्तिको निश्चित रूपसे पहचानना। ज्ञानपूर्वक दी जानेवाली क्षमाके साथ हममें शक्तिकी एक ऐसी प्रबल लहर दौड़ जानी चाहिये जो किसी डायर या फ्रेंक जॉन्सनके लिए भारतके सपूतोंके अपमानको असंभव बना दे। अगर फिलहाल मैं अपनी बात आपको न समझा सकूं तो उसकी मुझे कोई चिंता नहीं है। हम लोग अपनेको इतने ज्यादा दलित और पीड़ित अनुभव करते हैं कि हम क्रोधित हुए बिना या अपमानका बदला लिये बिना रह नहीं सकते। लेकिन मुझे यह कहनेमें संकोच नहीं करना चाहिये कि दण्डका अधिकार त्यागनेसे हिंदुस्तानको अधिक लाभ होगा। हमें इससे अधिक ऊंचा कार्य करना है, जगतको अधिक उदात्त संदेश देना है।

मैं खयाली पुलाव पकानेवाला आदमी नहीं हूं। मैं व्यावहारिक आदर्शवादी होनेका दावा करता हूं। अहिंसाका धर्म केवल ऋषियों और संतोंके लिए ही नहीं है। सामान्य लोगोंको भी उस धर्मका पालन करना चाहिये। अहिंसा ऐसे ही हमारी मानव-जातिका कानून है, जैसे हिंसा पशुओंका कानून है। पशुमें आत्मा सुप्त अवस्थामें रहती है और वह शारीरिक शक्तिके कानूनके सिवा दूसरा कोई कानून नहीं जानता। मनुष्यकी प्रतिष्ठाका यह तकाजा है कि वह उच्चतर और उदात्त कानूनका पालन करे — आत्माकी शक्तिका कहना माने।

इसलिए मैंने हिन्दुस्तानके सामने आत्म-बलिदानका प्राचीन कानून रखनेका साहस किया है। क्योंकि सत्याग्रह और उसकी शाखाएं — असहयोग और सविनय प्रतिरोध — कष्टसहनके कानूनके नये नामोंके सिवा और कुछ नहीं हैं। जिन ऋषियोंने हिंसाके बीच अहिंसाके कानूनकी खोज की वे न्यूटनकी अपेक्षा अधिक बुद्धिमान और प्रतिभाशाली थे। वे स्वयं वेलिंग्टनसे अधिक बड़े योद्धा थे। वे हथियारोंका उपयोग स्वयं जानते थे इसलिए उन्होंने हथियारोंकी व्यर्थताको समझ लिया और हथियारोंके उपयोगसे थकी हुई दुनियाको सिखाया कि उसका उद्धार हिंसासे नहीं बल्कि अहिंसासे ही होगा।

अपने सक्रिय रूपमें अहिंसाका अर्थ होता है जाग्रत रहकर कष्ट सहन करना। इसका अर्थ दुष्ट मनुष्यकी इच्छाके सामने चुपचाप झुक जाना नहीं है, बल्कि इसका अर्थ अत्याचारीकी इच्छाके खिलाफ अपनी संपूर्ण आत्माकी शक्तिको लगा देना है। हमारे जीवनके इस कानूनके अधीन काम करते हुए अकेला व्यक्ति भी अपने सम्मान अपने धर्म और अपनी आत्माकी रक्षाके लिए किसी अन्यायी साम्राज्यकी संपूर्ण शक्तिका विरोध कर सकता है और उस साम्राज्यके पतन अथवा पुनरुत्थानकी नींव डाल सकता है।

इस तरह मैं भारतके लिए अहिंसाके पालनकी इसलिए हिमायत नहीं करता कि वह कमजोर है। मैं चाहता हूं कि भारत अपनी ताकत और शक्तिका भान रखते हुए अहिंसाका पालन करे। अपनी शक्तिका अनुभव करनेके लिए उसे हथियारोंकी तालीम लेनेकी जरूरत नहीं है। हमें उसकी जरूरत इसलिए मालूम होती है कि हम यह सोचते हैं कि हमारा अस्तित्व केवल इस पार्थिव शरीरमें ही समाया हुआ है। परन्तु मैं यह दिखलाना चाहता हूं कि भारतके पास ऐसी आत्मा है जो कभी नष्ट नहीं हो सकती और जो हर प्रकारकी शारीरिक निर्बलतासे सफलतापूर्वक ऊपर उठ सकती है और सारे जगतकी भौतिक शक्तिको चुनौती दे सकती है। अगर भारत तलवारके सिद्धान्तको अपना ले तो संभव है वह क्षणिक विजय प्राप्त कर ले। लेकिन तब भारत मेरे हृदयका गौरव नहीं रह जायगा। हिन्दुस्तानकी भक्ति मैं इसलिए करता हूं कि मेरे पास जो कुछ भी है वह सब उसका

दिया हुआ है। मुझे पूरा विश्वास है कि हिंदुस्तानके पास संसारके लिए एक मिशन — एक संदेश है। उसे यूरोपका अंधानुकरण नहीं करना है। हिंदुस्तान जब तलवारके सिद्धांतको स्वीकार करेगा तब वह मेरे लिए कड़ी कसौटीकी घड़ी होगी। मेरा धर्म भौगोलिक सीमाओंसे बंधा हुआ नहीं है। अगर उस धर्ममें मेरी जीवित श्रद्धा होगी तो वह हिंदुस्तानके मेरे प्रेमसे आगे बढ़कर अन्य देशों तक फैल जायगा। अहिंसा-धर्मके पालनके द्वारा — जिसे मैं हिंदू धर्मकी जड़ मानता हूं — मेरा जीवन हिंदुस्तानकी सेवामें समर्पित है। ७६

जब तक मैं अपने विरोधियोंको अपने मतका न बना लूं या अपनी हार स्वीकार न करूं, तब तक मुझे वकालत करते ही रहना चाहिये। क्योंकि मेरा ध्येय प्रत्येक भारतीयको यहां तक कि अंग्रेजोंको भी और सारी दुनियाको अहिंसाके मार्ग पर चलनेके लिए राजी करना है ताकि वे अपने राजनीतिक आर्थिक सामाजिक या धार्मिक संबंधोंका अहिंसाकी पद्धतिसे नियमन कर सकें। अगर मुझ पर अतिशय महत्त्वाकांक्षी होनेका आरोप लगाया जाय तो मुझे यह आरोप स्वीकार करना चाहिये। अगर मुझसे कहा जाय कि मेरा यह सपना कभी सिद्ध नहीं हो सकता तो मेरा जवाब होगा ऐसा हो सकता है । और मैं अपने रास्ते पर आगे बढ़ता रहूंगा। मैं अहिंसाका एक पक्का हुआ अनुभवी सिपाही हूं और अहिंसामें मेरी श्रद्धाको अचल बनाये रखनेके लिए मेरे पास पर्याप्त प्रमाण हैं। अतः मेरा एक साथी हो अधिक हों या कोई भी मेरे साथ न हो तो भी मुझे अपना अहिंसाका प्रयोग जारी ही रखना चाहिये। ७७

कुछ अमेरिकन मित्र कहते हैं कि अणुबमसे ही अहिंसा सिद्ध होगी और किसी प्रकारसे नहीं। शायद वे यह कहना चाहते हैं कि जिस तरह ठूंस-ठूंस कर मिठाइयां खानेसे आदमीका मन मिठाईसे ऊब जाता है, उसे मतली होने लगती है उसी तरह अणुबमकी तबाहीको देखकर दुनियाके दिलमें हिंसाके लिए नफरत पैदा हो जायगी। मगर यह थोड़े दिनोंके लिए होगी। जैसे ऊब मिटते ही आदमी फिर दुने उत्साहसे मिठाइयां

जाने बैठ जाता है, उसी तरह अणुबमकी तबाहीसे पैदा होनेवाले ठिर स्वारथका असर दूर होते ही दुनिया दूनी शक्तिसे हिंसाकी ओर दौड़ेगी।

अक्सर कई बार बुराईमें से भलाई निकलती है। पर वह ईश्वरकी योजना है, मनुष्यकी नहीं। मनुष्यका तो यही अनुभव है कि भलाईका नतीजा भला और बुराईका बुरा होता है। अणुबमकी इस भयंकर करुण कहानीसे हमें पाठ तो यह सीखना है कि जिस तरह हिंसासे हिंसाको नहीं मिटाया जा सकता उसी तरह एक बमको दूसरे बमसे नहीं मिटाया जा सकता। मनुष्य-जाति अहिंसाके मार्गसे ही हिंसाके दलदलमें से निकल सकती है। घृणाको सिर्फ प्रेमसे जीता जा सकता है। घृणाके सामने घृणा दिखानेसे वह और भी फैलती और गहरी होती है।

मैं जानता हूँ कि जो बात मैं कई बार कह चुका हूँ और जिस पर अमल करनेकी मैंने भरसक कोशिश भी की है, उसीको मैं आज दोहरा रहा हूँ। असलमें तो पहले भी मैंने कोई नई बात नहीं कही थी। मैंने जो कहा था वह तो सनातन सत्य है। हाँ इतनी बात जरूर है कि मैंने कोई किताबी बात नहीं कही थी। मैं यह मानता हूँ कि जो चीज मेरी रग-रगमें भरी है उसीको मैंने जोरदार शब्दोंमें कहा है। साठ साल तक इस चीजको जीवनके हर क्षेत्रमें आजमा कर मेरी श्रद्धा और भी पक्की हुई है, और मित्रोंके अनुभवसे भी उसे शक्ति मिली है। यह एक ऐसी मूलभूत सचाई है कि मनुष्य अगर अकेला हो तो भी बगैर किसी झिझकके इस पर डटकर खड़ा रह सकता है। मैक्समूलरने बरसों पहले कहा था "जब तक सत्य पर अविश्वास रखनेवाले लोग मौजूद हैं तब तक सत्यको दोहराना ही पड़ेगा।" मैं इस बातको मानता हूँ। ७८

अगर हिन्दुस्तान हिंसाको अपना धर्म बना ले और तब यदि मैं जिन्दा रहूँ, तो मैं हिन्दुस्तानमें रहनेकी परवाह नहीं करूँगा। वह मुझमें गौरवकी भावना उत्पन्न नहीं कर सकेगा। मेरी देशभक्ति मेरे धर्मके अधीन है। मैं उसी तरह भारतसे चिपटा रहता हूँ जिस तरह बालक अपनी माकी छातीसे चिपटा रहता है। क्योंकि मैं मानता हूँ कि भारत मुझे आध्यात्मिक पोषण प्रदान करता है। उसका वातावरण ऐसा है, जिसमें मेरी उच्चतम

महत्त्वाकांक्षा पूरी हो सकती है। तब मेरी यह श्रद्धा चली जायगी तब मैं अपनेको ऐसा अनाथ मानूंगा जिसे कभी कोई अभिभावक — पालक प्राप्त करनेकी आशा नहीं रह गई है। ७९

५
आत्म-संयम

सच्ची सभ्यताका लक्षण परिग्रह बढ़ाना नहीं है, बल्कि सोच-समझकर और अपनी इच्छासे उसे कम करना है। ज्यों ज्यों हम परिग्रह घटाते जाते हैं त्यों त्यों सच्चा सुख और सच्चा सन्तोष बढ़ता जाता है, सेवाकी हमारी शक्ति बढ़ती जाती है। १

एक हद तक शारीरिक सुविधा और आरामका होना जरूरी है, लेकिन उस हदसे आगे बढ़ने पर वे सुविधायें और आराम सहायक बननेके बजाय हमारी आध्यात्मिक उन्नतिमें बाधक बन जाते हैं। इसलिए बहुत जरूरतें बढ़ाने और उन्हें पूरी करनेका आदर्श निरा भ्रम और जाल ही है। मनुष्यकी शारीरिक जरूरतें पूरी करनेका यहां तक कि उसकी संकुचित बौद्धिक जरूरतें पूरी करनेका भी अमुक हदके बाद अन्त आना चाहिये क्योंकि इस मर्यादाको लांघने पर वह प्रयत्न शारीरिक और बौद्धिक विलासका रूप ले लेता है। मनुष्यको अपने शारीरिक सुखों और सांस्कृतिक सुविधाओंकी ऐसे ढंगसे व्यवस्था करनी चाहिये कि वे उसकी मानव-सेवामें बाधक न बनें। मनुष्यकी सारी शक्तियोंका उपयोग मानव-सेवामें ही होना चाहिये। २

शरीर और मनका सम्बन्ध इतना घनिष्ठ है कि अगर इनमें से एक भी अच्छी तरह काम करना बन्द कर दे, तो सारे शरीरको हानि उठानी पड़े। इससे यह फलित होता है कि शुद्ध चरित्र सच्चे अर्थमें स्वास्थ्यकी बुनियाद है और हम यह कह सकते हैं कि सारे बुरे विचार और हानिकारक आवेग रोगके ही अलग अलग रूप हैं। ३

पूर्ण स्वास्थ्य तभी सिद्ध किया जा सकता है जब हम शैतानकी सत्ताको चुनौती देकर ईश्वरके कानूनोंका पालन करें। सच्चे स्वास्थ्यके बिना सच्चा सुख असंभव है और सच्चा स्वास्थ्य जीभपर कठोर नियंत्रणके बिना असंभव है। जब जीभ पर विजय प्राप्त कर ली जाती है, तब दूसरी सारी इन्द्रियां अपने-आप वशमें हो जाती हैं। और जिस मनुष्यने अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ली है उसने वास्तवमें सारे जगत पर विजय प्राप्त कर ली है। वह ईश्वरका एक अंश बन जाता है। ४

मैंने पत्रोंके संपादनका भार रुपया कमानेके लिए नहीं लिया है, बल्कि जिसे मैंने अपना जीवन-कार्य माना है उसमें सहायक बनानेके लिए ही यह भार अपने कंधों पर लिया है। मेरा जीवन-कार्य है उदाहरण द्वारा और संयत उपदेश द्वारा देशवासियोंको सत्याग्रहके अद्वितीय शस्त्रका उपयोग सिखाना — यह सत्याग्रह जो सीधा अहिंसा और सत्यसे फलित होता है। मैं यह दिखानेके लिए उत्सुक — सचमुच अधीर, हूं कि जीवनकी अनेक बुराइयोंकी अहिंसाके सिवा दूसरी कोई दवा नहीं है। वह ऐसा प्रबल दाहक रस है, जो पत्थरसे पत्थर दिलको पिघलानेकी शक्ति रखता है। इसलिए मुझे अपनी इस श्रद्धाके प्रति वफादार रहनेके खातिर क्रोध या मत्सरसे प्रेरित होकर कुछ नहीं लिखना चाहिये। मुझे व्यर्थ ही बिना कारण कोई बात नहीं लिखनी चाहिये। मैं लोगोंको केवल उत्तेजित बनानेके लिए भी नहीं लिख सकता। विषयों और शब्दोंके चुनावमें मुझे प्रति सप्ताह कितने संयमसे काम लेना पड़ता है इसकी पाठकोंको कोई कल्पना नहीं हो सकती। यह मेरे लिए बड़ी भारी तालीम है। यह मुझे आत्म-निरीक्षण करनेका और अपनी कमजोरियोंका पता लगानेका सामर्थ्य प्रदान करती है। अकसर मेरा मिथ्याभिमान मुझे तीखा वचन लिखनेकी या मेरा क्रोध कड़े विशेषणका प्रयोग करनेकी प्रेरणा देता है। यह एक भयंकर अग्नि-परीक्षा है परन्तु साथ ही इन सारी चीजोंको उखाड़ फेंकनेकी उत्तम कसरत भी है। पाठक यंग इंडिया के सुन्दर सजे-सजाये पृष्ठोंको देखते हैं और कभी कभी रोमा रोलांके साथ यह भी कहना चाहते होंगे कि वाह, यह बूढ़ा कितना बढ़िया आदमी होगा। लेकिन दुनियाको इस बातकी

जान और समझ ले कि इस अहिंसापथका बड़ी सावधानी और प्रार्थनाके द्वारा विकास साधा गया है। और अगर वह कुछ लोगोंके लिए स्वीकार्य सिद्ध हुआ है जिनकी रायकी मैं कदर करता हूं तो पाठक इस बातको समझ लें कि जब यह अहिंसापथ पूर्णतः मेरे लिए स्वाभाविक बन जायगा अर्थात् जब मैं कोई बुरा काम कर ही नहीं सकूंगा और जब एक क्षणके लिए भी कोई तीखी या अहंकारपूर्ण बात मेरे विचार-जगतमें नहीं रहने पायगी तब और केवल तभी मेरी अहिंसा दुनियाके तमाम लोगोंके हृदयोंको हिला सकेगी। मैंने अपने सामने और पाठकोंके सामने कोई असंभव आदर्श या अग्नि-परीक्षा नहीं रखी है। यह मनुष्यका विशेष अधिकार और जन्मसिद्ध हक है। हमने स्वर्गको इसलिए खोया है कि हम उसे फिरसे प्राप्त करें। ५

मैंने कड़वे अनुभवसे क्रोधको काबूमें रखनेका ऊंचा पाठ सीखा है। जैसे काबूमें रखी हुई सुरक्षित गरमी शक्तिमें परिणत हो जाती है, वैसे ही काबूमें रखा हुआ हमारा क्रोध भी ऐसी शक्तिमें परिणत किया जा सकता है जो सारी दुनियाको हिला सकती है। ६

यह बात नहीं है कि मुझे क्रोध नहीं आता। बात यह है कि मैं क्रोधको प्रकट नहीं होने देता। अक्रोध-रूपी धैर्यके गुणका मैं अभ्यास करता रहता हूं। और सामान्यतः मुझे उसमें सफलता भी मिलती है। पर जब मुझे क्रोध आता है तब मैं उसे दबा लेता हूं। यह प्रश्न व्यर्थ-सा है कि मैं किस तरह उसे दबा सकता हूं। क्योंकि यह एक ऐसी आदत है जिसे प्रत्येक मनुष्य डाल सकता है और निरंतर अभ्याससे इसमें उसे सफलता भी मिल सकती है। ७

अपने कर्मके फलको भोगनेसे बचनेका प्रयत्न करना दोष है, अनीतिपूर्ण है। जो आदमी जरूरतसे ज्यादा खा लेता है उसके लिए यही अच्छा है कि उसके पेटमें दर्द हो और उसे लंघन करना पड़े। जीभको काबूमें न रख कर अनाप-शनाप खा लेना और फिर बलवर्धक या दूसरी दवाइयां लेकर उसके नतीजेसे बचना बुरा है। पशुकी तरह विषय-भोगमें रत रहकर अपने कर्म

दुष्कृत्यके फलसे बचना और भी बुरा है। प्रकृति बड़ी कठोर शासक है। वह अपने कानूनके भंगका पूरा बदला बिना आगा-पीछा किये चुकाती है। केवल नैतिक संयमके द्वारा ही हमें नैतिक फल मिल सकता है। संयमके दूसरे तमाम साधन अपना हेतु ही विनाश करनेवाले सिद्ध होंगे। ८

किसीके दोष देखना या किसीका न्याय करना हमारा काम नहीं है। हमें अपना न्याय करनेमें सारी शक्ति लगानी चाहिये और जब तक अपनेमें एक भी दोष दिखाई देता हो और उस दोषके होते हुए भी हमारी अन्तरात्मा यह चाहती हो कि सगे-संबंधी और मित्र वगैरा हमें न छोड़ें तब तक हमें औरोंके दोष देखनेका अधिकार नहीं है। जब हम — चाहे अनिच्छासे — दूसरोंके ऐसे दोष जान जायं तब यदि हममें शक्ति हो और ऐसा करना उचित हो तो जिसके दोष हमने देखे हों उससे हम पूछें। मगर और किसीसे पूछनेका हमें अधिकार नहीं है। ९

विकारोंका भी चिन्तन न करो। एक वासनाका निश्चय करनेके बाद उस पर विचार ही नहीं करना चाहिये। इसका अर्थ ही यह है कि जिस चीजका व्रत लिया उसके विषयमें हमारा मन सोचना बन्द कर देता है। जैसे व्यापारी किसी चीजका सौदा कर लेता है तो फिर उसका विचार नहीं करता और दूसरी चीज पर ध्यान देता है वैसे ही बात बनती है। १

आप उस मनुष्यकी लगन जानना चाहेंगे जो सत्यके दर्शन करना चाहता है — वह सत्य जो ईश्वर है। वह काम और क्रोध, लोभ और आसक्तिसे अभिमान और डरसे सर्वथा मुक्त होना चाहिये। उसे अपने-आपको शून्य-वत् बना देना चाहिये और अपनी सारी इन्द्रियों पर पूरा अंकुश रखना चाहिये — इसका आरंभ उस जीभसे करना चाहिये। जीभ वाणी और स्वाद दोनोंकी इंद्रिय है। हम जीभके जरिये ही अतिशयोक्ति करते हैं असत्य बोलते हैं और किसीको चोट पहुंचानेवाली वाणी बोलते हैं। स्वादकी लालसा हमें जीभके गुलाम बना देती है जिससे हम पशुओंकी तरह केवल खानेके लिए ही जीते हैं। लेकिन उचित अनुशासन

और संयमसे हम अपनेको क्रमशः देवदूतोंके समान बना सकते हैं। जिसने अपनी इन्द्रियोंको वशमें कर लिया है, वह मनुष्योंमें प्रथम और सबसे ऊंचा है। सारे सद्गुण उसमें वास करते हैं। ईश्वर उसके द्वारा अपनेको प्रकट करता है। आत्म-संयममें ऐसी शक्ति है। ११

आचरणके सारे सार्वभौम नियम जो ईश्वरके आदेशोंके नामसे जाने जाते हैं बिलकुल सादे हैं और समझने तथा पालन करनेमें आसान हैं। हां इसके लिए इच्छाका होना जरूरी है। मनुष्य-जातिमें जड़ता और आलस्यने जो घर बना लिया है उसीके कारण वे कठिन दिखाई देते हैं। कुदरतमें कोई वस्तु स्थिर नहीं है। केवल ईश्वर ही स्थिर है क्योंकि वह कल जैसा था वैसा ही आज भी है और कल भी वैसा ही रहेगा और फिर भी वह सदा गतिमान है। इसीलिए मैं मानता हूं कि अगर मनुष्य जातिको जीवित रहना है तो उसे दिनादिन अधिक मात्रामें सत्य और अहिंसाकी सत्ता स्वीकार करनी ही होगी। १२

जिस प्रकार वैज्ञानिक प्रयोग करनेके लिए एक अनिवार्य वैज्ञानिक अभ्यास-क्रम जरूरी होता है उसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्रमें प्रयोग करनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए कड़े प्रारंभिक अनुशासनका पालन जरूरी होता है। १३

नशीले पदार्थों और सभी प्रकारके खाद्योंका विशेषतः मांसका सेवन न करनेसे बेशक आत्माके विकासमें बड़ी सहायता मिलती है। परन्तु यह स्वयं ही अपने-आपमें कोई साध्य नहीं है। बहुतसे लोग जो मांसका सेवन करते हैं और ईश्वरसे डर कर चलते हैं उस मनुष्यकी अपेक्षा अपने मोक्षके ज्यादा निकट हैं जो मांस और कई दूसरी चीजोंका धर्मभावसे परहेज तो रखता है परन्तु अपने प्रत्येक कर्म द्वारा ईश्वरका तिरस्कार करता है। १४

अनुभव सिखाता है कि जो लोग अपने विकारोंका दमन करना चाहते हैं उनके लिए मांसाहार अनुकूल नहीं होता। परन्तु चरित्र-निर्माण अथवा

इन्द्रिय-दमनमें आहारके महत्त्वको जरूरतसे ज्यादा महत्त्व देना गलत है। आहार एक शक्तिशाली साधन है, इसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। परन्तु आहारमें ही सारा धर्म मानना जैसा भारतमें अकसर किया जाता है, उतना ही गलत है जितना आहारके सम्बन्धमें संयमकी कोई परवाह न करना और अपनी तृष्णाको बेलगाम छोड़ देना। १५

अनुभवने मुझे यह भी सिखाया है कि सत्यके पुजारीके लिए मौनका सेवन इष्ट है। मनुष्य जाने-अनजाने भी प्रायः अतिशयोक्ति करता है, अथवा जो कहने योग्य है उसे छिपाता है, या उसे दूसरे ढंगसे कहता है। ऐसे संकटोंसे बचनेके लिए भी मितभाषी होना आवश्यक है। कम बोलनेवाला आदमी बिना विचारे नहीं बोलेगा; वह अपने प्रत्येक शब्दको तौलेगा। १६

मेरे लिए यह [मौन] अब शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकारकी आवश्यकता बन गया है। शुरू शुरूमें यह कामके दबावसे राहत पानेको लिया जाता था। इसके सिवा मुझे लिखनेके लिए समय चाहिये था। परन्तु थोड़े दिनके अभ्यासके बाद मुझे उसका आध्यात्मिक मूल्य मालूम हो गया। मेरे मनमें अचानक यह विचार कौंध गया कि मौनका समय ही एक ऐसा समय है जब मैं ईश्वरसे अच्छी तरह लौ लगा सकता हूं। और अब तो मुझे ऐसा महसूस होता है मानो मेरी मनोरचना स्वभावतः मौनके लिए ही हुई है। १७

ओठोंको सीकर लिया हुआ मौन मौन नहीं है। अपनी जीभको काट कर भी कोई ऐसा परिणाम सिद्ध कर सकता है। लेकिन वह भी सच्चा मौन नहीं होगा। सच्चा मौनी तो वह है, जो बोलनेकी क्षमता होने पर भी व्यर्थका एक शब्द नहीं बोलता। १८

सारी शक्ति उस वीर्यशक्तिकी रक्षा और ऊर्ध्वगतिसे प्राप्त होती है जिससे जीवनका निर्माण होता है। अगर इस वीर्यशक्तिको नष्ट होने देनेके बजाय इसका संचय किया जाय तो यह सर्वोत्तम सृजन-शक्तिके रूपमें

परिणत हो जाती है। मनमें उठनेवाले बुरे या अस्तव्यस्त अव्यवस्थित और अवांछनीय विचारोंसे भी इस शक्तिका बराबर और अज्ञात रूपमें भी क्षय होता रहता है। और चूंकि विचार ही वाणी और सारी क्रियाओंका मूल होता है, इसलिए वाणी और क्रिया भी विचारका ही अनुसरण करती हैं। इसीलिए पूर्णतः नियमित विचार खुद ही सर्वोच्च प्रकारकी शक्ति है और ऐसे विचार स्वयं ही अपना सोचा हुआ कार्य करने लगते हैं। यदि मनुष्य ईश्वरकी प्रतिकृति है तो उसे अपने मिले हुए मर्यादित क्षेत्रके भीतर किसी कामकी इच्छा भर करनेकी देर है और वह काम हो जाता है। जो अपनी शक्तिका किसी भी रूपमें क्षय होने देता है उसमें इस शक्तिका होना असंभव है। १९

मनसे विषय-भोगका आनन्द माननेके बजाय शरीर द्वारा भोग करना अधिक अच्छा है। मनमें विषय-संबंधी विचारोंके उठते हुए भी उनका बुरा लगना और उन्हें रोकनेकी कोशिश करना अच्छा है। लेकिन शारीरिक संयोगके अभावमें अगर मन विषयोंमें लीन रहता हो तो शरीरकी जरूरतको सन्तुष्ट करना ही धर्म है। इसमें मुझे कोई शंका नहीं है। २

कामेच्छा एक सुन्दर और उदात्त वस्तु है। इसमें लज्जित होनेकी कोई बात नहीं। परन्तु वह केवल सृजन-कार्यके लिए ही बनाई गई है। उसका और कोई उपयोग करना ईश्वर और मानवजातिके प्रति पाप है। २१

दुनिया क्षणिक वस्तुओंकी तरफ दौड़ती है। शाश्वत वस्तुओंके लिए उसके पास समय नहीं रहता। तो भी यदि हम थोड़ा गहरा विचार करें, तो देखेंगे कि दुनिया शाश्वत वस्तुओं पर ही निभती है। ऐसी एक वस्तु ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य किसे कहा जाय? जो हमें ब्रह्मकी ओर ले जाय वह ब्रह्मचर्य है। इसमें जननेन्द्रियका संयम आ जाता है। वह संयम मन वाणी और कर्ममें होना चाहिये। अगर कोई मनसे भोग करे और वाणी तथा स्थूल कर्मों पर नियन्त्रण रखे तो ऐसा ब्रह्मचर्य नहीं चलेगा। मन पर

निश्चय हो जाय, तो वाणी और कर्मका संयम बहुत आसान हो जाता है। २२

इतना तो साफ है कि बाहरी बन्धनोंकी अनावश्यकताकी बात पूर्ण ब्रह्म-चारीके लिए ही सच्ची है। लेकिन जो ब्रह्मचारी बननेकी कोशिश कर रहा है उसके लिए तो अनेक बन्धनोंकी जरूरत है। आमके छोटे पेड़को सुरक्षित रखनेके लिए उसके चारों तरफ बाड़ लगानी पड़ती है। छोटा बच्चा पहले माकी गोदमें सोता है, फिर पालनेमें और फिर चालनगाड़ी लेकर चलता है। जब वह बड़ा होकर खुद चलने-फिरने लगता है, तब सारा सहारा छोड़ देता है। न छोड़े तो उसे नुकसान होता है।

मुझे लगता है कि जो ब्रह्मचारी मनकी सच्ची साधना कर रहा है, उसे भी ऊपर बताई हुई बाड़ों (मर्यादाओं) की जरूरत नहीं है। ब्रह्मचर्य जबरन् यानी मनके विरुद्ध जाकर पालनेकी चीज नहीं है। वह जबरदस्तीसे नहीं पाला जा सकता। यहां तो मनको वश करनेकी बात है। जो आदमी जरूरत पड़ने पर भी स्त्रीको छूनेसे भागता है वह ब्रह्मचारी बननेकी कोशिश ही नहीं करता। वह किसी स्त्रीको चाहे जिस हालतमें देखे, चाहे जिस रूप-रंगमें देखे तो भी उसके मनमें विकार पैदा नहीं होता।

ब्रह्मचारीको मनकी मर्यादाओं (बाड़ों) से दूर भागना चाहिये। उसे अपने लिए अपनी बाड़ खुद बना लेनी चाहिये। जब उसकी जरूरत न रहे तब उसे तोड़ देना चाहिये। पहली चीज तो यह है कि हम सच्चे ब्रह्मचर्यको पहचानें, उसकी कीमत जान लें और ऐसे कीमती ब्रह्मचर्यका पालन करें। इसमें देशसेवाका सच्चा काम रहा है। इससे देशसेवा करनेकी शक्ति भी बढ़ती है। २१

मैं स्वयं अपने अनुभवसे जानता हूं कि जब तक मैं अपनी पत्नीके प्रति विषय-भोगकी दृष्टिसे देखता था तब तक हम एक-दूसरेको सच्चे रूपमें नहीं समझ सके। हमारा प्रेम उच्च स्तर पर नहीं पहुंचा। हम दोनोंके बीच स्नेहभाव तो सदा ही रहा, लेकिन ज्यों ज्यों हम दोनों, या मैं स्वयं अधिक संयमी बनते गये वैसे वैसे हम एक-दूसरेके अधिक समीप पहुंचते

गये। मेरी पत्नीमें संयमकी कमी कभी थी ही नहीं। वह अक्सर संयम दिखाती थी। लेकिन उसने विरले ही मौकों पर मेरा विरोध किया, यद्यपि उसने अपनी अनिच्छा अक्सर दिखाई। जब तक मेरी विषय-भोगकी इच्छा बनी रही तब तक मैं पत्नीकी सेवा नहीं कर सका। जिस क्षण मैंने विषय-भोगके जीवनको अंतिम नमस्कार किया उसी क्षण हम दोनोंका संपूर्ण संबंध आध्यात्मिक बन गया। काम-वासना मर गई और उसके बदले प्रेमने हम पर अपना साम्राज्य जमा लिया। २४

ब्रह्मचर्यके बाह्य उपचारोंमें जिस तरह आहारके प्रकार और परिमाणकी मर्यादा आवश्यक है उसी तरह उपवासके बारेमें भी समझना चाहिये। इन्द्रियां इतनी बलवान हैं कि उन्हें चारों तरफसे ऊपरसे और नीचेसे यों दसों दिशाओंसे घेरा जाय तो ही वे अंकुशमें रहती हैं। सब जानते हैं कि आहारके बिना वे काम नहीं कर सकतीं। अतएव इन्द्रिय-दमनके हेतुसे स्वेच्छापूर्वक किये गये उपवाससे इन्द्रिय-दमनमें बहुत मदद मिलती है, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं। कुछ लोग उपवास करते हुए भी असफल सिद्ध होते हैं। उसका कारण यह है कि उपवास ही सब कुछ कर सकेगा ऐसा मानकर वे केवल स्थूल उपवास करते हैं और मनसे छप्पन भोगोंका स्वाद लेते रहते हैं। उपवासके दिनोंमें वे उपवासकी समाप्ति पर क्या खायेंगे इसके विचारोंका स्वाद लेते रहते हैं और फिर शिकायत करते हैं कि न तो स्वादेन्द्रियका संयम सधा और न जननेन्द्रियका। उपवासकी सच्ची उपयोगिता वहीं होती है जहां मनुष्यका मन भी देह-दमनमें साथ देता है। तात्पर्य यह कि मनमें विषय-भोगके प्रति विरक्ति आनी चाहिये। विषयकी जड़ें मनमें रहती हैं। उपवास आदि साधनोंसे यद्यपि बहुत सहायता मिलती है फिर भी वह कम ही होती है। कहा जा सकता है कि उपवास करते हुए भी मनुष्य विषयासक्त रह सकता है। २५

किसी भी वातावरणमें या किसी भी प्रलोभनमें आ पड़े तो भी जो टिका रहे वही ब्रह्मचर्य है। किसीने पत्थरकी पुरुषकी मूर्ति बनायी हो और उसके पास कोई रूपवती युवती जाय तो उस पत्थरकी मूर्ति पर उसका कुछ भी असर नहीं होगा। इस तरह जो पत्थरकी मूर्तिकी तरह रह सके वह

ब्रह्मचारी है। परन्तु पत्थरकी मूर्ति न कानोंसे काम लेती है न आंखोंसे वैसे ही पुरुष ब्रह्मचर्यको छूने न पाय।

तुम्हारे मनमें ऐसा सवाल यह है स्त्री-जातिका दर्शन और उसका संग अनुभवसे संयमका विघातक पाया जाता है, इसलिए वह त्याज्य है। इस विचारमें मुझे दोष दीखता है। जो सहज स्वाभाविक है और जिसका मूल ही ऐसा है उसे छोड़कर जो संयम पाला जा सके वह संयम नहीं है, ब्रह्मचर्य नहीं है। वह तो बिना वैराग्यका त्याग है। इसलिए वह सब मौका पाकर बढ़ेगा ही। २१

दक्षिण अफ्रीकामें मैं २ वर्ष तक पश्चिमके साथ गाढ़ सम्पर्कमें रहा था। मैंने हैवलॉक एलिस और बर्ट्रान्ड रसेल जैसे प्रसिद्ध लेखकोंकी शादीसे सम्बन्ध रखनेवाली रचनाओं तथा उनके विचारधारासे परिचय प्राप्त किया है। ये सब प्रामाणिक और अनुभवी प्रख्यात विचारक हैं। उन्हें अपने विचारोंके लिए और उन विचारोंको व्यक्त करनेके लिए अनेक कष्ट उठाने पड़े हैं। विवाह जैसी परम्पराओंको तथा सदाचारके वर्तमान नियमोंको सर्वथा अस्वीकार करने पर भी — और यहां मैं उनसे सहमत नहीं हूं — इन परम्पराओं तथा प्रथाओंसे स्वतन्त्र रहते हुए भी मानव-जीवनमें पवित्रताकी संभावना और वांछनीयतामें उनका दृढ़ विश्वास है। पश्चिममें ऐसे पुरुषों और स्त्रियोंसे मेरा संबंध आया है जो प्रचलित प्रथाओं और सामाजिक परम्पराओंको स्वीकार किये बिना या माने बिना भी पवित्र जीवन बिताते हैं। मेरा प्रयोग मेरी खोज उसी दिशामें चल रही है। अगर आप सुधारकी आवश्यकता और वांछनीयताको स्वीकार करते हैं, अगर आप आवश्यकतानुसार प्राचीन परम्पराओं और प्रथाओंको खतम करना आवश्यक और वांछनीय समझते हैं और अगर आप यह मानते हैं कि वर्तमान युगके अनुकूल नीति और सदाचारकी नयी व्यवस्था खड़ी करना जरूरी और इष्ट है तो फिर दूसरोंकी अनुमति लेनेका या दूसरोंको यकीन करानेका प्रश्न ही नहीं उठता। सुधारक दूसरोंके विचार बदलने तक प्रतीक्षा नहीं कर सकता। उसे सारी दुनियाका विरोध होते हुए भी सुधारकी दिशामें अगुआ बनना चाहिये और अकेले ही आगे बढ़नेका साहस दिखाना चाहिये।

मैं ब्रह्मचर्यकी वर्तमान व्याख्याको अपने निरीक्षण अध्ययन और अनुभवके प्रकाशमें कसौटी पर कसना चाहता हूं। उसका दायरा बढ़ाना चाहता हूं और उसमें संशोधन करना चाहता हूं। इसलिए जब कभी मुझे ऐसा करनेका मौका मिलता है मैं उसे टालता नहीं या उससे दूर नहीं भागता। इसके विपरीत इसे मैं अपना धर्म मानता हूं कि ऐसे मौकेका हिम्मतके साथ सामना किया जाय और इस बातका पता लगाया जाय कि वह मुझे कहां ले जाता है और मैं कहां खड़ा हूं। सच्चे ब्रह्मचर्यका साधक स्त्रीके सम्पर्कको टाले या उससे डरकर भाग जाय इसे मैं साधकके लिए शोभाकी चीज नहीं मानता। मैंने कभी विषय-वासनाको संतुष्ट करनेके लिए स्त्रीका स्पर्श नहीं चाहा या नहीं बढ़ाया। मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने कामवृत्तिको बिलकुल नष्ट कर दिया है। परन्तु मेरा यह दावा जरूर है कि मैं उसे वशमें रख सकता हूं। २७

संतति-नियमनके पीछे जो विचार-सरणी है वह सारी भयंकर और भूल-भरी है। संतति-नियमनका समर्थन करनेवाले यह मानते हैं कि जननेन्द्रियको संतुष्ट करनेका मनुष्यको अधिकार है। इतना ही नहीं ऐसा करना उसका धर्म है और इसका पालन न किया जाय तो जीवन-विकासमें बाधा पड़ती है। मुझे इस विचारमें बड़ा दोष मालूम होता है। कृत्रिम उपायोंका उपयोग करनेवालोंसे संयमकी आशा रखना व्यर्थ है। काम-वासनाका संयम असंभव है यह मानकर तो संतति-नियमनका प्रचार होता है। जननेन्द्रियके संयमको असंभव अनावश्यक और हानिकारक मानना मेरे खयालसे धर्मको न मानने जैसा है क्योंकि धर्मकी सारी रचना संयमकी नींव पर खड़ी है। २८

मैं कृत्रिम उपायों द्वारा संतति-नियमन करनेके प्रश्न पर सोचना चाहता हूं। आजकल हमारे कानोंमें ढिंढोरा पीट पीट कर कहा जाता है कि जिस प्रकार कर्ज चुकाना हमारा कर्तव्य है उसी प्रकार विषय-वासनाकी तृप्ति भी हमारा परम कर्तव्य है। और अगर हम ऐसा न करें तो इसकी सजाके रूपमें हमारी बुद्धि मंद हो जाती है। ऐसा कहा जाता है कि यह विषय वासना प्रजोत्पत्तिकी इच्छासे भिन्न है। और कृत्रिम उपायोंके हिमायती

मुझे साधु या संन्यासी कहना गलत है। जिन आदर्शोंका अनुसरण करके मैंने अपना जीवन गढ़ा है उन आदर्शोंको मैंने इसलिए सबके सामने रखा है कि सारी मानव-जाति उनका अनुसरण कर सके। मैं धीमे विकास-क्रमसे इन आदर्शोंका दर्शन कर सका हूं। हर कदम गहरे विचार, गहरे चिंतन और गहरे विवेकके साथ उठाया गया है। मेरा ब्रह्मचर्य और मेरी अहिंसा दोनोंका जन्म मेरे व्यक्तिगत अनुभवसे हुआ था और समाज-सेवाके लिए दोनों आवश्यक हो गये थे। दक्षिण अफ्रीकामें एक गृहस्थके नाते वकीलके नाते समाज-सुधारकके नाते या राजनीतिज्ञके नाते मुझे जो एकाकी जीवन बिताना पड़ा उसमें इन कर्तव्योंका भलीभांति पालन करनेके लिए विषय भोग पर कड़ेसे कड़ा अंकुश लगाना और मानव-संबंधोंमें फिर वे मेरे देश बंधुओंके साथ हों या यूरोपियनोंके साथ सत्य और अहिंसाका कठोर पालन करना मेरे लिए आवश्यक हो गया था। मैं सामान्य कोटिके मनुष्यसे ऊंचा होनेका दावा नहीं करता और मुझमें सामान्य मनुष्यसे भी कम शक्ति है। और उस अहिंसा या ब्रह्मचर्यके लिए मैं कोई विशेष श्रेय लेनेका दावा नहीं करता जिसे मैंने परिश्रमपूर्ण खोजसे सिद्ध किया है। १

मैंने अपने मनमें निश्चय कर लिया है। ईश्वर प्राप्तिके जिस एकाकी मार्ग पर चलनेके लिए मैंने कदम उठाया है, उस पर चलनेके लिए मुझे दुनियाके साथियोंकी जरूरत नहीं है। इसलिए जो लोग मुझे ढोंगी मानते हैं भले वे स्पष्ट शब्दोंमें ऐसा न कहें वे चाहें तो मुझे छोड़ दें। शायद इससे उन लाखों-करोड़ों लोगोंका भ्रम दूर हो जाय जो मुझे महात्मा माननेका आग्रह रखते हैं। मुझे यह कबूल करना चाहिये कि मेरे महात्मापनकी इस तरह पोल खुल जानेसे मुझे बड़ी खुशी होगी। ११

६

आंतर राष्ट्रीय शांति

मैं इसमें विश्वास नहीं करता कि एक मनुष्यको आध्यात्मिक लाभ हो और उसके आसपासके लोग दुःखी रहें। मैं अद्वैतवादको मानता हूँ। मैं मनुष्यकी और इसलिए सब प्राणियोंकी एकतामें विश्वास करता हूँ। इसलिए मैं मानता हूँ कि यदि एक मनुष्यको आध्यात्मिक लाभ होता है, तो उसके साथ सारे जगतको लाभ होता है और यदि एक मनुष्यका पतन होता है, तो उस हद तक सारे जगतका पतन होता है। १

एक भी नैतिक गुण ऐसा नहीं है जिसका लक्ष्य केवल एक व्यक्तिका कल्याण हो या जिसे उतनेसे ही संतोष हो जाय। इसी तरह दूसरी ओर एक भी नैतिक अपराध ऐसा नहीं है जो वास्तविक अपराधीके सिवा दूसरे बहुतसे लोगों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव न डालता हो। इसलिए किसी व्यक्तिका अच्छा या बुरा होना उसीके सोचनेकी बात नहीं है, बल्कि वास्तवमें सारे समाजकी — नहीं सारे संसारके सोचनेकी बात है। २

यद्यपि प्रकृतिमें हमको पर्याप्त अपकर्षण दिखाई देता है, तथापि वह आकर्षणसे ही जीवित रहती है। पारस्परिक प्रेम ही प्रकृतिको टिकाये रखता है। मनुष्य संहारसे अपना निर्वाह नहीं करता। आत्म-प्रेमका यह तकाजा है कि औरोंके प्रति आदरभाव रखा जाय। राष्ट्रोंमें एकता इसलिए रहती है कि राष्ट्रोंके अंगभूत लोग परस्पर आदरभाव रखते हैं। किसी दिन अपने राष्ट्रीय न्यायको हमें सारे विश्व तक व्याप्त करना पड़ेगा जिस प्रकार हमने अपने कौटुम्बिक न्यायको राष्ट्रोंके — एक विशाल कुटुम्बके — निर्माणके लिए व्याप्त किया है। ३

मानव-जाति एक है क्योंकि सारे मानव समान रूपसे नैतिक कानूनके अधीन हैं। ईश्वरकी दृष्टिमें सारे मानव समान हैं। बेशक उनमें जातिके

वर्णोंके और ऐसे ही दूसरे भेद हैं। परन्तु मनुष्यका दरजा जितना अधिक ऊंचा है उतनी ही बड़ी उसकी जिम्मेदारी है। ४

मेरे जीवनका ध्येय केवल भारतीयोंका ही भ्रातृभाव सिद्ध करना नहीं है। भारतकी स्वतंत्रता भी मेरे जीवनका ध्येय नहीं है यद्यपि आज निस्सन्देह इसी कार्यमें मेरा सारा समय और सारा जीवन बीता जा रहा है। लेकिन भारतकी स्वतंत्रता सिद्ध करके उसके द्वारा मैं मानव-मात्रके भ्रातृभावका ध्येय सिद्ध करने और उसका प्रचार करनेकी आशा रखता हूं। मेरी देशभक्ति सबसे अलग-थलग रहनेवाली वस्तु नहीं है। वह सर्वव्यापिनी है। मुझे उस देशभक्तिका त्याग करना चाहिये जो दूसरे राष्ट्रोंको आफतमें डालकर, उन्हें लूटकर बड़प्पन पाना चाहती है। देशभक्ति सम्बन्धी मेरे विचार निरर्थक हैं अगर वे हमेशा हर मामलेमें बिना किसी अपवादके संपूर्ण मानव-समाजके विशाल हितसे मेल न खाते हों। यही नहीं बल्कि मेरा धर्म और उस धर्मसे उत्पन्न मेरी देशभक्ति सारी सजीव सृष्टिको व्याप्त करनेवाली है। मैं केवल मानव-प्राणियोंसे ही भ्रातृभाव या एकरूपता सिद्ध करना नहीं चाहता बल्कि प्राणिमात्रके साथ एकताका सम्बन्ध जोड़ना चाहता हूं—यहां तक कि जमीन पर रेंगनेवाले छोटे-मोटे जीवोंके साथ भी। अगर आपको आघात न पहुंचे तो मैं जमीन पर रेंगनेवाले प्राणियोंके साथ भी एकता अनुभव करना चाहता हूं क्योंकि हम एक ही प्रभुकी सन्तान होनेका दावा करते हैं और इस कारण अनेक रूपोंमें दिखाई देनेवाले सारे जीव मूलतः एक ही होने चाहिये। ५

मेरी दृष्टिमें किसी व्यक्तिके लिए राष्ट्रीय बने बिना आन्तर-राष्ट्रीय बनना असम्भव है। आन्तर-राष्ट्रीयता उसी अवस्थामें सम्भव है, जब राष्ट्रीयता एक वास्तविक वस्तु हो जाय अर्थात् जब भिन्न भिन्न देशोंके लोग सुसंगठित हो जाय और एक आदमीकी तरह काम कर सकें। राष्ट्रीयता बुरी बात नहीं है; बुरी बात तो है संकुचितता, स्वार्थ-परायणता और औरोंसे बिलकुल अलग रहनेकी वृत्ति जो कि आधुनिक राष्ट्रोंका जहर है

पाप है। हर राष्ट्र दूसरोंकी हानि करके भी अपना फायदा करना चाहता है; दूसरोंको तबाह करके अपनेको आबाद बनाना चाहता है। ६

मैं स्वदेशीका एक विनम्र सेवक हूं और स्वदेशीकी सेवा करनेकी कोशिश करने में सारी मानव जातिकी सेवा करता हूं। सार्वजनिक जीवनके लगभग ५० वर्षोंके अनुभवके बाद आज मैं यह कह सकता हूं कि अपने देशकी सेवा दुनियाकी सेवाके असंगत नहीं है — इस सिद्धान्तमें मेरा विश्वास बढ़ा ही है। यह एक उत्तम सिद्धान्त है। इस सिद्धान्तको स्वीकार करनेसे ही दुनियाकी मौजूदा कठिनाइयां आसान हो सकती हैं और विभिन्न राष्ट्रोंमें जो पारस्परिक द्वेषभाव नजर आता है उसे रोका जा सकता है। ७

स्वावलंबन और आत्म-निर्भरताकी तरह परस्परावलंबन भी मनुष्यका आदर्श है और होना चाहिये। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाजके साथ संबंध-संपर्क स्थापित किये बिना वह सारे विश्वके साथ एकताका अनुभव नहीं कर सकता या अपने अहंकारको दबा नहीं सकता। मनुष्यका सामाजिक परस्परावलंबन उसे अपनी श्रद्धाकी परीक्षा करने तथा सत्यकी कसौटी पर खरा सिद्ध होनेका अवसर प्रदान करता है। अगर मनुष्य ऐसी स्थितिमें रखा गया होता अथवा अपनेको ऐसी स्थितिमें रख सकता होता कि उसे अपने मानव-बंधुओं पर जरा भी निर्भर न रहना पड़ता तो वह इतना अभिमानी और इतना मदोन्मत्त हो जाता कि दुनियाके लिए सच्चे अर्थमें वह एक भार और आफत बन जाता। समाज पर मनुष्यकी निर्भरता उसे नम्रताका पाठ सिखाती है। यह तो स्पष्ट है कि मनुष्यको अपनी अधिकतर बुनियादी जरूरतें स्वयं ही पूरी करने योग्य बनना चाहिये। लेकिन यह भी मेरे मनमें उतना ही स्पष्ट है कि जब स्वावलंबनकी वृत्तिको समाजसे बिलकुल ही अलग हो जानेकी हद तक ले जाया जाता है, तब वह लगभग पापका रूप ले लेती है। मनुष्य कपास उगानेसे लेकर सूत कातने तककी सारी विभिन्न क्रियाओंमें भी स्वावलंबी नहीं बन सकता। एक या दूसरी मंजिल पर उसे अपने परिवारके लोगोंकी सहायता लेनी पड़ती है। और अगर कोई आदमी

अपने परिवारकी सहायता ले सकता हो तो फिर वह अपने पड़ोसियोंकी सहायता क्यों नहीं ले सकता? वरना 'वसुधैव कुटुम्बकम्' — सारा विश्व मेरा परिवार है इस महावचनका क्या महत्त्व है? ८

आत्मा कुटुम्ब देश और जगतके प्रति चार पृथक् धर्म नहीं हैं। अपना अथवा कुटुम्बका अकल्याण करके हम देशका कल्याण नहीं कर सकते। इसी तरह जगतका अकल्याण करके हम देशकी सेवा नहीं कर सकते। इसका फलितार्थ यह होता है कि हम स्वयं मरकर कुटुम्बको जिलायें कुटुम्ब मरकर देशको जिलावे और देश मरकर जगतको जिलावे। परन्तु बलिदान शुद्ध होना चाहिये। इसलिए आरम्भ आत्मशुद्धिसे होना चाहिये। आत्मशुद्धि होने पर प्रतिक्षणके कर्तव्यका पता अपने-आप चल जाता है। ९

मनुष्यका मार्ग यही है कि हम सारे जगतको अपना मित्र बनायें और संपूर्ण मानव-परिवारको एक ही मानें। जो मनुष्य अपने धर्मके अनुयायियोंमें और दूसरे धर्मके अनुयायियोंमें भेद करता है, वह अपने धर्मके अनुयायियोंको गलत शिक्षा देता है और घृणा तथा अधर्मका मार्ग खोलता है। १

मैं हिंदुस्तानकी आजादीके लिए जीता हूं और उसीके लिए मरूंगा क्योंकि यह सत्यका एक भाग है। केवल स्वतंत्र हिंदुस्तान ही सच्चे ईश्वरकी पूजा कर सकता है। मैं हिंदुस्तानकी आजादीके लिए काम करता हूं क्योंकि मेरा स्वदेशी-धर्म मुझे सिखाता है कि हिंदुस्तानमें पैदा होने और उसकी संस्कृतिकी विरासत पानेके कारण मैं उसकी सेवा करनेके लिए सबसे योग्य हूं और मेरी सेवा पर उसका सबसे पहला अधिकार है। लेकिन मेरा देशप्रेम दूसरोंका बहिष्कार करनेवाला नहीं है उसके पीछे विचार यह है कि वह न केवल किसी दूसरे राष्ट्रको नुकसान नहीं पहुंचायेगा बल्कि सच्चे अर्थमें सारे राष्ट्रोंको लाभ पहुंचायेगा। हिंदुस्तानकी मेरी कल्पनाकी आजादी दुनियाके लिए कभी खतरेका कारण नहीं बन सकती। ११

हम अपने देशके लिए स्वतंत्रता चाहते हैं परन्तु दूसरे देशोंको हानि पहुंचाकर या उनका शोष[illegible] नहीं न दूसरे देशोंका अपमान करनेके

लिए ही हम अपने देशकी स्वतंत्रता चाहते हैं। अगर भारतकी स्वतंत्रताका अर्थ इंग्लैंडका नाश या अंग्रेजोंका लोप हो तो भारतकी ऐसी स्वतंत्रता मुझे नहीं चाहिये। मैं अपने देशकी स्वतंत्रता इसलिए चाहता हूं कि दूसरे देश मेरे स्वतंत्र देशसे कुछ सीख सकें और मेरे देशकी साधन-सम्पत्तिका उपयोग मानव-जातिके कल्याणके लिए हो सके। जिस प्रकार देशप्रेमका धर्म आज हमें सिखाता है कि व्यक्तिको परिवारके लिए मरना चाहिये परिवारको गांवके लिए मरना चाहिये गांवको जिलेके लिए मरना चाहिये जिलेको प्रांतके लिए मरना चाहिये और प्रांतको देशके लिए मरना चाहिये उसी प्रकार देशको इसलिए स्वतंत्र होना चाहिये कि जरूरत पड़ने पर वह संसारके हितके लिए मर सके। इसलिए राष्ट्रीयताका मेरा प्रेम अथवा राष्ट्रीयताका मेरा विचार यह है कि मेरा देश स्वतंत्र होना चाहिये और जरूरत पड़ने पर सारे देशको मर मिटना चाहिये ताकि मानव-जाति जीवित रह सके। मेरी राष्ट्रीयतामें किसी जातिकी घृणाके लिए कोई स्थान ही नहीं है। हमारी राष्ट्रीयता ऐसी होनी चाहिये। १२

राज्य द्वारा खड़ी की गई सीमाओंको पार करके अपने पड़ोसियों तक अपनी सेवाओंको फैलानेकी कोई सीमा ही नहीं है। ईश्वरने ऐसी सीमाएं कभी नहीं बनाईं। १३

मेरा लक्ष्य सारे जगतसे मित्रता साधना है और मैं महान्से महान प्रेमको अन्यायके प्रबलसे प्रबल विरोधके साथ मिला सकता हूं। १४

मेरी दृष्टिमें देशप्रेमका वही स्थान है जो मानव-प्रेमका है। मैं देशप्रेमी हूं क्योंकि मैं मानव हूं और मानव-प्रेमी हूं। मेरा देशप्रेम सबसे अलग और तटस्थ रहनेवाला नहीं है। मैं भारतकी सेवा करनेके लिए इंग्लैंड या जर्मनीको नुकसान नहीं पहुंचाऊंगा। मेरी जीवन-योजनामें साम्राज्यवादके लिए कोई स्थान नहीं है। देशप्रेमीका कानून मानव-प्रेमीके कानूनसे भिन्न नहीं है। और अगर कोई देशप्रेमी केवल बातोंमें ही मानव-प्रेम जाहिर करता है, तो उसके देशप्रेममें उतनी कमी है। व्यक्तिगत और राजनीतिक कानूनमें कोई विरोध नहीं है। १५

हमारा यह असहयोग न तो अंग्रेजोंके साथ है न पश्चिमी दुनियाके साथ है। हमारा असहयोग उस प्रथाके साथ है जिसे अंग्रेजोंने इस देशमें प्रचलित किया है, ईश्वर-शून्य सभ्यताके साथ है तथा उसमें से उत्पन्न होनेवाले लोभ और गरीबोंके शोषणके साथ है। हमारा असहयोग हमारी वृत्तियोंको अन्तर्मुख करनेका प्रयत्न है। हमारे असहयोगका अर्थ है अंग्रेज अधिकारियोंसे उनकी शर्तों पर सहयोग करनेसे इनकार करना। हम तो उन्हें कहते हैं : आइये हम जो शर्तें आपके सामने पेश करते हैं उन पर हमसे सहयोग कीजिये। इसमें हमारा आपका और सारे संसारका भला है। हमें स्थानभ्रष्ट होनेसे तो बिलकुल इनकार कर देना चाहिये। डूबता हुआ आदमी दूसरेको कैसे बचा सकता है? दूसरोंको बचानेके लायक होनेके लिए पहले हमको खुद अपने बचावकी कोशिश करनी चाहिये। भारतकी राष्ट्रीयता न तो स्वार्थी है, न उद्धत है, न विनाशक ही है। वह तो पोषक है, धार्मिक है अतएव जगतके लिए कल्याणकारी है। किंतु भारतको दूसरोंके लिए अपनी जान देनेकी महत्त्वाकांक्षा रखनेसे पहले यह सीखना चाहिये कि वह खुद कैसे जीवित रहे। १९

मैं नहीं चाहता कि इंग्लैण्ड हारे या उसका अपमान हो। सेंट पॉलके गिरजाघरको नुकसान पहुंचनेसे मुझे उतना ही आघात लगता है जितना काशी विश्वनाथके मंदिरको या जुम्मा मसजिदको नुकसान पहुंचनेसे लगेगा। मैं अपनी जान देकर भी काशी विश्वनाथके मंदिर और जुम्मा मसजिदको बचाऊंगा तथा सेंट पॉलके गिरजाघरको भी बचाऊंगा लेकिन उनको बचानेके लिए मैं एक भी जान नहीं लूंगा। यह मेरा ब्रिटिश प्रजासे बुनियादी भेद है। लेकिन मेरी हमदर्दी तो उसके साथ है ही। फिर अंग्रेज, कांग्रेसजनों और अन्य लोगों तक मेरी आवाज पहुंचे वे बिना किसी गलतफहमीके यह जान लें कि मेरी हमदर्दी कहां है। अंग्रेजोंके लिए मेरी हमदर्दी इसलिए नहीं है कि मैं अंग्रेजोंसे प्यार करता हूं और जर्मनोंसे नफरत करता हूं। मैं नहीं मानता कि एक राष्ट्रके नाते जर्मन या इटालियन प्रजा अंग्रेज प्रजासे ज्यादा बुरी है। हम सब एक ही मिट्टीके बने हैं हम सब विशाल मानव परिवारके सदस्य हैं। मैं कोई भेद करनेसे इनकार करता हूं। मैं हिंदु

स्तानियोंके लिए किसी अच्छाईका दावा नहीं कर सकता। हमारे भीतर वे ही गुण और वे ही दुर्गुण हैं जो उनके भीतर हैं। मानव-जातिको ऐसे तंग बाड़ोंमें नहीं बांटा गया है कि हम एक बाड़ेसे दूसरे बाड़ेमें जा ही न सकें। भले उसके हजार विभाग हो जायं फिर भी वे सब एक दूसरेसे सम्बद्ध ही रहेंगे। मैं यह नहीं कहूंगा कि भारत सुखी और समृद्ध होना चाहिये भले सारा संसार नष्ट हो जाय। यह मेरा संदेश नहीं है। भारत सुखी और समृद्ध होना चाहिये लेकिन इसकी उस स्थितिका मेल दुनियाके दूसरे राष्ट्रोंके कल्याणके साथ बैठना चाहिये। मैं भारतको और भारतकी स्वतंत्रताको तभी बहुमूल्य रख सकता हूं जब मैं केवल पृथ्वीके इस छोटेसे देश भारतमें बसे हुए मानव-परिवारके लिए ही नहीं बल्कि संपूर्ण मानव-परिवारके लिए सद्भावना रखूं। भारत दूसरे अधिक छोटे राष्ट्रोंकी तुलनामें तो काफी बड़ा है, लेकिन सारे विश्व या संपूर्ण ब्रह्माण्डकी तुलनामें भारतकी क्या बिसात है? १७

स्थायी शान्तिकी संभावनामें विश्वास न करना मनुष्यके स्वभावमें रहे ईश्वरीय अंशमें अविश्वास करनेके बराबर है। इसके लिए आज तक अपनाये गये तरीके इसलिए असफल रहे कि जिन लोगोंने शान्तिके लिए प्रयत्न किये उनमें दृढ़ धर्मनिष्ठाका अभाव था। उन्होंने अपनी इस कमीको महसूस नहीं किया हो सो बात नहीं। आवश्यक शर्तोंके आंशिक पालनसे शान्ति प्राप्त नहीं होती जैसे आवश्यक शर्तोंके पूर्ण पालनके अभावमें कोई रासायनिक सम्मिश्रण सिद्ध होना असंभव रहता है। अगर मनुष्य-जातिके माने हुए नेता जिनके हाथमें संहारके साधन चलानेका नियंत्रण है, इन अस्त्रोंके उपयोगको — उनके परिणामोंको पूरी तरह समझ कर — छोड़ दें तो स्थायी शान्ति प्राप्त की जा सकती है। दुनियाके बड़े राष्ट्र जब तक अपनी साम्राज्यवादी आकांक्षाओंको नहीं छोड़ते तब तक स्थायी शान्ति बिलकुल असंभव है। साथ ही जब तक बड़े राष्ट्र आत्मघातक प्रतिस्पर्धामें अपनी जरूरतोंको बढ़ानेमें और इसलिए भौतिक संपत्तिको बढ़ानेमें विश्वास रखना नहीं छोड़ेंगे तब तक स्थायी शान्तिकी प्राप्ति असंभव दिखाई देती है। १८

मैं यह अवश्य सुझाता हूं कि [अहिंसाका] सिद्धांत राज्यों और राज्योंके बीचके संबंधोंमें भी उपयोगी साबित हो सकता है। मैं जानता हूं कि अगर मैं इस संबंधमें गत महायुद्धका उल्लेख करूं तो मेरी स्थिति नाजुक हो जायगी। लेकिन स्थितिको स्पष्ट करनेके लिए मुझे ऐसा करना ही चाहिये। जैसा मैंने उसे समझा है, दोनों पक्षोंका यह युद्ध अपनी अपनी सत्ता बल और साम्राज्य बढ़ानेका युद्ध था। यह कमजोर जातियोंके शोषणसे प्राप्त होनेवाली संपत्तिको आपसमें बांटनेका युद्ध था — या अधिक सभ्य शब्दोंमें यह विश्व-व्यापारके बाजारोंको आपसमें बांट लेनेके लिए लड़ा गया युद्ध था। हम देखेंगे कि यूरोपमें सामान्य निःशस्त्रीकरणके आरम्भके पहले — यदि यूरोप अपने आत्मघात पर न तुला हो तो एक न एक दिन ऐसा करना उसके लिए लाजिमी होगा — किसी न किसी राष्ट्रको भारी जोखिम उठाकर निःशस्त्रीकरणके लिए आगे बढ़ना होगा। और यदि ऐसा समय हमारे सौभाग्यसे आया तो उस राष्ट्रमें अहिंसा इस दरजे तक पहुंच चुकेगी कि सब राष्ट्र उसे आदरकी दृष्टिसे देखने लगेंगे। उसके निर्णयोंमें गलतीके लिए जगह न रहेगी उसके निश्चय अटल होंगे उसमें स्वार्थ-त्यागकी भारी क्षमता होगी और वह दूसरे राष्ट्रोंके लिए भी उतना ही जीवित रहना चाहेगा जितना कि खुद अपने लिए। १९

अगर हथियारोंके लिए आजकी पागलपनभरी दौड़ — स्पर्धा — जारी रही तो निश्चित रूपसे उसका परिणाम ऐसे मानव-संहारमें आयेगा जैसा संसारके इतिहासमें पहले कभी नहीं हुआ। अगर कोई विजेता बचा रहा तो जिस राष्ट्रकी विजय होगी उसके लिए वह विजय ही जीवित मृत्यु जैसी बन जायगी। सर्वनाशका जो खतरा आज दुनियाके सिर पर झूल रहा है, उससे बचनेका इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग नहीं है कि अहिंसाकी पद्धतिको उसमें समाये हुए सारे भव्य फलितार्थोंके साथ साहसपूर्वक और बिना किसी शर्तके स्वीकार कर लिया जाय। २०

अगर दुनियामें लोभ नहीं होगा तो हथियारोंके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रह जायगी। अहिंसाके सिद्धांतका यह तकाजा है कि हम किसी भी प्रकारके शोषणसे पूरी तरह दूर रहें। २१

शोषणकी भावनाके मिटते ही हथियारोंका विशाल समूह दुनियाके राष्ट्रोंको निश्चित रूपसे असह्य बोझ मालूम होने लगेगा। हथियारोंका सच्चा त्याग तब तक संभव नहीं हो सकता जब तक दुनियाके राष्ट्र एक-दूसरेका शोषण करना बंद नहीं करते। २२

यदि यह दुनिया एक न बन सके तो मैं ऐसी दुनियामें रहना पसंद नहीं करूंगा। २३

७

मनुष्य और मशीन

मुझे स्वीकार करना चाहिये कि मैं अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्रमें न सिर्फ स्पष्ट भेद नहीं करता बल्कि कोई भेद ही नहीं करता। जिस अर्थशास्त्रसे व्यक्ति या राष्ट्रके नैतिक कल्याणको हानि पहुंचती हो उसे मैं अनैतिक और इसलिए पापपूर्ण कहूंगा। उदाहरणके लिए, जो अर्थशास्त्र एक देशको किसी दूसरे देशका शोषण करनेकी अनुमति देता है वह अनैतिक शास्त्र है। १

ध्येय लोगोंको सुखी बनाना और साथ साथ उनकी संपूर्ण बौद्धिक और नैतिक उन्नति करना है। नैतिक उन्नतिसे यहां मेरा मतलब आध्यात्मिक उन्नतिसे है। यह ध्येय विकेन्द्रीकरणसे सध सकता है। केन्द्रीकरणकी पद्धतिका अहिंसक समाज-रचनाके साथ मेल नहीं बैठता। २

मेरा स्पष्ट मत है और मैं उसे साफ शब्दोंमें कहता हूं कि बड़े पैमाने पर माल उत्पन्न करनेका पागलपन ही दुनियाकी मौजूदा संकटमय स्थितिके लिए जिम्मेदार है। एक क्षणके लिए मान भी लिया जाय कि यंत्र मानव-समाजकी सारी आवश्यकताएं पूरी कर सकते हैं, तो भी उनका यह परिणाम तो होगा ही कि उत्पादन कुछ विशिष्ट क्षेत्रोंमें केन्द्रित हो जायगा और इसलिए वितरणकी व्यवस्थाके लिए हमें [illegible] प्राणायाम करना पड़ेगा।

दूसरी ओर जिन क्षेत्रोंमें वस्तुओंकी आवश्यकता है वहीं उनका उत्पादन हो और वहीं उनका वितरण हो तो वितरणका नियंत्रण अपने-आप हो जाता है। उसमें धोखा-धड़ीके लिए कम गुंजाइश होती है और सट्टेके लिए तो बिलकुल नहीं होती। ३

बड़े पैमानेके उत्पादनमें उपभोक्ताकी सच्ची जरूरतोंका ध्यान नहीं रखा जाता। अगर बड़े पैमानेका उत्पादन अपने-आपमें एक हितकारी वस्तु हो तो उसे अनंत गुना बढ़ सकना चाहिये। लेकिन यह निश्चित रूपसे बताया जा सकता है कि बड़े पैमानेका उत्पादन अपने साथ अपनी मर्यादायें लेकर चलता है। अगर दुनियाके समस्त देश बड़े पैमानेकी उत्पादन पद्धतिको अपना लें तो उनके मालके लिए बड़े बाजार नहीं मिलेंगे। उस स्थितिमें बड़े पैमानेके उत्पादनको रुकना ही होगा। ४

मैं नहीं मानता कि उद्योगीकरण हर हालतमें किसी देशके लिए जरूरी ही है। भारतके लिए तो वह और भी कम जरूरी है। मेरा विश्वास है कि आजाद भारत दुःखसे कराहती हुई दुनियाके प्रति अपना कर्तव्य तभी अदा कर सकता है, जब वह अपने हजारों-लाखों गांवोंकी असंख्य झोंपड़ियोंका विकास करके तथा दुनियाके साथ शांतिपूर्वक रहकर सादा किन्तु उदात्त जीवन अपनाये। धनकी पूजाने हम पर भौतिक समृद्धिके जिस जटिल और तीव्र गतिवाले जीवनको लाद दिया है उसके साथ उच्च चिंतन का मेल नहीं बैठता। जीवनका संपूर्ण सौंदर्य तभी खिल सकता है जब हम उच्च कोटिका जीवन बितानेकी कला सीखें।

खतरोंवाला जीवन जीनेमें रोमांच और उत्तेजनाका अनुभव हो सकता है। लेकिन खतरोंका सामना करते हुए जीनेमें और खतरोंका जीवन जीनेमें भेद है। जो आदमी जंगली जानवरोंसे और उनसे भी ज्यादा जंगली मनुष्योंसे भरे जंगलमें अकेले बिना बन्दूक और केवल ईश्वरके सहारे रहनेकी हिम्मत करता है, वह खतरोंका सामना करते हुए जीता है। दूसरा आदमी लगातार हवामें उड़ता रहता है और आश्चर्यसे देखनेवाले दर्शक-समुदायकी वाहवाही लूटनेके खयालसे नीचेकी ओर उड़ान करता है वह खतरेका

जीवन जीता है। पहले आदमीका जीवन रसपूर्ण है, दूसरेका रस-हीन है। ५

वर्तमान अराजकता और भुखमरीका कारण क्या है? इसका कारण है मानवका शोषण। मैं इसे बलवान राष्ट्रों द्वारा निर्बल राष्ट्रोंका शोषण नहीं बल्कि बन्धु राष्ट्रों द्वारा दूसरे बन्धु राष्ट्रोंका शोषण कहूंगा। और यंत्रोंका मेरा बुनियादी विरोध इस सत्यके आधार पर खड़ा है कि यह ही वह चीज है जिसने इन राष्ट्रोंको दूसरे राष्ट्रोंका शोषण करनेकी क्षमता दी है। ६

यदि मेरे पास सत्ता होती तो मैं इस पद्धतिको आज ही नष्ट कर देता। यदि मुझे विश्वास होता कि विनाशक शस्त्रोंसे इसका नाश सम्भव है तो मैं अवश्य विनाशक शस्त्रोंका प्रयोग करता। ऐसे शस्त्रोंका उपयोग मैं इसलिए नहीं करता कि वे इस पद्धतिको हमेशा कायम रखेंगे, भले मैं इस पद्धतिके वर्तमान शासकोंका नाश कर सकूँ। जो लोग पद्धतियोंके बदले उनके नियामकोंका नाश करना चाहते हैं वे खुद इन पद्धतियोंको अपना कर उन लोगोंसे बुरे बन जाते हैं जिन्हें उन्होंने इस गलत विश्वाससे मारा था कि आदमियोंके साथ उनकी पद्धतियां भी मर जाती हैं। वे बुराईकी जड़को नहीं पहचानते। ७

मशीनोंका अपना स्थान है; उन्होंने अपनी जड़ जमा ली है। परन्तु उन्हें जरूरी मानव-श्रमका स्थान नहीं लेने देना चाहिये। सुधरा हुआ हल अच्छी चीज है। परन्तु यदि संयोगसे कोई एक आदमी अपने किसी यांत्रिक आविष्कार द्वारा भारतकी सारी भूमि जोत सके और खेतीकी तमाम पैदावार पर नियन्त्रण कर ले और यदि करोड़ों लोगोंके पास कोई और धंधा न हो, तो वे भूखों मरेंगे और निकम्मे हो जानेके कारण जड़ बन जायेंगे — जैसे कि आज भी बहुतसे लोग बन गये हैं। हर क्षण यह डर बना रहता है कि और भी अनेक लोगोंकी वैसी ही दुर्दशा हो जायगी। ८

मैं गृह उद्योगकी मशीनमें हर प्रकारके सुधारका स्वागत करूंगा। परन्तु मैं जानता हूँ कि विद्युत्-शक्तिसे चलनेवाले तकुए जारी करके हाथसे

कातनेवाले लोगोंको छुटा देना अन्याय है यदि इसके साथ करोड़ों किसानोंको उनके घरोंमें कोई धंधा मुहैया करनेकी हमारी तैयारी न हो। ८

मेरा विरोध यंत्रोंके संबंधमें फैले हुए दीवानेपन से है यंत्रोंसे नहीं। परिश्रमका बचाव करनेवाले यंत्रोंके संबंधमें लोगोंका जो दीवानापन है उसीसे मेरा विरोध है। परिश्रमकी बचत इस हद तक की जाती है कि हजारों लोगोंको आखिरमें भूखों मरना पड़ता है और उन्हें तन ढकने तकको कपड़ा नहीं मिलता। मुझे भी समय और परिश्रमका बचाव अवश्य करना है लेकिन वह मुट्ठीभर आदमियोंके लिए नहीं बल्कि समस्त मानव-जातिके लिए। समय और परिश्रमका बचाव करके मुट्ठीभर आदमी धनाढ्य हो बैठें, यह मेरे लिए असह्य है। आज यंत्रोंके कारण मुट्ठीभर आदमी लाखों लोगोंकी पीठ पर सवार हो कर बैठे हैं और उन्हें सता रहे हैं। यंत्रोंको चलानेके मूलमें मनुष्यका लोभ है, धन-तृष्णा है, जन-कल्याणकी भावना नहीं है। यंत्रोंके इस दुरुपयोगके विरुद्ध मैं अपनी पूरी शक्तिसे लड़ रहा हूं।

मनुष्यका विचार सर्वोपरि है। जब तक यंत्र मनुष्य पर हमला नहीं करता तब तक तो उसे सहन किया जा सकता है। मनुष्यको जब तक वह पंगु नहीं बना देता तब तक भी उसे सहा जा सकता है। उदाहरणके लिए, इसमें मैं विचारपूर्ण अपवाद रखूंगा। सिंगरकी सीनेकी मशीनको लीजिये। दुनियाकी कुछ बड़ी उपकारक वस्तुओंमें यह भी एक है। प्रेमशौर्यकी कथा इस खोजके साथ जुड़ी हुई है। सिंगरने देखा कि उसकी पत्नी सारे दिन कपड़े पर झुक-झुक कर और आंखों पर जोर देकर धीरे धीरे टांके लगाती रहती है और थक कर चूर हो जाती है। उसके दिलमें यह बात चुभ गई और अंतमें उसने अपने प्रेमके बल पर सीनेकी मशीन खोज निकाली। इससे उसने केवल अपनी पत्नीका ही परिश्रम नहीं बचाया है, लेकिन हरएक ऐसे व्यक्तिका परिश्रम बचाया है जो उसे खरीद सकता है।

मैं तो मजदूरोंकी स्थितिमें परिवर्तन लाना चाहता हूं। उसके लिए यह धनसंपत्तिभरी छीना-झपटी बंद होनी चाहिये और मजदूरको न केवल जीवन-वेतनका आश्वासन मिलना चाहिये बल्कि ऐसे दैनिक कामका भी आश्वासन मिलना चाहिये जो सिर्फ कमरतोड़ मेहनतका ही काम न हो।

इन हालतोंमें मशीन उसे चलानेवालेके लिए उतनी ही सहायक होगी जितनी कि राज्यके लिए या उसके मालिकके लिए होगी। आजकी पागलपनभरी छीना-झपटी बंद हो जायगी और मजदूर (जैसा कि मैंने कहा है) आकर्षक और आदर्श स्थितिमें काम करेगा। यह सिर्फ अनेक अपवादोंमें से एक अपवाद है जो मेरे मनमें है। सीनेकी मशीनके पीछे आविष्कारकका प्रेम था। मशीनके प्रश्नमें मनुष्यका सबसे ऊंचा स्थान होना चाहिये। मशीनको दाखिल करनेमें हमारा उद्देश्य मनुष्यका श्रम बचाना होना चाहिये और प्रामाणिक मानव-सेवा — न कि धनका लोभ — उसके पीछे एक प्रेरक बल होना चाहिये। आप लोभका स्थान प्रेमको दें तो सारी बातें ठीक हो जायगी। ९

हाथ-कताईका यह उद्देश्य नहीं है — ऐसा कोई दावा भी नहीं रखा गया है — कि वह किसी मौजूदा उद्योगसे प्रतिस्पर्धा करके उसे हटा दे। एक भी समर्थ पुरुषको अपने दूसरे अधिक आमदनीवाले धन्धोंसे हटाना भी इसका ध्येय नहीं है। इसके लिए एकमात्र यही दावा किया जाता है कि हाथ-कताई अकेली ही भारतकी महाविकट समस्याका शीघ्र व्यावहारिक और स्थायी हल पेश कर सकती है। भारतकी वह महाविकट समस्या है, उसकी आबादीके एक बहुत बड़े भागका खेतीके अलावा कोई सहायक धंधा न रहनेके कारण छह महीनों तक लाचारीसे बेकार रहना और उसके फलस्वरूप भूखों मरना। १

चरखेके उद्योगके लिए किसी भी पोषक उद्योगको छोड़ देनेकी मैंने कभी वकालत तक नहीं की है तो फिर मैं उसके लिए सिफारिश तो कर ही कैसे सकता हूं? हिन्दुस्तानमें करोड़ों लोग निकम्मे रहते हैं केवल इसी एक बुनियाद पर तो चरखेकी प्रवृत्तिका आरम्भ किया गया है। मुझे यह बात स्वीकार करनी चाहिये कि यदि हिन्दुस्तानमें ऐसे निकम्मे लोग नहीं हैं तो फिर इस देशमें चरखेके लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। ११

भूखों मरता आदमी अन्य सब बातोंसे पहले अपनी भूख बुझानेका ही विचार करता है। वह रोटीका एक टुकड़ा पानेके लिए अपनी स्वतंत्रता

और अपना सब-कुछ बेच डालेगा। भारतमें लाखों आदमियोंकी आज ऐसी ही स्थिति है। उनकी दृष्टिमें स्वतंत्रता, ईश्वर और ऐसे दूसरे सब शब्द निरर्थक हैं। वे उनके कानोंको कड़वे लगते हैं। अगर हम इन लोगोंमें स्वतंत्रताकी भावना पैदा करना चाहते हैं तो हमें उन्हें काम देना होगा — जिसे वे अपने उजाड़ घरोंमें आसानीसे कर सकें और जो उन्हें कमसे कम पेट भरनेके साधन मुहैया कर सके। यह काम केवल चरखा ही कर सकता है। और जब वे अपने पैरों पर खड़े हो जायेंगे तथा अपनी आजीविका चलानेकी क्षमता प्राप्त कर लेंगे तब हम उनके सामने स्वतंत्रता, कांग्रेस आदिके बारेमें बातें करनेकी स्थितिमें आ सकेंगे। इसलिए जो लोग उन्हें काम देंगे और उनके लिए रोटीका साधन जुटायेंगे वे उनके मुक्तिदाता बनेंगे और वे ही लोग उनमें स्वतंत्रताकी भूख पैदा कर सकेंगे। १२

शहरके लोगोंको शायद ही इस बातका पता होगा कि भारतके आधपेट रहनेवाले करोड़ों लोग किस तरह दिन पर दिन मृतप्राय होते जा रहे हैं। उन्हें इस बातका पता तक नहीं है कि उनके ये क्षुद्र ऐश-आराम और कुछ नहीं भारतको चूसनेवाले विदेशी पूंजीपतियोंका घर भरनेका जो परिश्रम वे करते हैं उसकी मिली दलाली-भर है और यह सारा मुनाफा तथा उनकी दलाली दोनों भारतकी गरीब प्रजाको निचोड़ कर निकाली गई चीज है। वे शायद ही यह जानते होंगे कि भारतमें कानूनके अनुसार स्थापित विदेशी सरकार इन असहाय भारतीयोंका खून चूसनेके लिए ही चलाई जा रही है। किसी भी तरहके सिद्धान्तवाद अथवा अंकों और आंकड़ों तथा किसी भी तरहके मायावी कोष्ठकोंसे उस सबूतको उड़ाया नहीं जा सकता जो भारतके देहात आज अपने चलते-फिरते नर-कंकालोंको हमारी आंखोंके सामने पेश करके दे रहे हैं। मेरे दिलमें तो रत्तीभर शक नहीं कि ईश्वरके सदृश यदि कोई मालिक दुनियाके ऊपर हो तो उसके दरबारमें इंग्लैण्डको तथा भारतके समस्त नगरवासियोंको इस अपराधके लिए — मानव-जातिके प्रति किये गये उस अपराधके लिए जिसका सानी इतिहासमें शायद ही मिल सके — जवाब देना पड़ेगा। १३

मैं बड़ीसे बड़ी मशीनोंके उपयोगकी हिमायत करूंगा, अगर उससे हिंदुस्तानकी कंगाली दूर हो जाय और उसके फलस्वरूप पैदा होनेवाला आलसीपन मिट जाय। मैंने हिंदुस्तानकी कंगाली दूर करनेका तथा काम और पैसेके अभावको असंभव बनानेका एकमात्र अचूक साधन चरखेको ही बताया है। चरखा खुद एक कीमती मशीन है और हिंदुस्तानकी विशेष परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए मैंने अपने नम्र तरीकेसे उसमें सुधार करनेका प्रयत्न किया है। १४

मैं कहूंगा कि अगर गांवोंका नाश होता है, तो भारतका भी नाश हो जायगा। उस हालतमें भारत भारत नहीं रहेगा। दुनियामें उसका जो मिशन है वह नष्ट हो जायगा। गांवोंमें फिरसे जान तभी आ सकती है जब वहांकी लूट-खसोट बंद हो जाय। बड़े पैमाने पर मालकी पैदावार होनेसे व्यापारिक प्रतिस्पर्धा तथा मालके लिए बाजारकी समस्याएं खड़ी होंगी और उनकी वजहसे ग्रामवासियोंका प्रत्यक्ष या परोक्ष शोषण अवश्य होगा। इसलिए हमें इस बातकी सबसे ज्यादा कोशिश करनी चाहिये कि गांव हर बातमें स्वावलंबी और स्वयंपूर्ण हो जायं। वे अपनी जरूरतें पूरी करनेके लिए चीजें तैयार करें। ग्रामोद्योगके इस अंशकी अगर अच्छी तरह रक्षा की जाय तो गांववाले खुद बना और बरत सकें ऐसे आधुनिक यंत्रों और औजारोंसे काम लें इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। शर्त सिर्फ यही है कि दूसरोंको लूटनेके लिए उनका उपयोग नहीं होना चाहिये। १५

८

विपुलताके बीच दरिद्रता

जो अर्थशास्त्र नैतिक मूल्योंकी उपेक्षा करता है अथवा अवहेलना करता है वह झूठा अर्थशास्त्र है। अर्थशास्त्रके क्षेत्रमें अहिंसाके कानूनको ले जानेका अर्थ है उस क्षेत्रमें नैतिक मूल्योंको दाखिल करना। आन्तर-राष्ट्रीय व्यापारका नियमन करनेमें इन नैतिक मूल्योंका ध्यान रखना जरूरी है। १

मेरी रायमें भारतकी — न सिर्फ भारतकी बल्कि सारी दुनियाकी — अर्थ-रचना ऐसी होनी चाहिये जिससे किसीको भी अन्न और वस्त्रके अभावकी तकलीफ न सहनी पड़े। दूसरे शब्दोंमें हरएकको इतना काम अवश्य मिल जाना चाहिये कि वह अपने खाने-पहननेकी जरूरतें पूरी कर सके। और यह आदर्श निरपवाद रूपसे तभी कार्यान्वित किया जा सकता है, जब जीवनकी प्राथमिक आवश्यकताओंके उत्पादनके साधन जनताके नियन्त्रणमें रहें। वे हरएकको बिना किसी बाधाके उसी तरह प्राप्त होने चाहिये जिस तरह कि भगवानकी दी हुई हवा और पानी हमें प्राप्त हैं; किसी भी हालतमें उन्हें दूसरोंके शोषणके लिए चलाये जानेवाले व्यापारका साधन नहीं बनना चाहिये। किसी भी देश, राष्ट्र या समुदायका उन पर एकाधिकार अन्यायपूर्ण होगा। हम आज न केवल अपने दुःखी देशमें बल्कि दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें भी जो गरीबी देखते हैं उसका कारण इस सरल सिद्धान्तकी उपेक्षा ही है। २

मेरा आदर्श धनका समान वितरण है। लेकिन जहां तक मैं देख सकता हूं यह आदर्श सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसलिए मैं धनके न्यायपूर्ण वितरणके लिए काम करता हूं। ३

प्रेम और वर्जनशील परिग्रह एकसाथ कभी नहीं रह सकते। सिद्धान्तके तौर पर, जब प्रेम परिपूर्ण होता है तब अपरिग्रह भी परिपूर्ण होना चाहिये।

यह शरीर हमारा अंतिम परिग्रह है। इसलिए कोई मनुष्य केवल तभी संपूर्ण प्रेमको व्यवहारमें ला सकता है और पूर्णतया अपरिग्रही हो सकता है, जब कि वह मानव-जातिकी सेवाके खातिर मृत्युका आलिंगन करने तथा देहका त्याग करनेको भी तैयार रहता है।

लेकिन यह सिद्धान्तके रूपमें ही सत्य है। वास्तविक जीवनमें हम मुश्किलसे ही संपूर्ण प्रेमका व्यवहार कर सकते हैं, क्योंकि यह शरीर परिग्रहके रूपमें हमेशा हमारे साथ रहनेवाला है। मनुष्य सदैव अपूर्ण रहेगा और फिर भी वह सदैव पूर्ण बननेकी कोशिश करेगा। अतएव जब तक हम जीवित रहेंगे तब तक पूर्ण प्रेम या पूर्ण अपरिग्रह अप्राप्य आदर्शके रूपमें ही रहेगा। परन्तु उस आदर्शकी ओर बढ़नेकी हमें निरन्तर कोशिश करनी चाहिये। ४

मैं कहता हूं कि हम सब एक तरहसे चोर हैं। यदि मैं ऐसी कोई वस्तु लेता हूं जिसकी मुझे अपने तात्कालिक उपयोगके लिए जरूरत नहीं है और उसे अपने पास रखता हूं, तो मैं दूसरे किसीसे उस वस्तुकी चोरी करता हूं। मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि प्रकृतिका यह बुनियादी नियम है — और इसमें अपवादकी जरा भी गुंजाइश नहीं है — कि प्रकृति हमारी आवश्यकताओंके लिए प्रतिदिन पर्याप्त मात्रामें उत्पन्न करती है, और यदि प्रत्येक मनुष्य उतना ही ले जितनेकी उसे आवश्यकता है और उससे अधिक न ले तो इस दुनियामें गरीबी न रहेगी और एक भी आदमी इस दुनियामें भूखसे नहीं मरेगा। लेकिन जब तक हमारे बीच यह असमानता मौजूद है तब तक हम सब चोरी करते हैं। मैं समाजवादी नहीं हूं और मैं संपत्तिवालोंसे उनकी संपत्ति छीनना नहीं चाहता। परन्तु मैं यह जरूर कहता हूं कि हममें से जो लोग व्यक्तिगत रूपमें अंधकारसे निकलकर प्रकाशकी ओर जाना चाहते हैं उन्हें इस नियमका पालन अवश्य करना चाहिये। मैं किसीसे कोई वस्तु छीनना नहीं चाहता। ऐसा करके मैं अहिंसाके नियमका भंग करूंगा। अगर दूसरे किसीके पास मुझसे कोई चीज ज्यादा हो तो भले रहे। परन्तु जहां तक मेरे अपने जीवनको नियमित बनानेका सवाल है मैं जरूर यह कहूंगा कि मैं ऐसी कोई वस्तु

अपने पास रखनेका साहस नहीं कर सकता जिसकी मुझे आवश्यकता नहीं है। भारतमें ऐसे तीस लाख लोग हैं जिन्हें दिनमें एक बार खाकर संतोष कर लेना पड़ता है और वह एक बारका खाना ऐसा होता है जिसमें एक रोटी और चुटकी-भर नमकके सिवा दूसरा कुछ नहीं होता — घी तेलका तो उसमें एक छींटा भी नहीं होता। जब तक इन तीस लाख लोगोंको ज्यादा अच्छा भोजन और ज्यादा अच्छे कपड़े नहीं मिलते तब तक अपने पासकी कोई भी चीज रखनेका आपको या मुझे अधिकार नहीं है। आपको और मुझे जिन्हें यह बात अधिक अच्छी तरह जाननी चाहिये अपनी जरूरतों पर अंकुश रखना चाहिये और स्वेच्छापूर्वक भूखे भी रहना चाहिये ताकि इन लोगोंकी सार-संभाल हो इन्हें पूरा खाना और पूरे कपड़े मिलें। ५

अपरिग्रहका अस्तेयके साथ चोली-दामनका संबंध है। कोई चीज वास्तवमें चुराई न गई हो तो भी अगर हम आवश्यकताके बिना उसका संग्रह करते हैं तो वह चोरीका माल समझा जाना चाहिये। परिग्रहका अर्थ है भविष्यके लिए संग्रह करना। सत्य-शोधक प्रेमधर्मका पालन करनेवाला मनुष्य कलके लिए कोई चीज संग्रह करके नहीं रख सकता। ईश्वर कभी परिग्रह नहीं करता। वह जिस समय जितनी चीजकी जरूरत है उससे अधिक कभी उत्पन्न नहीं करता। इसलिए यदि हमें उसकी दया पर भरोसा है तो हमें निश्चिन्त रहना चाहिये कि वह हमें नित्य खानेको देगा — अर्थात् हमारी सब जरूरतें पूरी करेगा। संतों और भक्तोंकी जिन्होंने ऐसा श्रद्धापूर्ण जीवन बिताया है यह श्रद्धा सदा उनके अनुभवसे सही साबित हुई है। जिस ईश्वरीय कानूनसे मनुष्यको नित्य आजीविका प्राप्त होती है लेकिन उससे अधिक कुछ नहीं मिलता उसके अज्ञान या उपेक्षाके कारण दुनियामें असमानताएं और उनके साथ जुड़ी हुई तमाम विपत्तियां उत्पन्न हुई हैं। धनवानोंके पास तो जिन चीजोंकी उन्हें जरूरत नहीं है उनका फालतू भंडार भरा होता है। इस कारण उनकी परवाह नहीं की जाती और वे बरबाद होती हैं। दूसरी तरफ लाखों लोग आजीविकाके अभावमें भूखसे मर जाते हैं। यदि हर आदमी अपनी जरूरतकी चीज ही रखे तो किसीको कमी नहीं रहेगी और सब संतोषपूर्वक जीवन बिता सकेंगे। वर्तमान स्थितिमें

तो अमीर-गरीब सभी समान रूपसे असंतुष्ट हैं। गरीब आदमी लखपति बनना चाहता है और लखपति करोड़पति बनना चाहता है। अतः संतोषकी भावना फैलानेकी दृष्टिसे अमीरोंको परिग्रह छोड़नेमें पहल करनी चाहिये। यदि वे अपनी निजी संपत्तिको साधारण मर्यादामें रखें तो भूखोंको आसानीसे खाना मिल जाय और वे अमीरोंके साथ संतोषका पाठ सीख जाय। ६

आर्थिक समानता अहिंसापूर्ण स्वराज्यकी मुख्य चाबी है। आर्थिक समानताके लिए काम करनेका मतलब है पूंजी और मजदूरीके बीचके झगड़ेको हमेशाके लिए मिटा देना। इसका अर्थ यह होता है कि एक ओरसे जिन मुट्ठीभर पैसेवाले लोगोंके हाथमें राष्ट्रकी संपत्तिका बड़ा भाग इकट्ठा हो गया है उनकी संपत्तिको कम करना और दूसरी ओरसे जो करोड़ों लोग आधे भूखे और नंगे रहते हैं उनकी संपत्तिमें वृद्धि करना। जब तक मुट्ठीभर धनवानों और करोड़ों भूखे रहनेवालोंके बीच बेहद अंतर बना रहेगा तब तक अहिंसाकी बुनियाद पर चलनेवाली राज्य-व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। आजाद हिन्दुस्तानमें देशके बड़ेसे बड़े धनवानोंके हाथमें हुकूमतका जितना हिस्सा रहेगा उतना ही गरीबोंके हाथमें भी होगा; और तब नई दिल्लीके महलों और उनकी बगलमें बसी हुई गरीब मजदूर-बस्तियोंके टूटे-फूटे झोंपड़ोंके बीच जो दर्दनाक फर्क आज नजर आता है वह एक दिनको भी नहीं टिकेगा। अगर धनवान लोग अपने धनको और उसके कारण मिलनेवाली सत्ताको खुद राजी-खुशीसे छोड़कर और सबके कल्याणके लिए सबके साथ मिलकर बरतनेको तैयार न होंगे तो यह समझिये कि हमारे देशमें हिंसक और खूंखार क्रांति हुए बिना न रहेगी। ट्रस्टीशिपके मेरे सिद्धांतका बहुत मजाक उड़ाया गया है, फिर भी मैं उस पर कायम हूं। यह सच है कि उस सिद्धांत तक पहुंचनेका यानी उसका पूरा-पूरा अमल करनेका काम कठिन है। क्या अहिंसाके बारेमें भी ऐसा ही नहीं है? ७

आर्थिक समानताका अर्थ है सबके पास समान संपत्तिका होना यानी सबके पास इतनी संपत्तिका होना जिससे वे अपनी कुदरती आवश्यकतायें पूरी

कर सकें। कुदरतने ही एक आदमीका हाजमा अगर नाजुक बनाया हो और वह केवल पाच ही तोला अन्न खा सके तथा दूसरेको बीस तोला अन्न खानेकी आवश्यकता हो तो दोनोंको अपनी पाचन-शक्तिके अनुसार अन्न मिलना चाहिये। सारे समाजकी रचना इसी आदर्शके आधार पर होनी चाहिये। अहिंसक समाजका दूसरा कोई आदर्श हो ही नहीं सकता। पूर्ण आदर्श तक हम शायद न भी पहुंच सकें। मगर उसे नजरमें रखकर हम विधान बनायें और व्यवस्था करें। जिस हद तक हम इस आदर्शको पहुंच सकेंगे उसी हद तक हम सुख और संतोष प्राप्त कर सकेंगे और उसी हद तक सामाजिक अहिंसा सिद्ध हुई कही जा सकेगी।

अब अहिंसाके द्वारा आर्थिक समानता कैसे लाई जा सकती है इसका हम विचार करें। उस दिशामें उठाया जानेवाला पहला कदम यह है कि जिसने इस आदर्शको अपनाया हो वह अपने जीवनमें आवश्यक परिवर्तन करे। वह हिंदुस्तानकी गरीब प्रजाके साथ अपनी तुलना करके अपनी आवश्यकतायें कम करे। अपनी धन कमानेकी शक्तिको वह नियंत्रणमें रखे जो धन कमाये उसे ईमानदारीसे कमानेका निश्चय करे। सट्टेकी वृत्ति हो तो उसका त्याग करे। घर भी अपनी सामान्य आवश्यकतायें पूरी करने लायक ही रखे और जीवनको हर तरहसे संयमी बनाये। अपने जीवनमें सभी संभव सुधार कर लेनेके बाद ही वह अपने मिलने-जुलनेवालों और अपने पड़ोसियोंमें समानताके आदर्शका प्रचार करे।

आर्थिक समानताकी जड़में धनियोंका ट्रस्टीपन है। इस आदर्शके अनुसार धनिकको अपने पड़ोसीसे एक कौड़ी भी ज्यादा रखनेका अधिकार नहीं है। तब उसके पास जो ज्यादा है वह क्या उससे छीन लिया जाये? ऐसा करनेके लिए हिंसाका आश्रय लेना पड़ेगा। और हिंसाके द्वारा ऐसा करना संभव हो तो भी समाजको उससे कुछ फायदा होनेवाला नहीं है। क्योंकि इसमें द्रव्य इकट्ठा करनेकी शक्ति रखनेवाले एक आदमीकी शक्तिको समाज खो बैठेगा। इसलिए अहिंसक मार्ग यह हुआ कि जितनी मान्य हो सके उतनी अपनी आवश्यकतायें पूरी करनेके बाद जो पैसा बाकी बचे उसका वह प्रजाकी ओरसे ट्रस्टी बन जाय। अगर वह प्रामाणिकतासे संरक्षक बनेगा तो जो पैसा वह पैदा करेगा

उसका सद्व्यय भी करेगा। जब मनुष्य अपने-आपको समाजका सेवक मानेगा, समाजके खातिर धन कमायेगा तथा समाजके कल्याणके लिए उसे खर्च करेगा, तब उसकी कमाईमें शुद्धता आयेगी।

किन्तु महाप्रयत्न करने पर भी धनिक सच्चे अर्थमें संरक्षक न बनें और भूखों मरते हुए करोड़ोंको अहिंसाके नामसे वे और अधिक कुचलते जायें तब क्या किया जाय? इस प्रश्नका उत्तर ढूंढनेमें ही अहिंसक असहयोग और सविनय कानून-भंग मुझे प्राप्त हुआ। कोई धनवान गरीबोंके सहयोगके बिना धन नहीं कमा सकता। अगर यह ज्ञान गरीबोंमें प्रचार पा जाय तो वे बलवान बनें और आर्थिक असमानताओंसे जिनके वे शिकार बने हुए हैं अहिंसक तरीकेसे दूर करना सीख लें। ८

इससे अधिक उच्च और अधिक राष्ट्रीय कोई बात मेरे खयालमें नहीं आ रही है कि हम सब प्रतिदिन एक घंटा वही काम करें, जो गरीब आदमीको करना पड़ता है और इस तरह हम गरीबोंके साथ और उनके जरिये सारी मनुष्य-जातिके साथ तादात्म्य सिद्ध करें। मुझे ईश्वरकी पूजाका इससे अच्छा दूसरा कोई साधन सूझ ही नहीं सकता कि मैं उसके नाम पर गरीबोंके लिए वैसा ही परिश्रम किया करूं, जैसा वे खुद करते हैं। ९

अपना पसीना बहाकर रोटी कमाओ — यह बाइबलका वचन है। यज्ञ अनेक प्रकारके हो सकते हैं। उनमें से एक शरीर-श्रम अथवा रोटीके लिए श्रम भी हो सकता है। अगर सब लोग अपनी रोटी कमाने जितना ही श्रम करें, तो भी इस जगतमें सबके लिए पर्याप्त अन्न होगा और सबको काफी फुरसत मिलेगी। उस स्थितिमें न तो आवश्यकतासे अधिक जन-संख्याका हल्ला मचेगा, न कोई रोग रहेगा और न ऐसा कोई दुःख-दर्द रहेगा जैसा आज हम अपने चारों ओर फैला हुआ देखते हैं। ऐसा श्रम सबसे उत्तम यज्ञ होगा। बेशक मनुष्य अपने शरीरसे अथवा अपने मस्तिष्ककी सहायतासे दूसरे अनेक काम करेंगे, परन्तु यह सब जन-साधारणके भलेके लिए किया जानेवाला प्रेमका श्रम होगा। उस हालतमें

न तो दुनियामें अमीर और गरीब होंगे न कोई ऊंचे और नीचे होंगे और न कोई स्पृश्य और अस्पृश्य होंगे। १

यह प्रश्न पूछा जा सकता है "जिसे अपने पेटके लिए कोई काम करनेकी जरूरत नहीं है वह चरखा क्यों चलाये?" इसका उत्तर यह है कि वे जो कुछ खा रहे हैं वह उनका नहीं है। वे अपने देशभाइयोंको लूट कर अपना पेट भर रहे हैं। आप जरा गौर कीजिये कि आपके जेबकी एक एक पाई कहांसे आती है, और तब आपको मेरे कथनकी यथार्थताका अनुभव हो जायगा।

नंगे-भूखे लोगोंको जिन कपड़ोंकी जरूरत नहीं है वे कपड़े उन्हें देकर मैं उनका अपमान कैसे करूं? हां जिस कामकी उन्हें सख्त जरूरत है वही मैं उन्हें दूं। मैं उनका आश्रयदाता बननेका पाप नहीं करूंगा बल्कि ज्यों ही मुझे मालूम होगा कि मैंने उन्हें कंगाल बनानेमें सहायता दी है त्यों ही मैं उन्हें ऊंचा स्थान दूंगा और उन्हें अपनी जूठन और फटे पुराने कपड़े नहीं दूंगा बल्कि अपने अच्छेसे अच्छे भोजनमें से उन्हें खाना खिलाऊंगा और अपने पहननेके अच्छेसे अच्छे कपड़े उन्हें पहनाऊंगा और खुद उनके काममें उनका साथी बन जाऊंगा।

परमात्माने मनुष्यको अपने पेटके लिए मेहनत करनेको पैदा किया है और उसने यह कहा है कि जो मनुष्य अपने हिस्सेका काम किये बिना खाते हैं वे चोर हैं। ११

जब तक एक भी सशक्त पुरुष अथवा स्त्रीको काम या भोजन न मिले तब तक हमें चैनसे बैठनेमें या भरपेट भोजन करनेमें शर्म मालूम होनी चाहिये। १२

मैं विशेष अधिकार और एकाधिकारसे घृणा करता हूं। जो चीज जन-साधारणको नहीं मिल सकती वह मेरे लिए निषिद्ध है — उसका मेरे जीवनमें कोई स्थान नहीं है। १३

मैंने सारी मालमत्ताका त्याग कर दिया है, इस कारण दुनिया चाहे तो मुझ पर हंस सकती है। मेरे लिए तो यह त्याग निश्चित रूपसे लाभदायक सिद्ध हुआ है। मैं चाहूंगा कि लोग मेरे संतोषमें मेरे साथ प्रतिस्पर्धा करें। यह संतोष मेरा सबसे समृद्ध भंडार है। इसलिए शायद ऐसा कहना सही होगा कि यद्यपि मैं गरीबीका उपदेश लोगोंको देता हूं फिर भी मैं अमीर आदमी हूं। १४

ऐसा किसीने कभी नहीं कहा कि कुचल डालनेवाली गरीबी और कंगाली नैतिक पतनकी खाईके सिवा और कहीं हमें ले जा सकती है। प्रत्येक मानवको जीनेका अधिकार है और इसलिए रोटी कमानेका साधन प्राप्त करने तथा जरूरत हो वहां कपड़े व मकान प्राप्त करनेका भी उसे अधिकार है। लेकिन इस अत्यंत सादे कामके लिए हमें अर्थशास्त्रियोंकी या उनके नियमोंकी सहायताकी आवश्यकता नहीं है।

कलकी चिन्ता मत करो, यह एक ऐसा आदेश है जो दुनियाके लगभग सारे धर्मग्रन्थोंमें पाया जाता है। किसी सुव्यवस्थित समाजमें मनुष्यके लिए अपनी आजीविका प्राप्त करना दुनियामें आसानसे आसान काम होना चाहिये। बेशक किसी देशकी सुव्यवस्थाकी कसौटी उसके लखपति-करोड़पतियोंकी संख्यासे नहीं किन्तु उसके आम लोगोंमें भुखमरीके अभावसे होती है। १५

मेरी अहिंसा किसी ऐसे तन्दुरुस्त आदमीको मुफ्त खाना देनेका विचार बरदाश्त नहीं करेगी जिसने उसके लिए ईमानदारीसे कुछ न कुछ काम न किया हो; और यदि मेरे पास सत्ता हो, तो जहां मुफ्त भोजन मिलता है ऐसे सब सदाव्रत मैं बंद करा दूं। इससे राष्ट्रका पतन हुआ है और आलस्य, बेकारी, दंभ और अपराधोंको भी प्रोत्साहन मिला है। १६

कविवर (टागोर) भविष्यके लिए जीवन धारण कर रहे हैं और हम लोगोंसे भी ऐसा करनेके लिए कहते हैं। यह उनकी स्वाभाविक काव्य-प्रतिभाके अनुरूप ही है। कविवर हमारी प्रशंसापूर्ण दृष्टिके सामने ऐसा सुन्दर

मित्र कहा करते हैं कि प्रभात कालमें हमेशा पक्षीगण आकाशमें उड़ते उड़ते कलरव करते हैं और ईश्वरका स्तवन करते हैं। परन्तु वे पक्षी तो पहले दिन अपना खाना पा चुके थे और पिछली रातको अपने पंखोंको आराम दे चुके थे। इससे उनमें नया खून दौड़ने लगा था और वे उड़ सके थे। परन्तु मैंने ऐसे पक्षियोंको भी देखनेका दुःख भोगा है जिनके पंख इतने कमजोर थे कि बेचारे उन्हें फड़फड़ा भी नहीं सकते थे। भारतीय आकाशके नीचे रहनेवाला यह मनुष्य-पक्षी रातको सोनेका तो महज स्वांग बनाता है और हमेशा उठते समय पिछले दिनसे भी ज्यादा कमजोर हो जाता है। करोड़ों लोग हमेशा ही या तो जागरण करते हैं या अचेत जैसे पड़े रहते हैं। इस दुःखमय स्थितिका वर्णन असंभव है। यह तो केवल अनुभवसे ही जानी जा सकती है। ऐसे व्यथित लोगोंको मैं कबीरका भजन सुनाकर शांति न दे सका। दुःखसे व्याकुल भारतकी करोड़ों जनतामें सिर्फ एक ही कविताकी मांग करती है — शक्तिवर्धक अन्न। और यह उन्हें भेंट नहीं किया जा सकता। यह तो उन्हें खुद ही उपार्जन करना चाहिये। और यह अन्न वे केवल अपना पसीना बहा कर ही कमा सकते हैं। १०

अतएव कल्पना कीजिये कि यह कितनी संकटपूर्ण स्थिति होगी जब कि देशके ३ करोड़ लोग बेकार और अर्ध-बेकार होंगे और कई करोड़ लोग दिन-प्रतिदिन रोजगारके अभावमें स्वाभिमानसे रहित तथा ईश्वर-श्रद्धासे विहीन होकर पतित होते जायेंगे। मेरी उनके पास ईश्वरका संदेश ले जानेकी हिम्मत नहीं होती। उन करोड़ों भूखोंके सामने जिनकी आंखोंमें जरा भी तेज नहीं है और जिनका ईश्वर उनकी रोटी ही है, अगर मैं ईश्वरका नाम लूं तो फिर वहां खड़े उस कुत्तेके सामने भी ले सकता हूं। उनके पास ईश्वरका संदेश ले जाना हो तो यह काम मैं उनके पास पवित्र परिश्रमका संदेश ले जाकर ही कर सकता हूं। हम यहां बढ़िया नाश्ता उड़ा कर बैठे हों और उससे भी बढ़िया भोजनकी आशा रखते हों तब ईश्वरकी बात करना भला मालूम होता है। लेकिन जिन लाखों करोड़ोंको दो जून खानेको भी नसीब नहीं होता उनसे मैं

ईश्वरकी बात कैसे कहूँ? उनके सामने तो ईश्वर रोटी और कौरके रूपमें ही प्रगट हो सकता है। १८

जो लोग भूखों मर रहे हैं और बेकार हैं उनके सामने तो परमेश्वर योग्य काम और उसकी मजदूरीसे मिलनेवाले अन्नके रूपमें ही प्रगट हो सकता है। १९

गरीबोंके लिए तो रोटी ही अध्यात्म है। भूखसे पीड़ित उन लाखों-करोड़ों लोगों पर किसी और चीजका प्रभाव पड़ ही नहीं सकता। कोई दूसरी बात उनके हृदयोंको छू ही नहीं सकती। लेकिन उनके पास आप रोटी लेकर जाइये तो वे आपको ही अपने भगवानकी तरह पूजेंगे। वे रोटीके सिवा और किसी बातका विचार ही नहीं कर सकते। २०

अहिंसक पद्धतिसे हम पूंजीपतिका नहीं परन्तु पूंजीवादका नाश करना चाहते हैं। हम पूंजीपतिको उन लोगोंका ट्रस्टी बन जानेका निमंत्रण देते हैं जिन पर वह अपनी पूंजीके निर्माण पूंजीकी रक्षा और पूंजीकी वृद्धिके लिए निर्भर करता है। लेकिन मजदूरको पूंजीपतिके हृदय-परिवर्तनकी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये। अगर पूंजी एक शक्ति है तो मजदूरका श्रम भी एक शक्ति है। दोनोंमें से किसी भी शक्तिका नाश या निर्माणके लिए उपयोग किया जा सकता है। हर शक्ति दूसरी शक्ति पर निर्भर करती है। ज्यों ही मजदूर अपनी शक्तिको पहचान लेता है, त्यों ही वह पूंजीपतिका गुलाम रहनेके बजाय उसका साझेदार बननेकी स्थिति प्राप्त कर लेता है। अगर मजदूर पूंजीका एकमात्र मालिक बननेका ध्येय रखे तो बहुत संभव है कि वह सोनेके अंडे देनेवाली मुर्गीको ही मार डाले। २१

हर मनुष्यको जीवनकी जरूरतें हासिल करनेका समान अधिकार है, जिस प्रकार पक्षियों और पशुओंको है। और चूंकि हरएक अधिकारके साथ उसके अनुरूप कर्तव्य जुड़ा रहता है तथा उस पर होनेवाले आक्रमणका विरोध करनेके लिए अनुरूप उपाय भी जुड़ा रहता है, इसलिए प्राथमिक मूलभूत

समानताकी स्थापना करनेके लिए केवल उसके साथ जुड़े हुए कर्तव्यों और उपायोंका पता लगाना ही बाकी रह जाता है। उसके साथ जुड़ा हुआ कर्तव्य है अपने हाथ-पैरोंसे श्रम करना और उपाय है उस मनुष्यके साथ असहयोग करना जो मुझे अपने श्रमके फलसे वंचित करता है। और अगर मैं पूंजीपति और मजदूरकी बुनियादी समानताको समझूं जैसा कि मुझे समझना चाहिये तो मुझे पूंजीपतिके विनाशका ध्येय अपने सामने नहीं रखना चाहिये। मुझे उसका हृदय बदलनेका ही प्रयत्न करना चाहिये। मेरा असहयोग उसकी आंखें उस अन्यायके प्रति खोल देगा जो वह मजदूरोंके साथ करता होगा। २२

मैं ऐसे समयका चित्र अपने मनमें नहीं खींच सकता जब कि कोई भी आदमी दूसरेसे अधिक धनी न होगा। लेकिन मैं उस समयकी कल्पना जरूर कर सकता हूं जब कि धनिक लोग निर्धनोंको लूटकर मालामाल होनेसे घृणा करेंगे और निर्धन लोग धनिकोंसे डाह करना छोड़ देंगे। आदर्श समाजमें भी हम गरीब-अमीरका फर्क नहीं मिटा सकेंगे। लेकिन हम विग्रह और झगड़ोंको तो अवश्य ही दूर कर सकते हैं और हमें करना चाहिये। ऐसे बहुतसे उदाहरण मौजूद हैं जिनमें अमीर और गरीब पूर्ण मित्रताके साथ रहते पाये गये हैं। ऐसे उदाहरणोंकी संख्या बढ़ाना ही हमारा कर्तव्य है। २३

मैं यह नहीं मानता कि सब पूंजीपति और जमींदार अपनी जन्मजात आवश्यकताके फलस्वरूप शोषक हैं और न मैं यह मानता हूं कि उनके और आम जनताके हितोंमें कोई बुनियादी या अमिट विरोध है। हर प्रकारका शोषण शोषितके सहयोग पर आधारित है, फिर वह सहयोग स्वेच्छासे किया जाता हो या लाचारीसे। इस सचाईको स्वीकार करना हमें कितना ही अप्रिय क्यों न लगे फिर भी सचाई तो यही है कि यदि लोग शोषककी आज्ञा न मानें तो शोषण हो ही नहीं सकता। लेकिन उसमें स्वार्थ आड़े आता है और हम उन्हीं जंजीरोंको अपनी छातीसे लगाये रहते हैं जो हमें बांधती हैं। यह चीज बंद होनी चाहिये। जरूरत इस बातकी नहीं है कि पूंजीपति और जमींदार खतम कर दिये जायं बल्कि

इस बातकी है कि उनके और आम लोगोंके बीच आज जो संबंध है उसे भरसक ज्यादा स्वस्थ और शुद्ध बनाया जाय। २४

वर्गयुद्धका विचार मुझे पसंद नहीं है। भारतमें वर्गयुद्ध न सिर्फ अनिवार्य नहीं है बल्कि यदि हम अहिंसाके संदेशको समझ गये हों तो उसे टाला भी जा सकता है। जो लोग वर्गयुद्धको अनिवार्य बताते हैं उन्होंने या तो अहिंसाके फलितार्थोंको समझा नहीं है, या ऊपरी तौर पर ही समझा है। २५

गरीबोंका शोषण दस-बीस करोड़पतियोंका नाश कर देनेसे बंद होनेवाला नहीं है। लेकिन गरीबोंका अज्ञान दूर करके उन्हें अहिंसक असहयोग सिखानेसे वे गुलामीसे मुक्त हो सकते हैं। इससे धनिक भी अपने दोषसे मुक्त हो जायेंगे। मैंने तो यहां तक बताया है कि दोनों ही अंतमें हिस्सेदार बनें। शोषण मूल धन (पूंजी)में नहीं है किन्तु उसके दुरुपयोगमें है। एक या दूसरे रूपमें पूंजीकी आवश्यकता तो हमेशा रहेगी ही। २६

जिन लोगोंके पास धन है उनसे अब कहा जाता है कि वे संरक्षक बन जाय और गरीबोंके लिए अपने धनकी रक्षा करें। आप कह सकते हैं कि ट्रस्टीशिप तो कानून शास्त्रकी एक कल्पना-मात्र है; व्यवहारमें उसका कहीं कोई अस्तित्व दिखाई नहीं पड़ता। लेकिन यदि लोग उस पर सतत विचार करें और उसे आचरणमें उतारनेकी कोशिश करें, तो मनुष्य-जातिके जीवनकी नियामक शक्तिके रूपमें आज प्रेम जितना काम करता है उससे कहीं अधिक काम वह करेगी। बेशक पूर्ण ट्रस्टीशिप तो युक्लिडकी बिंदुकी व्याख्याकी तरह एक कल्पना ही है और उतनी ही अप्राप्य भी है। लेकिन यदि उसके लिए कोशिश की जाय तो दुनियामें समानताकी स्थापनाकी दिशामें हम दूसरे किसी उपायसे जितने आगे बढ़ सकते हैं उसके बजाय इस सिद्धांतसे अधिक आगे जा सकते हैं। २७

धनिकका संपूर्ण त्याग ऐसी वस्तु है जिसे करनेकी क्षमता सामान्य लोगोंमें भी बहुत कम आदमी रखते हैं। धनिक वर्गसे हम उचित रूपमें यह आशा रख सकते हैं कि वे अपनी संपत्ति और बुद्धिके ट्रस्टी बन जाय

तथा समाजकी सेवामें उसका उपयोग करे। इससे अधिक त्याग करानेका आग्रह रखनेका मतलब होगा उस मुर्गीको मार डालना जो कि सोनेके अंडे देती है। २८

१

लोकतंत्र और जनता

लोकतंत्रकी मेरी कल्पना यह है कि इस तंत्रमें नीचेसे नीचे और ऊंचेसे ऊंचे आदमीको आगे बढ़नेका समान अवसर मिलना चाहिये। लेकिन सिवा अहिंसाके ऐसा कभी हो ही नहीं सकता। १

मैंने हमेशा यह माना है कि छोटेसे छोटे और नीचेसे नीचे आदमीके लिए भी हिंसक साधनसे सामाजिक न्याय प्राप्त करना असंभव है। मेरा यह विश्वास रहा है कि अगर नीचेसे नीचे मनुष्योंको भी अहिंसक साधनसे योग्य तालीम दी जाय तो वे उन अन्यायोंको कम करा सकते हैं जिनके वे शिकार बने हुए हैं। वह साधन है अहिंसक असहयोग। कभी कभी असहयोग भी वैसे ही कर्तव्य बन जाता है जैसे कि सहयोग। कोई भी आदमी अपनी गुलामीमें या अपने नाशमें सहयोग देनेके लिए बंधा हुआ नहीं है। दूसरोंके प्रयत्नसे प्राप्त हुई स्वतंत्रता — फिर वह कितनी ही लाभकारी क्यों न हो — उस प्रयत्नके अभावमें टिक नहीं सकती। दूसरे शब्दोंमें ऐसी स्वतंत्रता सच्ची स्वतंत्रता नहीं है। लेकिन ज्यों ही नीचेसे नीचे लोग अहिंसक असहयोगके जरिये स्वतंत्रता प्राप्त करनेकी कला सीख लेते हैं त्यों ही वे स्वतंत्रताका प्रकाश अनुभव कर सकते हैं। ५

सविनय आज्ञाभंग एक नागरिकका जन्मजात अधिकार है। इस अधिकारको वह छोड़ दे तो अपनी मानवतासे ही च्युत हो जाय। सविनय आज्ञाभंगके साथ अराजकता कभी नहीं आती। हिंसक आज्ञाभंगसे अराजकता आ

सकती है। प्रत्येक राज्य हिंसक आक्रमणको बलपूर्वक दबा देता है। न दबाये तो राज्य नष्ट हो जाय। परन्तु सविनय आक्रमणको दबाना बरपको बैर करनेकी कोशिश जैसा है। १

सच्ची लोकसत्ता या जनसाधारणका स्वराज्य कभी असत्यमय अथवा हिंसक साधनोंसे नहीं आ सकता। कारण स्पष्ट और सीधा है। यदि असत्यमय और हिंसक उपायोंका प्रयोग किया जाय, तो उसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि सारा विरोध या तो विरोधियोंको दबाकर या उनका नाश करके खतम कर दिया जायगा। ऐसी स्थितिमें वैयक्तिक स्वतन्त्रताकी रक्षा नहीं हो सकती। वैयक्तिक स्वतन्त्रताको प्रगट होनेका पूरा अवसर केवल विशुद्ध अहिंसा पर आधारित शासनमें ही मिल सकता है। ४

दुनियामें इतने लोग आज भी जीवित हैं, यही बताता है कि दुनियाका आधार हथियार-बल पर नहीं है परन्तु सत्य दया या आत्मबल पर है। इसलिए इतिहासका बड़ा प्रमाण तो यही है कि दुनिया लड़ाईके हंगामोंके बावजूद अब तक टिकी हुई है।

हजारों बल्कि लाखों लोग प्रेमके बस रहकर अपना जीवन बसर करते हैं। करोड़ों कुटुम्बोंका क्लेश प्रेमकी भावनामें समा जाता है, डूब जाता है। सैकड़ों प्रजाएं मेलजोलसे रही हैं। इसका हिस्टरी नोट नहीं करती, हिस्टरी ऐसा कर भी नहीं सकती। जब इस दयाकी प्रेमकी और सत्यकी धारा रुकती है, टूटती है, तभी इतिहासमें उसे लिखा जाता है। एक खानदानके दो भाई लड़े। इसमें एकने दूसरेके खिलाफ सत्याग्रहका बल काममें लिया। दोनों फिरसे मिल-जुलकर रहने लगे। इसे कौन नोट करता है? अगर दोनों भाइयोंमें वकीलोंकी मददसे या दूसरे कारणोंसे वैरभाव बढ़ता और वे हथियारों या अदालतों (अदालत एक तरहका हथियार, शरीर-बल ही है) के जरिये लड़ते तो उनके नाम अखबारोंमें छपते, अड़ोस-पड़ोसके लोग जानते और शायद इतिहासमें भी लिखे जाते। जैसा कुटुम्बोंका जैसा जमातोंका और जैसा संघोंका है वैसा ही प्रजाओंका

भी समझ लेना चाहिये। कुटुम्बके लिए एक कायदा और प्रजाके लिए दूसरा कायदा है, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। हिस्टरी अस्वाभाविक बातोंको दर्ज करती है। सत्याग्रह स्वाभाविक वस्तु है इसलिए उसे दर्ज करनेकी जरूरत ही नहीं है। ५

आखिर स्वराज्य निर्भर रहता है हमारी आंतरिक शक्ति पर, बड़ीसे बड़ी कठिनाइयोंसे जूझनेकी हमारी ताकत पर। सच पूछिये तो वह स्वराज्य जिसे पानेके लिए अनवरत प्रयत्न और जिसे बचाये रखनेके लिए सतत जागृति नहीं चाहिये स्वराज्य कहलानेके लायक ही नहीं है। जैसा कि आपको मालूम है, मैंने वचन और कार्यसे यह दिखलानेकी कोशिश की है कि राजनीतिक स्वराज्य — स्त्री-पुरुषोंके विशाल समूहका स्वराज्य — व्यक्तिके स्वराज्यसे कोई ज्यादा अच्छी चीज नहीं है और इसलिए उसे ठीक उन्हीं साधनोंसे प्राप्त करना होगा जो व्यक्तिके आत्म-स्वराज्य या आत्म-संयमके लिए आवश्यक है। ६

अधिकारोंका सच्चा स्रोत कर्तव्य है। अगर हम सब अपने कर्तव्योंका पालन करें, तो अधिकारोंको खोजने बहुत दूर नहीं जाना पड़ेगा। अगर अपने कर्तव्योंका पालन किये बिना हम अधिकारोंके पीछे दौड़ते हैं तो वे मृग-जलके समान हमसे दूर भागते हैं। हम जितना ज्यादा उनका पीछा करते हैं उतने ही ज्यादा वे हमसे दूर भागते हैं। ७

मेरी दृष्टिमें राजनीतिक सत्ता अपने-आपमें साध्य नहीं है, परन्तु जीवनके प्रत्येक विभागमें लोगोंके लिए अपनी हालत सुधार सकनेका एक साधन है। राजनीतिक सत्ताका अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवनका नियमन करनेकी शक्ति। अगर राष्ट्रीय जीवन इतना पूर्ण हो जाता है कि वह स्वयं अपना नियमन कर ले तो फिर किसी प्रतिनिधित्वकी आवश्यकता नहीं रह जाती। उस समय ज्ञानपूर्ण अराजकताकी स्थिति हो जाती है। ऐसी स्थितिमें हरएक अपना राजा होता है। वह ऐसे ढंगसे अपने पर शासन करता है कि अपने पड़ोसियोंके लिए वह कभी बाधक नहीं बनता। इसलिए आदर्श अवस्थामें कोई राजनीतिक

सत्ता नहीं होगी क्योंकि कोई राज्य नहीं होगा। परन्तु जीवनमें आदर्शकी पूरी सिद्धि कभी नहीं होती। इसीलिए थोरोने कहा कि जो सबसे कम शासन करे वही उत्तम सरकार है। ८

मेरा विश्वास है कि सच्चा लोकतंत्र केवल अहिंसासे ही कायम हो सकता है। विश्वसंघकी रचना केवल अहिंसाकी बुनियाद पर ही खड़ी की जा सकती है और ऐसा करनेके लिए हिंसाका पूरी तरह त्याग करना होगा। ९

समानताकी मेरी कल्पना यह है कि यद्यपि हम सब समान पैदा हुए हैं — अर्थात् हमें समान अवसर प्राप्त करनेका हक है — तो भी सबकी योग्यता एकसी नहीं है। यह कुदरती तौर पर असम्भव है। उदाहरणार्थ, सबकी ऊंचाई, रंग या बुद्धिकी मात्रा वगैरा एकसी नहीं हो सकती। इसलिए कुदरतकी रचना ही ऐसी है कि कुछ लोगोंमें अधिक कमानेकी और दूसरोंमें उनसे कम कमानेकी योग्यता होगी। बुद्धिशाली लोग अधिक कमायेंगे और वे इस कामके लिए अपनी बुद्धिका उपयोग करेंगे। यदि वे अपनी बुद्धिका उपयोग दयाभावसे करें, तो वे राज्यका ही काम करेंगे। ऐसे लोग पालक बनकर ही जीते हैं और किसी रूपमें नहीं। मैं बुद्धिशाली मनुष्यको अधिक कमाने दूंगा और उसकी बुद्धिको कुंठित नहीं करूंगा। परन्तु जैसे पिताके समान कमाऊ बेटोंकी कमाई परिवारके सम्मिलित कोषमें जाती है, ठीक वैसे ही उसकी अधिकांश कमाई राज्यकी भलाईमें काम आनी चाहिये। वे अपनी कमाईको केवल पालकोंके रूपमें ही अपने पास रखेंगे। हो सकता है कि मैं इस प्रयत्नमें पूरी तरह असफल होऊं। लेकिन इसके लिए मैं कार्यशील जरूर हूं। १०

मैं यह सिद्ध कर दिखानेकी आशा रखता हूं कि सच्चा स्वराज्य थोड़े लोगोंके द्वारा सत्ता प्राप्त करनेसे नहीं बल्कि सब लोगों द्वारा सत्ताके दुरुपयोगका प्रतिकार करनेकी क्षमता प्राप्त करनेसे हासिल किया जा सकता है। दूसरे शब्दोंमें स्वराज्य जनतामें इस बातका ज्ञान पैदा करके प्राप्त किया जा सकता है कि सत्ता पर नियंत्रण और नियमन करनेकी क्षमता उसमें है। ११

स्वतंत्रताका अर्थ केवल अंग्रेजोंका भारतसे चला जाना ही नहीं है। उसका अर्थ है औसत ग्रामवासीमें यह जागृति उत्पन्न होना कि वह स्वयं अपने भाग्यका विधाता है वह स्वयं अपने चुने हुए प्रतिनिधियोंके द्वारा अपना कानून बनानेवाला है। १२

हमें सबसे समयसे यह सोचनेकी आदत हो गई है कि सत्ता केवल विधान सभाओंके जरिये ही हाथमें आती है। मैंने इस विश्वासको एक गम्भीर भूल माना है जो हमारी जड़ता या मोहके कारण पैदा होता है। ब्रिटिश इतिहासके ऊपरी अध्ययनसे हम यह सोचने लगे हैं कि पार्लियामेंटोंके जरिये ही सारी सत्ता छन कर नीचे जनता तक पहुंचती है। सत्य यह है कि सत्ता जनताके हाथमें होती है और वह कुछ समयके लिए उन लोगोंके हाथमें सौंपी जाती है जिन्हें जनता चुनती है। जनतासे अलग पार्लियामेंटोंकी कोई सत्ता या हस्ती नहीं है। पिछले २१ सालसे मैं लोगोंको इस सादे सत्यकी प्रतीति करानेके प्रयत्नमें लगा हुआ हूं। सविनय कानून भंग सत्ताका खजाना है। ऐसे एक संपूर्ण राष्ट्रकी कल्पना कीजिये जो विधान-सभाके कानूनोंको माननेसे इनकार करता है और इस कानून-भंगके परिणाम भोगनेके लिए तैयार है। ऐसा राष्ट्र ऐसी जनता समस्त विधान-सभा और संपूर्ण शासन-तंत्रको पूरी तरह स्थगित कर देगी। पुलिस और सेना अल्पमतवालोंको ही दबानेमें उपयोगी सिद्ध हो सकती है—भले वे कितनी ही शक्तिशाली हों। लेकिन किसी भी पुलिस या सेनाका दबाव ऐसी जनताकी दृढ़ इच्छाको दबानेमें समर्थ नहीं होता जो बड़से बड़े कष्ट भोगनेको तुली हुई हो।

और पार्लियामेंटरी पद्धति तभी कामकारी हो सकती है जब उसके सदस्य बहुमतकी इच्छाके अनुसार चलनेको तैयार हों। दूसरे शब्दोंमें यह पद्धति केवल एक-दूसरेके अनुकूल बनकर चलनेवालोंके बीच ही भरपूर सफल हो सकती है। १३

मैं मानता हूं कि हम ऐसी सरकार चाहते हैं, जो अल्पमतके भी दबाव पर नहीं बल्कि उसके हृदय-परिवर्तन पर आधार रखती है। अगर उसका

मतलब गोरी सेनाके शासनको हटाकर काली सेनाका शासन स्थापित करना हो तो हमें कोई भी दौड़धूप या शोरगुल मचानेकी जरूरत नहीं रह जाती। उस हालतमें कमसे कम आम जनताका कोई महत्त्व नहीं रह जायगा। उस शासनमें आम लोगोंका अगर अधिक दुख नहीं तो उतना दुख शोषण तो होगा ही जितना कि आज हो रहा है। १४

मुझे लगता है कि असलमें देखा जाय तो क्या यूरोप और क्या भारत दोनोंका — यद्यपि यूरोपके लोगोंको राजनीतिक स्वराज्य प्राप्त है — एक ही रोग है। इसलिए शायद दोनोंके लिए इलाज भी एक ही काम दे सकेगा। यदि सब प्रकारके आडंबरको दूर कर दें तो कहा जायगा कि यूरोपकी जनताकी लूट हिंसाके ही बल पर टिकी हुई है।

जनता अगर हिंसाका सहारा लेगी तो यह रोग कदापि दूर न होगा। जो भी हो अब तकके अनुभव यह दिखाते हैं कि हिंसाके द्वारा मिली हुई सफलता थोड़े ही दिनों तक जीवित रही है। उससे हिंसा ज्यादा बढ़ी है। अब तक जो कुछ प्रयोग हुए हैं वे भिन्न भिन्न प्रकारके हिंसात्मक तथा हिंसककी इच्छा पर आधार रखनेवाले कृत्रिम प्रतिबंध थे। लेकिन ऐन मौके पर वे प्रतिबंध बुरी तरह टूटते रहे हैं। इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि यूरोपकी जनता यदि अपनी मुक्तिकी आशा रखती है तो उसे आगे-पीछे अहिंसाका ही अवलम्बन लेना पड़ेगा। १५

हिंदुस्तानको केवल अंग्रेजोंके जूएसे छुड़ानेमें ही मेरी दिलचस्पी नहीं है। मैं तो हिंदुस्तानको किसी भी जूएसे मुक्त करनेके लिए कटिबद्ध हूँ। मैं एक निरंकुश सत्ताको हटाकर उसके स्थान पर दूसरी निरंकुश सत्ताको बैठाना नहीं चाहता। इसलिए मेरे लिए तो स्वराज्यका आंदोलन आत्मशुद्धिका आंदोलन है। १६

यदि हम लोगोंको जबरन् अपनी इच्छाके अनुसार चलाने लगें तो यह हमारा अत्याचार होगा और यह गोरशाहीके समभूत मुट्ठीभर अंग्रेजोंके

अत्याचारसे भी अधिक खराब होगा। उनका आतंक तो ऐसे मुट्ठीभर लोगोंका आतंक है, जो सारी प्रजाके विरोधके बीच अपने अस्तित्वके लिए संघर्ष करते हैं। लेकिन हमारा आतंक तो बहुसंख्यक लोगोंका आतंक होगा इसलिए वह पहलेके आतंकसे अधिक बुरा और सचमुच अधिक ईश्वर-शून्य होगा। अतएव हमें अपने आन्दोलनमें से हर प्रकारकी जबरदस्ती और दबावको बिलकुल हटा देना चाहिये। अहिंसात्मक सिद्धान्तका स्वतन्त्रतासे पालन करनेवाले यदि हम केवल मुट्ठीभर ही हों तो दूसरे लोगोंको अपने मतका बनानेमें हमें वर्ष भी बिताने पड़ सकते हैं। परन्तु उस हालतमें कहा जायगा कि हमने अपने ध्येयकी सच्चे अर्थमें रक्षा की है और हम उसके सच्चे प्रतिनिधि हैं। लेकिन अगर हम दबाव डाल-कर लोगोंको अपने झंडेके नीचे लायेंगे तो हम अपने ध्येयसे और ईश्वरसे इनकार करेंगे और अगर हम कुछ देरके लिए इस प्रयत्नमें सफल होते दिखाई दें तो हम एक अधिक बुरे आतंककी स्थापना करनेमें ही सफल हुए कहे जायंगे। १७

जन्मजात लोकतन्त्रवादी जन्मसे ही अनुशासनका पालन करनेवाला होता है। लोकतन्त्रकी भावना उसके लिए स्वाभाविक हो जाती है, जो साधारण रूपमें अपनेको मानवी तथा दैवी सभी नियमोंका स्वेच्छापूर्वक पालन करनेका आदी बना ले। मैं स्वभाव और तालीम दोनोंसे लोकतन्त्रवादी होनेका दावा करता हूं। जो लोग लोकतन्त्रकी सेवा करनेके इच्छुक हैं उन्हें चाहिये कि पहले वे लोकतन्त्रकी इसी कसौटी पर अपनेको परख लें। इसके अलावा लोकतन्त्रवादीको निःस्वार्थ भी होना चाहिये। उसे अपनी या अपने दलकी दृष्टिसे नहीं बल्कि एकमात्र लोकतन्त्रकी ही दृष्टिसे सब कुछ सोचना चाहिये। तभी वह सविनय अवज्ञाका अधिकारी हो सकता है। मैं नहीं चाहता कि कोई अपने विश्वासोंको छोड़े या अपनेआपको दबाये। मैं नहीं मानता कि स्वस्थ और प्रामाणिक मतभेद हमारे ध्येयको नुकसान पहुंचा-येगा। लेकिन अवसरवाद धोखेबाजी या अधूरे समझौतोंसे जरूर उसे नुक-सान पहुंचेगा। अगर आपको मतभेद प्रकट करना ही हो तो आपको यह सावधानी रखनी चाहिये कि आपके मत आपके अधिकतम विश्वासोंको प्रकट

करनेवाले हों न कि केवल आपके उसके सुविधाजनक नारोंको व्यक्त करनेवाले हों।

व्यक्तिगत स्वतंत्रताकी मैं कदर करता हूँ। लेकिन आपको यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि मनुष्य मूलतः एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्रगतिकी आवश्यकताओंके अनुसार अपने व्यक्तित्वको ढालना सीखकर ही मनुष्य अपनी वर्तमान स्थिति तक पहुँचा है। अबाध व्यक्तिवाद वन्य पशुओंका नियम है। हमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक संयमके बीच समन्वय करना सीखना है। समस्त समाजके हितके खातिर सामाजिक संयमके आगे स्वेच्छापूर्वक सिर झुकानेसे व्यक्ति और समाज जिसका व्यक्ति एक सदस्य है दोनोंका कल्याण होता है। १८

इसलिए व्यवहारका सुनहरा नियम यह है कि हम एक-दूसरेके प्रति सहिष्णु बनें — यह जानते हुए कि हम सब कभी एकसा विचार नहीं करेंगे और हम आंशिक रूपमें और विभिन्न दृष्टिकोणोंसे ही सत्यको देखेंगे। अन्तरात्मा सबके लिए एक ही वस्तु नहीं होती। इसलिए अन्तर्नाद यद्यपि व्यक्तिगत आचरणके लिए उत्तम मार्गदर्शक है, लेकिन उस आचरणको सब मनुष्यों पर लादना प्रत्येक मनुष्यकी अन्तरात्माकी स्वतंत्रतामें असह्य हस्तक्षेप करना होगा। १९

मतभेद चाहे जितना हो तो भी प्रेमभाव तो बना ही रहना चाहिये। यदि ऐसा न होता तो मुझे मेरी पत्नीका भी शत्रु बनना चाहिये। इस दुनियामें ऐसे किन्हीं दो व्यक्तियोंको मैं नहीं जानता जिनमें मतभेद बिलकुल न हो। गीताका समदृष्टिका उपदेश माननेवाला होनेके कारण मैंने तो अपने जीवनमें ऐसा प्रयत्न किया है कि जिसके साथ मतभेद हो उसके साथ भी उतना स्नेह रखना जितना अपने माता-पिता भाई-बहन या पत्नीके साथ मैं रखता हूँ। २

जब जब लोगोंसे भयंकर भूलें होंगी तब तब मैं उन्हें कबूल करता ही रहूँगा। अगर मैं इस दुनियामें किसी जालिमके आगे सिर झुकाता हूँ तो

यह है मेरा अन्तर्नाद। और यदि मेरा साथ देनेवालोंकी संख्या घटते घटते इतनी हो जाय कि मैं अकेला ही रह जाऊं, तो भी मेरा नम्र विश्वास है कि उस अवस्थामें भी रह सकनेका साहस मुझमें है। २१

मैं सचाईके साथ कह सकता हूं कि अपने मानव-बंधुओंके दोष देखनेमें मैं धीमा हूं क्योंकि मैं स्वयं उन दोषोंसे भरा हुआ हूं और मुझे उनकी उदारताकी आवश्यकता है। मैंने यह बात सीखी है कि किसीका न्याय कठोरतासे न किया जाय और दूसरोंमें जो दोष मैं देखूं उन्हें मैं सहन करूं। २२

मुझ पर अक्सर यह आरोप लगाया गया है कि मेरा स्वभाव किसीके सामने झुकनेका नहीं है। मुझसे यह कहा गया है कि मैं बहुमतके निर्णयोंके सामने भी नहीं झुकता। मुझ पर निरंकुश या तानाशाह होनेका दोष लगाया गया है। लेकिन मैं कभी हठीलेपन या निरंकुशताके इस आरोपको स्वीकार नहीं कर पाया हूं। इसके विपरीत जिन बातोंका बड़ा महत्त्व नहीं होता ऐसी बातोंमें झुक जानेके अपने स्वभावके लिए मैं गर्वका अनुभव करता हूं। मैं अधिकार या सत्तासे नफरत करता हूं। मेरी स्वतन्त्रता मेरी आजादीकी मैं कीमत करता हूं इसलिए दूसरोंकी आजादीका भी मैं रक्षण और पोषण करता हूं। मैं तब तक अपने साथ किसी पुरुष या स्त्रीको ले चलनेकी इच्छा नहीं रखता जब तक मैं उनकी बुद्धिको अपनी बात न जंचा दूं। प्राचीन शास्त्रोंको वेदवाक्य न माननेकी अपनी वृत्तिको मैं इस हद तक ले जाता हूं कि यदि वे शास्त्र मेरी बुद्धिको प्रतीति नहीं करा सकते तो उनकी दिव्यताको स्वीकार करनेसे मैं इनकार कर देता हूं। लेकिन अनुभवसे मैंने यह देखा है कि अगर मैं समाजमें रहना चाहता हूं और उसमें रहते हुए भी अपनी स्वतंत्रता बनाये रखना चाहता हूं तो मुझे अपने अतिशय स्वतंत्रताके विचारोंको सर्वोच्च महत्त्वकी बातों तक ही मर्यादित कर देना चाहिये। दूसरी सब बातोंमें जिनमें अपने व्यक्तिगत धर्म अथवा नैतिक नियमसे त्यागका प्रश्न नहीं उठता मुझे बहुमतकी इच्छाके सामने झुकना चाहिये। २३

मैं अधिकसे अधिक लोगोंका अधिकसे अधिक हित वाले सिद्धान्तको नहीं मानता। उसे नग्न रूपमें देखें तो उसका अर्थ यह होता है कि ५१ फी सदी लोगोंके माने गये हितके खातिर ४९ फी सदी लोगोंके हितोंका बलिदान कर दिया जाय। यह सिद्धान्त निर्दय है और मानव-समाजको इससे बड़ी हानि हुई है। सब लोगोंका अधिकसे अधिक हित करना ही एक सच्चा गौरवपूर्ण और मानवतापूर्ण सिद्धान्त है। और यह सिद्धान्त तभी अमलमें आ सकता है जब मनुष्य अपना स्वार्थ पूरी तरह छोड़नेको तैयार हो जाय। २४

अगर हम भीड़के कानूनसे बचना चाहते हैं और देशकी व्यवस्थित प्रगति साधनेकी अभिलाषा रखते हैं तो जो लोग आम जनताका नेतृत्व करनेका दावा करते हैं उन्हें आम जनता द्वारा बताये गये मार्ग पर चलनेसे दृढ़ता पूर्वक इनकार कर देना चाहिये। मैं मानता हूं कि नेताओंके लिए केवल अपनी राय जाहिर करके आम जनताकी रायके सामने झुक जाना काफी नहीं है; परन्तु अत्यन्त महत्त्वके मामलोंमें यदि लोगोंकी राय उनकी विवेक-बुद्धिको न जंचे तो नेताओंको आम लोगोंकी रायके खिलाफ जाकर भी काम करना चाहिये। २५

जो नेता अपनी अन्तरात्माकी आवाजके खिलाफ कार्य करता है वह किसी कामका नहीं, क्योंकि उसके आसपास तो हर प्रकारके विचार रखनेवाले लोग रहते हैं। यदि वह अपने अन्तर्नाद पर अटल न रहे और उसके मार्गदर्शनके अनुसार न चले तो वह बिना लंगरके जहाजकी तरह न जाने कहां बह जायेगा। २६

यह स्वीकार करते हुए भी कि मनुष्य वास्तवमें अपनी आदतोंके बल पर ही जीता है मैं मानता हूं कि उसका अपनी संकल्प शक्तिका उपयोग करके जीना अधिक अच्छा है। मैं यह भी विश्वास रखता हूं कि मनुष्यमें अपनी संकल्प-शक्तिको इस हद तक विकसित करनेकी क्षमता है कि वह शोषणको घटाकर कमसे कम कर दे। मैं राज्यकी सत्ताकी वृद्धिको बड़ेसे बड़े भयकी

दृष्टिसे देखता हूं। क्योंकि जाहिरा तौर पर तो वह शोषणको कमसे कम करके समाजको लाभ पहुंचाती है परन्तु मनुष्यके व्यक्तित्वको — जो सब प्रकारकी उन्नतिकी जड़ है — नष्ट करके वह मानव-जातिको बड़ीसे बड़ी हानि पहुंचाती है। हम ऐसे कितने ही उदाहरण जानते हैं जिनमें लोगोंने संरक्षकताको अपनाया है लेकिन ऐसा एक भी उदाहरण नहीं है जहां राज्य सचमुच गरीबोंके लिए जीवित रहा हो। २७

राज्य केन्द्रित और संगठित रूपमें हिंसाका प्रतीक है। व्यक्तिके आत्मा होती है परन्तु चूंकि राज्य एक आत्मा-रहित जड़ मशीन होता है इसलिए उससे हिंसा कभी नहीं छुड़वायी जा सकती उसका अस्तित्व ही हिंसा पर निर्भर है। २८

मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि यदि राज्यने पूंजीवादको हिंसाके द्वारा दबानेकी कोशिश की तो वह खुद हिंसाके जालमें फंस जायगा और फिर कभी भी अहिंसाका विकास नहीं कर सकेगा। २९

स्वराज्यका अर्थ है सरकारके नियंत्रणसे स्वतंत्र रहनेका सतत प्रयत्न फिर वह सरकार विदेशी हो या राष्ट्रीय। अगर लोग जीवनकी हर बातकी व्यवस्था और नियमनके लिए सरकारकी ओर ताकते रहें, तब तो स्वराज्य-सरकारकी शामत ही आ जाय। १

अगर हम स्वतंत्र स्त्री-पुरुषकी तरह न रह सकें तो हमें मरकर संतोष अनुभव करना चाहिये। ११

बहुमतके नियमका अमुक हद तक ही उपयोग है, अर्थात् मनुष्यको तफ़सीलकी बातोंमें ही बहुमतके सामने झुकना चाहिये। लेकिन बहुमतके चाहे जैसे निर्णयोंके लिए अनुकूल बनना अर्थ गुलामी होगा। लोकतंत्रके मानी ऐसा राज्य नहीं जिसमें लोग भेड़ोंकी तरह व्यवहार करें। लोकतंत्रमें व्यक्तिके मत और कार्यकी स्वतंत्रताकी सावधानीसे रक्षा की जाती है। १२

जिन बातोंका सवाल मनुष्यकी अन्तरात्माके साथ है, उनमें बहुमतके नियमके लिए कोई स्थान नहीं होता। १३

यह मेरी निश्चित मान्यता है कि मनुष्य अपनी ही कमजोरीसे अपनी स्वतंत्रता खोता है। १४

विदेशी तोप-बन्दूकें हमारी गुलामीके लिए उतनी जिम्मेदार नहीं हैं जितना हमारा स्वेच्छासे दिया हुआ सहयोग। १५

शासित प्रजाकी स्वीकृतिके बिना बड़ीसे बड़ी तानाशाह सरकार भी टिक नहीं सकती और यह स्वीकृति तानाशाह शासक अक्सर जबरन् ही प्रजासे प्राप्त करता है। जिस क्षण प्रजा तानाशाहके डरसे डरना छोड़ देती है उसी क्षण तानाशाहकी सत्ता खतम हो जाती है। १६

अधिकतर लोग सरकारके पेचीदा तंत्रको नहीं समझते। वे इस बातको महसूस नहीं करते कि बेखबर हर नागरिक चुपचाप लेकिन निश्चित रूपसे ऐसे मार्गों द्वारा जिनका उसे भान नहीं होता सरकारको टिकाने रखनेमें सहायक होता है। इसलिए बेखबर हर नागरिक अपनी सरकारके प्रत्येक कार्यके लिए जिम्मेदार होता है। और यह बिलकुल ठीक है कि जब तक सरकारके कार्य सहन करने लायक रहें तब तक उसका समर्थन किया जाय। लेकिन जब सरकारके काम उसे और उसके राष्ट्रको नुकसान पहुँचायें तब अपना समर्थन वापिस ले लेना उसका कर्तव्य हो जाता है। १७

यह सच है कि अधिकतर मामलोंमें साधारण कार्रवाईके असफल सिद्ध हो जाने पर प्रजाका यह फर्ज है कि वह सरकारके अन्यायोंको बरदाश्त कर ले। लेकिन ऐसा उसे तभी तक करना चाहिये जब तक वे उसकी आत्माको कोई हानि नहीं पहुँचाते। लेकिन किसी असह्य अन्यायके खिलाफ विद्रोह करनेका प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक व्यक्तिको अधिकार है और ऐसा करना उसका कर्तव्य है। १८

बड़ीसे बड़ी दुनियावी सत्ताके सामने घुटने टेकनेसे जो दृढ़तापूर्वक इनकार करता है उसकी बहादुरीसे बढ़कर दूसरी कोई बहादुरी इस दुनियामें नहीं है। यह इनकार करते समय हमारे मनमें उस सत्ताके प्रति किसी तरहकी घबराहट नहीं होनी चाहिये और हृदयमें इस बातकी पूरी श्रद्धा होनी चाहिये कि केवल आत्मा ही अमर है, बाकी सब मिथ्या। ३९

हम जो बाहरी स्वतन्त्रता प्राप्त करेंगे वह ठीक उसी मात्रामें होगी जिस मात्रामें हमने भीतरी स्वतन्त्रता साधी होगी। और अगर स्वतन्त्रताकी यह सही दृष्टि हो तो हमारी मुख्य शक्ति भीतरकी शुद्धि प्राप्त करनेमें ही केंद्रित होनी चाहिये। ४

वही मनुष्य सच्चा लोकतन्त्रवादी है जो शुद्ध अहिंसक साधनों द्वारा अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा करता है और इसलिए जो अपने देशकी तथा अन्तमें सारी मानव-जातिकी स्वतन्त्रताकी भी अहिंसक साधनोंसे रक्षा करता है। ४१

अनुशासनबद्ध और जाग्रत लोकतन्त्र संसारकी सुन्दरसे सुन्दर वस्तु है। पूर्वाग्रहोंसे जकड़ा हुआ अज्ञानमें फंसा हुआ तथा अन्धविश्वासोंका शिकार बना हुआ लोकतन्त्र अराजकता और अधाधुंधीके दलदलमें फंस जायगा और खुद ही अपना नाश कर लेगा। ४२

लोकतन्त्र और हिंसा कभी एकसाथ चल ही नहीं सकते। जो राज्य आज केवल नामके लिए ही लोकतान्त्रिक हैं उन्हें या तो खुले तौर पर सर्व सत्ताधारी राज्य बन जाना चाहिये अथवा यदि वे सच्चे अर्थमें लोकतान्त्रिक बनना चाहें तो हिम्मतके साथ उन्हें अहिंसक बन जाना चाहिये। यह कहना बिलकुल अविचारपूर्ण है कि केवल व्यक्ति ही अहिंसाका आचरण कर सकते हैं राज्य कभी नहीं — जो व्यक्तियोंके ही बने होते हैं। ४३

मेरी रायमें स्वराज्यकी जो तालीम हमें चाहिये वह केवल इतनी ही है कि हम सारी दुनियासे अपनी रक्षा करनेकी योग्यता हासिल करें और पूर्ण स्वतन्त्रतासे अपना जीवन जीनेकी क्षमता प्राप्त करें — फिर वह स्वराज्य

कितना ही दोषपूर्ण क्यों न हो। अच्छी सरकार स्वराज्य-सरकारका स्थान नहीं ले सकती। ४४

मैं अंग्रेजोंको दोष नहीं देता। अगर हम अंग्रेजोंकी तरह ही संख्यामें कमजोर होते तो हमने भी शायद वे ही तरीके अपनाये होते जिनका अंग्रेज आज उपयोग कर रहे हैं। आतंकवाद और धोखेबाजी बलवानोंके नहीं किन्तु दुर्बलोंके हथियार हैं। अंग्रेज संख्यामें कमजोर हैं जब कि हम संख्यामें बलवान होते हुए भी कमजोर हैं। नतीजा यह है कि दोनोंमें से हरएक दूसरेको नीचे घसीट रहा है। यह तो सामान्य अनुभवकी बात है कि अंग्रेज लोग भारतमें रहनेके बाद चरित्रमें कमजोर हो जाते हैं और हिन्दुस्तानी लोग अंग्रेजोंके सम्पर्कमें आनेसे अपना साहस और धीरज खो देते हैं। यह एक-दूसरेको निर्बल बनानेकी प्रक्रिया न तो हमारे दो राष्ट्रोंके लिए हितकारी है और न दुनियाके लिए हितकारी है।

लेकिन हम भारतीय अगर अपनी चिंता करेंगे तो अंग्रेज और बाकीकी दुनिया खुद अपनी चिंता कर लेंगे। इसलिए सुधारकी प्रवृत्तिमें हमारा योगदान यही होना चाहिये कि हम अपने घरको सुव्यवस्थित बनायें। ४५

तब कष्ट-सहनके कानूनकी दृष्टिसे असहयोगका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है जो सरकार हमारी इच्छाके विरुद्ध हम पर शासन करे, उसका समर्थन न करनेके फलस्वरूप जो भी हानियां और असुविधायें सहनी पड़ें उन्हें हम स्वेच्छासे सहन करें। थोरो कहता है   किसी अन्यायी सरकारके शासनमें सत्ता और संपत्ति रखना एक अपराध है उस स्थितिमें गरीबी ही सद्गुण है। संभव है कि संक्रान्ति-कालमें हम गलतियां करें हमें ऐसा कष्ट भोगना पड़े जो टाला जा सकता हो। लेकिन सारे राष्ट्रको निर्बल बनानेके बजाय ये गलतियां और कष्ट ज्यादा पसंद करने जैसे हैं। जब तक अन्यायीको अपने अन्यायका भान न हो तब तक अन्यायको दूर करानेके लिए प्रतीक्षा करनेसे हमें इनकार कर देना चाहिये। हमारे अपने या दूसरोंके कष्टोंके डरसे हमें उस अन्यायमें भाग नहीं लेना चाहिये।

इसके विपरीत प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमें अन्यायीकी सहायता बंद करके हमें अन्यायका विरोध करना चाहिये सामना करना चाहिये।

अगर पिता अन्याय करे तो उसके बालकोंका फर्ज है कि वे पिताका आश्रय छोड़ दें। अगर किसी स्कूलका हेडमास्टर अनीतिके आधार पर अपनी संस्था चलाये तो विद्यार्थियोंको वह स्कूल छोड़ देना चाहिये। अगर किसी कारपोरेशनका अध्यक्ष भ्रष्टाचार चलाता हो तो उसके सदस्योंको चाहिये कि वे कारपोरेशनसे अलग हो जाय और इस प्रकार अध्यक्षके भ्रष्टाचारसे खुदको निर्दोष सिद्ध कर दें। इसी प्रकार अगर कोई सरकार घोर अन्याय करे, तो प्रजाको उस सरकारके साथ पूरा या आंशिक असहयोग कर देना चाहिये — लेकिन यह इतना जरूर होना चाहिये कि शासक अपनी दुष्टता छोड़ दे। मैंने जिन उदाहरणोंकी कल्पना की है उनमें से प्रत्येकमें मानसिक या शारीरिक कष्ट-सहनका तत्त्व मौजूद है। ऐसे कष्ट-सहनके बिना स्वतंत्रता प्राप्त करना संभव नहीं है। ४६

जिस क्षण मैं सत्याग्रही बना उसी क्षणसे मैं विदेशी शासनकी प्रजा नहीं रह गया लेकिन राष्ट्रका नागरिक मैं सदा ही बना रहा। नागरिक सदा स्वेच्छासे कानूनोंका पालन करता है मजबूरीसे या कानून-भंगके लिए निर्धारित सजाके डरसे वह कानूनका पालन कभी नहीं करता। जब उसे आवश्यक मालूम होता है तब वह कानूनोंको तोड़ता है और सजाका स्वागत करता है। इससे सजाकी कठोरता नष्ट हो जाती है या उसमें अपमानका वह भाव नहीं रह जाता जो आम तौर पर उसके साथ जुड़ा रहता है। ४७

संपूर्ण सविनय कानूनभंग ऐसा विद्रोह है जिसमें हिंसाका तत्त्व नहीं है। कट्टर असहयोगी तो राज्यसत्ताकी बिलकुल उपेक्षा ही करता है। वह विद्रोही बन जाता है और राज्यके हरएक अनैतिक कानूनकी परवाह न करनेका दावा करता है। उदाहरणार्थ वह कर देनेसे इनकार कर सकता है और अपने दैनिक व्यवहारमें राज्यसत्ताको माननेसे इनकार कर सकता है। वह अन-धिकार प्रवेशके कानूनको माननेसे इनकार करके सैनिकोंसे बात करनेके लिए

फौजी बैरकोंमें घुसनेका दावा कर सकता है और बदला लेनेके तरीके पर लगाई गई मर्यादाओंको तोड़कर निर्धारित क्षेत्रके भीतर बदला ले सकता है। ये सब बातें सत्याग्रही कभी बलका प्रयोग नहीं करता। और जब उसके विरुद्ध बलका प्रयोग किया जाता है तो उसका कभी विरोध नहीं करता। सच पूछा जाय तो वह कारावासको और अपने विरुद्ध दूसरे प्रकारके बल-प्रयोगको निमंत्रण देता है। ऐसा वह इसलिए करता है कि उसे जो शारीरिक स्वतंत्रता जाहिरा तौर पर प्राप्त है वह उसे असह्य भार जैसी प्रतीत होने लगती है। वह अपने मनमें यह तर्क करता है कि राज्य व्यक्तिगत स्वतंत्रता तभी तक देता है जब तक नागरिक उसके नियमोंको मानता है। नागरिक अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रताका मूल्य राज्यके कानूनके सामने झुक कर चुकाता है। इसलिए राज्यके किसी अन्यायपूर्ण कानूनको पूरी तरह या अंशतः स्वीकार करना स्वतंत्रताका अनैतिक सौदा है। जो नागरिक राज्यके बुरे स्वरूपको अच्छी तरह समझ लेता है वह उसकी दया पर जीनेसे संतुष्ट नहीं होता और जब वह राज्यको नैतिकताका भंग किये बिना अपनेको गिरफ्तार करनेके लिए मजबूर करनेकी कोशिश करता है, तब जो लोग उसके विचारमें शरीक नहीं हैं उन्हें वह समाजके लिए खतरा दिखाई देता है। इस प्रकार सोचा जाय तो असहयोग आत्माकी पीड़ाको प्रकट करनेका अत्यन्त शक्तिशाली साधन है और एक बुरे राज्यके जारी रहनेका जोरदार विरोध है। क्या यही सारे सुधारका इतिहास नहीं है? क्या सुधारकोंने अपने साथियोंकी घृणाके शिकार बनकर भी झूठे प्रचारके साथ जुड़े हुए निर्जीव प्रतीकोंका भी त्याग नहीं कर दिया है?

जब मनुष्योंका कोई समूह उस राज्यको अपना माननेसे इनकार कर देता है जिसके शासनमें वे अभी तक रहे हैं तब वे लगभग अपनी स्वतंत्र सरकार कायम कर लेते हैं। मैं लगभग कहता हूं क्योंकि जब राज्य उनका विरोध करता है तब वे बलका प्रयोग करनेकी हद तक नहीं जाते। जब तक राज्य उनके स्वतंत्र अस्तित्वको स्वीकार नहीं करता — दूसरे शब्दोंमें उनकी इच्छाके सामने झुकता नहीं — तब तक तो किसी व्यक्तिकी तरह उनका काम भी राज्यकी जेलोंमें बंद रहना या राज्यकी गोलियोंका शिकार होना ही रहता है। इस प्रकार दक्षिण अफ्रीकामें तीन हजार

हिंदुस्तानियोंने ट्रान्सवाल सरकारको जरूरी नोटिस दिया और सन् १९१४ में ट्रान्सवाल इमिग्रेशन कानूनको भंग करके ट्रान्सवालकी सीमा पार की और अपनेको गिरफ्तार करनेके लिए सरकारको मजबूर कर दिया। जब ट्रान्सवाल सरकार हिंदुस्तानियोंको हिंसा करनेके लिए उभाड़नेमें या अपनी दमन-नीतिसे झुकानेमें असमर्थ रही तब उसने हिंदुस्तानियोंकी मांगें स्वीकार कर लीं। इसलिए सविनय कानून-भंग करनेवालोंके दलको सेनाकी तरह सिपाहीके संपूर्ण अनुशासनका पालन करना होता है — बल्कि उसका अनुशासन अधिक कठोर होता है, क्योंकि उसमें सामान्य सैनिकके जीवनकी उत्तेजनाका अभाव रहता है। और क्योंकि सविनय कानून-भंग करनेवाली सेना बदलेकी भावनासे मुक्त रहनेके कारण उत्तेजनासे मुक्त रहती है या रहनी चाहिये इसलिए उसमें कमसे कम सैनिकोंकी आवश्यकता होती है। केवल सविनय कानून-भंग करनेवाला एक ही सच्चा और पूर्ण सैनिक अन्यायके विरुद्ध न्यायकी लड़ाई जीतनेके लिए काफी होता है। ४८

अहिंसक व्यूह-रचनामें अनुशासनका अपना स्थान है। लेकिन उसके लिए और भी बहुत कुछ आवश्यक होता है। सत्याग्रहकी सेनामें हर सत्याग्रही एक सैनिक और सेवक होता है। लेकिन संकट आ पड़ने पर प्रत्येक सत्याग्रही सैनिकको स्वयं अपना सेनापति और नेता बन जाना होता है। केवल अनुशासन किसीमें नेतृत्वकी योग्यता उत्पन्न नहीं कर सकता। उसके लिए श्रद्धा और दीर्घदृष्टिकी जरूरत होती है। ४९

जहां स्वावलम्बनका राज्य होता है, वहां कोई आदमी दूसरेकी ओर आशाभरी निगाहसे नहीं देखता जहां न तो कोई नेता होते और न कोई अनुयायी होते अथवा जहां सब कोई नेता होते हैं और सब कोई अनुयायी होते हैं वहां प्रमुखसे प्रमुख योद्धाकी मृत्यु भी लड़ाईको शिथिल नहीं बनाती उलटे उसे अधिक तीव्र बनाती है। ५

प्रत्येक हितकारी आंदोलन पांच मंजिलोंसे गुजरता है उपेक्षा हंसी निंदा दमन और आदर। कुछ महीनों तक हमारे आंदोलनकी भी उपेक्षा की

१०

शिक्षा

सच्ची शिक्षा वह है जो आपके भीतरके उत्तम गुणोंको बाहर लाये और उनका विकास करे। मानवताकी पुस्तकसे बढ़कर दूसरी कौनसी पुस्तक हो सकती है? १

मेरा यह मत है कि बुद्धिका सच्चा शिक्षण सच्चा विकास तभी हो सकता है जब शरीरके अवयवोंको — यानी हाथ पैर, आंख कान नाक आदिको — सही ढंगकी कसरत और तालीम मिले। दूसरे शब्दोंमें बालकके हाथ पैर, आंख कान आदिका ज्ञानपूर्वक उपयोग किया जाय तो उसकी बुद्धिका उत्तम और अतिशीघ्र विकास होता है। लेकिन जब तक मन और शरीरका विकास साथ साथ नहीं होगा और उसीके साथ आत्माका भी विकास और जागृति नहीं होगी तब तक केवल बुद्धिका विकास एकतरफा और अधूरा सिद्ध होगा। उससे कोई काम नहीं होगा। आध्यात्मिक शिक्षासे मेरा मतलब है हृदयकी शिक्षा। इसलिए बुद्धिका उचित और सर्वांगीण विकास केवल उसी स्थितिमें हो सकता है जब वह बालककी शारीरिक और आध्यात्मिक शक्तियोंके विकासके साथ आगे बढ़े। तीनों शक्तियोंका विकास एक अखंड और अविभाज्य वस्तु है। इसलिए इस सिद्धांतके अनुसार यह मानना भयंकर भूल होगी कि इन तीनों शक्तियोंका विकास टुकड़े टुकड़ेमें हो सकता है या एक-दूसरेसे स्वतंत्र रूपमें हो सकता है। २

शिक्षासे मेरा मतलब है बालक या मनुष्यकी समग्र शारीरिक मानसिक और आत्मिक शक्तियोंका सर्वतोमुखी विकास। अक्षर-ज्ञान न तो शिक्षाका आरंभ है और न अंतिम लक्ष्य। वह तो उन अनेक उपायोंमें से एक है, जिनके द्वारा स्त्री-पुरुषोंको शिक्षित किया जाता है। फिर, सिर्फ अक्षर ज्ञानको शिक्षा कहना गलत है। इसलिए बच्चेकी शिक्षाका आरंभ मैं किसी

दस्तकारीकी तालीमसे ही करना और उसी समयसे उसे कुछ निर्माण करना सिखा दूंगा। इस प्रकार हरएक शाला स्वावलम्बी हो सकती है। शर्त सिर्फ यह हो कि इन शालाओंकी बनी चीजें राज्य खरीद लिया करे।

मेरा मत है कि इस तरहकी शिक्षा-प्रणाली द्वारा ऊंचीसे ऊंची मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त की जा सकती है। जरूरत सिर्फ एक बातकी है। वह यह कि आजकी तरह हम प्रत्येक दस्तकारीकी केवल यांत्रिक क्रियायें सिखा कर ही न रह जायं बल्कि बच्चोंको प्रत्येक क्रियाका कारण और पूर्ण विधि भी सिखा दिया करें। यह बात मैं आत्मविश्वाससे कह रहा हूं क्योंकि उसके मूलमें मेरा अपना अनुभव है। जहां कहीं भी कार्यकर्ताओंको कताई सिखाई जाती है वहां न्यूनाधिक पूर्णताके साथ इस पद्धतिका अवलम्बन किया जाता है। मैंने खुद इस पद्धतिसे चप्पल बनानेकी तथा कताईकी शिक्षा दी है और उसके अच्छे परिणाम आये हैं। इस पद्धतिमें इतिहास और भूगोलका बहिष्कार भी नहीं है। मैंने तो देखा है कि इस तरहकी साधारण और व्यावहारिक जानकारीकी बातें जबानी कहनेसे ही अधिक लाभ होता है। लिखने और पढ़नेसे बच्चा जितना नहीं सीखता उससे दस गुनी अधिक जानकारी उसे इस पद्धतिसे दी जा सकती है। वर्णमाला (के चिह्नों) का ज्ञान बच्चेको बादमें भी दिया जा सकता है, जब वह गेहूं और घासको पहचानने लग जाय और उसकी बुद्धि तथा रुचि कुछ विकसित हो जाय। यह प्रस्ताव क्रांतिकारी जरूर है पर इसमें परिश्रमकी खूब बचत होती है और विद्यार्थी एक सालमें इतना सीख जाता है जितना सीखनेके लिए साधारणतः उसे बहुत अधिक समय लग सकता है। इसके सिवा इस पद्धतिमें सब तरहसे किफायत ही किफायत है। केवल विद्यार्थीको अधिकतर ज्ञान तो दस्तकारी सीखते सीखते अपने आप ही होता रहता है। १

मैं अपनी मर्यादाओंको स्वीकार करता हूं। मैंने विश्वविद्यालयकी कोई शिक्षा नहीं पाई है। मेरा हाईस्कूलका जीवन भी औसत दरजेसे ज्यादा अच्छा कभी नहीं रहा। मैं तो यही बहुत मानता था कि परीक्षामें किसी तरह पास हो जाऊं। हाईस्कूलमें विशेष योग्यता प्राप्त करनेकी तो मैंने कभी

भाषाका ही नहीं रखी। लेकिन फिर भी शिक्षाके विषयमें जिसमें उच्च शिक्षा कही जानेवाली शिक्षा भी शामिल है आम तौर पर मेरे बहुत दृढ़ विचार हैं। अतः मैं देशके प्रति इसे अपना कर्तव्य मानता हूं कि शिक्षाके सम्बन्धमें मेरे विचार सबको स्पष्ट रूपसे मालूम हो जायं और उनमें से जो योग्य मालूम हो उन्हें वे ग्रहण करें। इसके लिए मुझे अपनी उस भीरुता या संकोचको छोड़ना होगा जो लगभग आत्म-दमनके हद तक पहुंच गया है। ऐसा करनेमें न तो मुझे उपहासका भय रखना चाहिये और न मेरी लोकप्रियता या प्रतिष्ठा घटनेकी चिंता रखनी चाहिये। क्योंकि अगर मैं अपने विश्वासको छिपाऊंगा तो मैं अपने निर्णयकी भूलोंको कभी सुधार नहीं सकूंगा। लेकिन मैं तो हमेशा उन्हें ढूंढ़ने और इससे भी ज्यादा उन्हें सुधारनेके लिए उत्सुक रहता हूं।

अब मैं अपने उन निष्कर्षोंको बता दूं, जिन पर मैं कई बरसोंसे पहुंच चुका हूं और जब भी कभी मौका मिला है उन्हें अमलमें लानेकी मैंने कोशिश की है :

(१) दुनियामें प्राप्त हो सकनेवाली ऊंचीसे ऊंची शिक्षाका भी मैं विरोधी नहीं हूं।

(२) राज्यको जहां भी इस शिक्षाका निश्चित उपयोग हो वहां इसका खर्च उसे उठाना चाहिये।

(३) मैं राज्यके सामान्य राजस्वसे किसी भी तरहकी उच्च शिक्षाका खर्च चलानेके विरुद्ध हूं।

(४) मेरा यह पक्का विश्वास है कि हमारे कॉलेजोंमें साहित्यकी जो शिक्षा — भाषामें तथाकथित शिक्षा दी जाती है, वह सब बिलकुल व्यर्थ है। और उसका परिणाम शिक्षित वर्गोंकी बेकारीके रूपमें हमारे सामने आया है। यही नहीं बल्कि जिन लड़के-लड़कियोंको हमारे कॉलेजोंकी चक्कीमें पिसनेका दुर्भाग्य प्राप्त हुआ है, उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्यको भी इस शिक्षाने चौपट कर दिया है।

(५) विदेशी भाषाके माध्यमसे जिसके जरिये भारतमें उच्च शिक्षा दी जाती है, हमारे राष्ट्रको अपार बौद्धिक और

> नैतिक हानि पहुंचाई है। अभी हम अपने इस जमानेके इतने पास हैं कि इस नुकसानकी भयंकरताका ठीक अंदाज नहीं लगा सकते। इसके सिवा ऐसी शिक्षा पानेवाले हमीं लोगोंको इसके शिकार और न्यायाधीश दोनों बनना है, जो लगभग असंभव काम है।

अब मेरे लिए यह बताना आवश्यक है कि मैं इन निर्णयों पर क्यों पहुंचा। यह शायद मैं अपने कुछ अनुभवोंके आधार पर ही उत्तम ढंगसे बता सकता हूं।

१२ बरसकी उमर तक मैंने जो भी शिक्षा पाई वह अपनी मातृभाषा गुजरातीमें पाई थी। उस समय गणित इतिहास और भूगोलका मुझे थोड़ा थोड़ा ज्ञान था। इसके बाद मैं एक हाईस्कूलमें दाखिल हुआ। इसमें भी पहले तीन साल तो मातृभाषा ही शिक्षाका माध्यम रही। लेकिन स्कूल-मास्टरका काम तो विद्यार्थियोंके दिमागमें जबरदस्ती अंग्रेजी ठूसना था। इस लिए हमारा आधेसे अधिक समय अंग्रेजी सीखने और उसके मनमाने हिज्जों तथा उच्चारण पर काबू पानेमें लगाया जाता था। ऐसी भाषाका पढ़ना हमारे लिए एक कष्टपूर्ण अनुभव था जिसका उच्चारण ठीक उसी तरह नहीं होता जैसी कि वह लिखी जाती है। हिज्जोंको कण्ठस्थ करना एक अजीब-सा अनुभव था। लेकिन यह तो मैं प्रसंगवश कह गया वस्तुतः मेरी दलीलसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। मगर पहले तीन साल तो तुलनामें ठीक ही निकल गये।

जिल्लत तो चौथे सालसे शुरू हुई। रेखागणित (ज्यॉमिट्री) अलजबरा (बीजगणित) केमिस्ट्री (रसायनशास्त्र) एस्ट्रानॉमी (ज्योतिष) हिस्ट्री (इतिहास) ज्योग्राफी (भूगोल)——हरएक विषय मातृभाषाके बजाय अंग्रेजीमें ही पढ़ना पड़ता था। अंग्रेजीका जुल्म इतना अधिक था कि संस्कृत या फारसी भी मातृभाषा द्वारा नहीं बल्कि अंग्रेजीके माध्यमसे सीखनी पड़ती थी। कक्षामें अगर कोई विद्यार्थी गुजराती बोलता जिसे वह समझता था तो उसे सजा दी जाती थी। अगर कोई लड़का टूटी अंग्रेजी बोलता जिसे न तो वह पूरी तरह समझ सकता था और न

मुझ बोझ सकता था तो भी शिक्षकको कोई आपत्ति नहीं होती थी। शिक्षक भला इस बातकी फिक्र क्यों करे? क्योंकि खुद उसकी ही अंग्रेजी निर्दोष नहीं थी। इसके सिवा और हो भी क्या सकता था? क्योंकि अंग्रेजी उसके लिए भी उसी तरह विदेशी भाषा थी जिस तरह उसके विद्यार्थियोंके लिए थी। इससे बड़ी गड़बड़ होती थी। हम विद्यार्थियोंको अनेक बातें कण्ठस्थ करनी पड़ती थी हालांकि हम उन्हें पूरी तरह समझ नहीं पाते थे और कभी-कभी तो बिलकुल ही नहीं समझ पाते थे। शिक्षक जब हमें ज्यॉमिट्री (रेखागणित) समझानेके लिए बड़ा प्रयत्न करता तब मेरा सिर घूमने लगता था। सच तो यह है कि युक्लिड (रेखागणित) की पहली पुस्तकके १३ वें प्रमेय तक हम पहुंच न गये तब तक मेरी समझमें ज्यॉमिट्री बिलकुल नहीं आई। और पाठकोंके सामने मुझे यह मंजूर करना ही चाहिये कि मातृभाषाके अपने सारे प्रेमके बावजूद आज भी मैं यह नहीं जानता कि ज्यॉमिट्री अलजबरा आदिकी पारिभाषिक बातोंको गुजरातीमें क्या कहते हैं। हां यह अब मैं जरूर देखता हूं कि जितना गणित रेखागणित बीजगणित रसायनशास्त्र और ज्योतिष सीखनेमें मुझे चार साल लगे उतना मैंने एक ही सालमें आसानीसे सीख लिया होता अगर अंग्रेजीके बजाय मैंने उन्हें गुजरातीमें पढ़ा होता। उस हालतमें मैं आसानी और स्पष्टताके साथ इन विषयोंको समझ लेता। गुजरातीका मेरा शब्दज्ञान कहीं ज्यादा समृद्ध हो गया होता और उस ज्ञानका मैंने अपने घरमें उपयोग किया होता। लेकिन इस अंग्रेजीके माध्यमने तो मेरे और मेरे कुटुम्बियोंके बीच जो कि अंग्रेजी स्कूलोंमें नहीं पढ़े थे एक अगम्य खाई खड़ी कर दी थी। मेरे पिताको कुछ पता न था कि मैं क्या कर रहा हूं। मैं चाहता तो भी अपने पिताकी इस बातमें दिलचस्पी पैदा नहीं कर सकता था कि मैं क्या पढ़ रहा हूं। क्योंकि यद्यपि बुद्धिकी उनमें कोई कमी न थी मगर वे अंग्रेजी नहीं जानते थे। इस प्रकार मैं अपने ही घरमें बड़ी तेजीके साथ अजनबी बनता जा रहा था। निश्चय ही मैं औरोंसे ऊंचा आदमी बन गया था। यहां तक कि मेरी पोशाक भी अदृष्ट रूपसे अपने-आप बदलने लगी थी। लेकिन मेरा जो

ज्ञान हुआ वह कोई असाधारण अनुभव नहीं था बल्कि अधिकांश लोगोंको यही ज्ञान होता है।

हाईस्कूलके प्रथम तीन वर्षोंमें मेरे सामान्य ज्ञानमें बहुत कम वृद्धि हुई। वह समय तो लड़कोंको हरएक चीज अंग्रेजीके जरिये सीखनेकी तैयारीका था। हाईस्कूल तो अंग्रेजोंकी सांस्कृतिक विजयके लिए थे। मेरे हाईस्कूलके तीन सौ विद्यार्थियोंने जो ज्ञान प्राप्त किया वह तो हमीं तक सीमित रहा वह सर्व-साधारण तक पहुंचानेके लिए नहीं था।

एक-दो शब्द साहित्यके बारेमें भी। अंग्रेजी गद्य और पद्यकी हमें कई किताबें रटनी पड़ी थीं। इसमें शक नहीं कि वह सब बढ़िया साहित्य था। लेकिन सर्व-साधारणकी सेवा या उसके संपर्कमें आनेमें वह ज्ञान मेरे लिए कोई उपयोग नहीं हुआ है। मैं यह कहनेमें असमर्थ हूं कि मैंने अंग्रेजी गद्य और पद्य न पढ़ा होता तो मैं एक बेशकीमती खजानेसे वंचित रह जाता। इसके बजाय सच तो यह है कि अगर वे सात साल मैंने गुजराती पर प्रभुत्व प्राप्त करनेमें लगाये होते और गणित विज्ञान तथा संस्कृत आदि विषयोंको गुजरातीमें पढ़ा होता तो इस तरह प्राप्त किये हुए ज्ञानमें मैंने अपने अड़ोसी-पड़ोसियोंको आसानीसे हिस्सेदार बनाया होता। उस हालतमें मैंने गुजराती साहित्यको समृद्ध किया होता। और कौन कह सकता है कि अमलमें उतारनेकी अपनी आदत तथा देश और मातृभाषाके प्रति अपने बेहद प्रेमके कारण सर्व-साधारणकी सेवामें मैं और भी अधिक समृद्ध और अधिक महान योगदान न दे पाता?

इससे यह हरगिज न समझना चाहिये कि मैं अंग्रेजी भाषा या उसके श्रेष्ठ साहित्यका महत्त्व घटाना चाहता हूं। 'हरिजन' मेरे अंग्रेजी-प्रेमका पर्याप्त प्रमाण है। लेकिन उसके साहित्यकी महत्ता भारतीय राष्ट्रके लिए उससे अधिक उपयोगी नहीं जितना कि इंग्लैण्डका समशीतोष्ण जलवायु या वहांके सुन्दर नैसर्गिक दृश्य हो सकते हैं। भारतको तो अपने ही जलवायु, नैसर्गिक दृश्यों और साहित्यमें तरक्की करनी होगी फिर चाहे वे अंग्रेजी जलवायुसे नैसर्गिक दृश्योंसे और साहित्यसे घटिया दरजेके ही क्यों न हों। हमें और हमारे बच्चोंको तो *अपनी ही विरासत* पर

इमारत बनानी चाहिये। अगर हम दूसरोंकी विरासत लेंगे तो हमारी अपनी विरासत दरिद्र हो जायगी। सच तो यह है कि विदेशी सामग्री पर हम कभी उन्नति नहीं कर सकते। मैं तो चाहता हूं कि राष्ट्र न केवल अंग्रेजी भाषाका बल्कि संसारकी अन्य भाषाओंका भंडार भी अपनी ही देशी भाषाओंमें संचित करे। रवीन्द्रनाथकी अनुपम कृतियोंका सौंदर्य जाननेके लिए मुझे बंगाली पढ़नेकी कोई जरूरत नहीं क्योंकि सुन्दर अनुवादोंके द्वारा मैं उसे पा सकता हूं। इसी तरह टॉल्स्टॉयकी संक्षिप्त कहानियोंकी कदर करनेके लिए गुजराती लड़के-लड़कियोंको रूसी भाषा पढ़नेकी कोई जरूरत नहीं क्योंकि अच्छे अनुवादोंके जरिये वे उन्हें पढ़ सकते हैं। अंग्रेजोंको इस बातका गर्व है कि संसारकी सर्वोत्तम साहित्यिक रचनायें प्रकाशित होनेके एक सप्ताहके अन्दर-अन्दर सरल अंग्रेजीमें उनके हाथोंमें आ पहुंचती हैं। ऐसी हालतमें शेक्सपीयर और मिल्टनके सर्वोत्तम विचारों और रचनाओंके लिए मुझे अंग्रेजी पढ़नेकी जरूरत क्यों हो?

यह एक तरहकी अच्छी मितव्ययिता होगी कि ऐसे विद्यार्थियोंका एक अलग ही वर्ग कर दिया जाय जिनका काम यह हो कि संसारकी विभिन्न भाषाओंमें पढ़ने लायक जो सर्वोत्तम सामग्री हो उसको पढ़ें और देशी भाषाओंमें उसका अनुवाद करें। हमारे प्रभुओंने तो हमारे लिए गलत ही रास्ता चुना है और आदत पड़ जानेके कारण गलत ही हमें सही मालूम पड़ने लगा है।

विश्वविद्यालयोंको स्वावलंबी बनाना चाहिये। राज्यको तो सामान्यतः उन्हीं लोगोंको शिक्षा देनी चाहिये जिनकी सेवाओंकी उसे आवश्यकता हो। शिक्षाकी अन्य सब शाखाओंके लिए उसे खानगी प्रयत्नको ही प्रोत्साहन देना चाहिये। शिक्षाका माध्यम तो एकदम और हर हालतमें बदल दिया जाना चाहिये। और प्रान्तीय भाषाओंको उनका उचित स्थान मिलना चाहिये। आज प्रतिदिन पैसेकी जो भयंकर बरबादी बढ़ती जा रही है उसके बजाय तो उच्च शिक्षाके क्षेत्रमें कुछ समयके लिए मैं अव्यवस्थाको भी अधिक पसंद करूंगा।

इस प्रकार मैं इस बातका दावा करता हूं कि मैं उच्च शिक्षाका विरोधी नहीं हूं। लेकिन उस उच्च शिक्षाका मैं जरूर विरोधी हूं जो कि आज इस देशमें दी जा रही है। मेरी योजनामें आजसे अधिक संख्यामें और अधिक अच्छे पुस्तकालय होंगे, अधिक संख्यामें और अधिक अच्छी प्रयोगशालाएं होंगी तथा अधिक संख्यामें और अधिक अच्छी अनुसंधान-शालाएं होंगी। मेरी योजनामें हमारे पास ऐसे रसायनशास्त्रियों, इंजीनियरों तथा अन्य विषयोंके विशेषज्ञोंकी एक बड़ी फौज होगी, जो राष्ट्रके सच्चे सेवक होंगे और उस जनताकी दिनोंदिन बढ़नेवाली विविध प्रकारकी आवश्यकताओंकी पूर्ति कर सकेंगे जो अपने अधिकारों तथा आवश्यकताओंके बारेमें अधिकाधिक जाग्रत बनती जा रही है। और ये सब विशेषज्ञ विदेशी भाषा नहीं बोलेंगे, बल्कि लोगोंकी भाषा बोलेंगे। ये लोग जो ज्ञान प्राप्त करेंगे वह सब लोगोंकी सामूहिक संपत्ति होगा। उस स्थितिमें केवल नकलके बजाय सचमुच मौलिक काम होगा। और उसका खर्च समान रूपसे और न्यायपूर्वक बांटा जायगा। ४

हमारे समयकी भारतीय संस्कृति अभी निर्माणकी अवस्थामें है। हम लोगोंमें से कई उन सब संस्कृतियोंका एक सुन्दर संमिश्रण रचनेका प्रयत्न कर रहे हैं, जो आज आपसमें लड़ती दिखाई देती हैं। ऐसी कोई भी संस्कृति जो सबसे अलग रहना चाहती हो जीवित नहीं रह सकती। भारतमें आज शुद्ध आर्य संस्कृति जैसी कोई चीज नहीं है। आर्य लोग भारतके ही रहनेवाले थे या यहां बाहरसे आये थे या यहांके मूल निवासियोंने उनका विरोध किया था इस सवालमें मुझे ज्यादा दिलचस्पी नहीं है। जिस बातमें मेरी दिलचस्पी है वह यह है कि मेरे अति प्राचीन पूर्वज एक-दूसरेके साथ पूरी आजादीसे घुलमिल गये थे और हम उनकी वर्तमान संतान उस मेलका ही परिणाम हैं। अपनी जन्मभूमिका और इस छोटीसी पृथ्वीमाताका जो हमारा पोषण करती है, हम कोई हित कर रहे हैं या उस पर बोझरूप हैं यह तो भविष्य ही बतायेगा। ५

मैं नहीं चाहता कि मेरा घर सब तरफ खड़ी हुई दीवारोंसे घिरा रहे और उसके दरवाजे और खिड़कियां बंद कर दी जायं। मैं तो यही चाहता हूं

कि मेरे घरके आसपास देश-विदेशकी संस्कृतियोंकी हवा बहती रहे। पर मैं यह नहीं चाहता कि उस हवासे मेरे पैर जमीन परसे उखड़ जायं और मैं औंधे मुंह गिर पड़ूं। मैं चाहता हूं कि हमारे देशके जवान लड़के-लड़कियोंको यदि साहित्यमें रस हो तो वे भले ही दुनियाकी दूसरी भाषाओंकी तरह ही अंग्रेजी भी जी भर कर पढ़ें। और तब मैं उनसे आशा रखूंगा कि वे अपनी शिक्षाका लाभ डॉ. बोस, राय और खुद कवि-सम्राट्[1] की तरह हिंदुस्तानको और दुनियाको दें। लेकिन मुझे यह नहीं बरदाश्त होगा कि हिंदुस्तानका एक भी आदमी अपनी मातृभाषाको भूल जाय, उसकी हंसी उड़ाये, उससे शरमाये या उसे ऐसा लगे कि वह अपने अच्छेसे अच्छे विचार अपनी भाषामें नहीं रख सकता। मेरा धर्म संकुचित और अनुदार नहीं है। ६

संगीतका अर्थ है ताल, व्यवस्था। उसका प्रभाव बिजलीके जैसा होता है। वह तुरंत हमारे मनको शांति पहुंचाता है। दुर्भाग्यसे हमारे धर्मशास्त्रोंकी तरह संगीत भी कुछ लोगोंका विशेषाधिकार हो गया है। आधुनिक अर्थमें संगीत कभी भी सारे राष्ट्रकी जनताकी वस्तु नहीं बना। अगर स्वयंसेवकोंकी स्काउट्स जैसी संस्थाओं और सेवा-समिति जैसे संगठनों पर मेरा कोई प्रभाव हो तो मैं राष्ट्रगीतोंको सामूहिक रूपमें उचित ढंगसे गानेकी बातको अनिवार्य बना दूं। और इस ध्येयकी पूर्तिके लिए मैं हर कांग्रेस अधिवेशनमें या कान्फरेन्समें महान संगीतज्ञोंको बुलानेकी और जन साधारणको सामूहिक संगीत सिखानेकी व्यवस्था करना चाहूंगा। ७

पंडित खरेकी अनुभव पर कायम हुई राय यह है कि प्राथमिक शिक्षाके पाठ्यक्रममें संगीतकी शिक्षाको स्थान मिलना चाहिये। मैं इस सूचनाका समर्थन करता हूं। बच्चोंके हाथको शिक्षा देनेकी जितनी जरूरत है उतनी ही जरूरत उनके गलेको शिक्षा देनेकी है। लड़के-लड़कियोंके भीतर जो अच्छाइयां भरी रहती हैं उन्हें बाहर लानेके लिए तथा शिक्षामें उनकी

[1] सर जगदीशचन्द्र बोस और सर पी. सी. राय भारतके प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे। कवि-सम्राट् शब्द यहां रवीन्द्रनाथ टागोरके लिए आया है।

दिलचस्पी पैदा करनेके लिए व्यायाम, उद्योग, चित्रकारी और संगीत उन्हें साथ साथ सिखाये जाने चाहिये। ८

शिक्षामें हाथोंसे पहले आँखोंका, कानोंका और जबानका स्थान आता है। पढ़नेका स्थान लिखनेसे पहले और चित्रकारीका स्थान वर्णमालाके अक्षर घोटनेसे पहले आता है। अगर इस स्वाभाविक पद्धतिका अनुसरण किया जाय तो बालकोंकी बुद्धिके विकासकी कहीं ज्यादा अच्छी सम्भावना रहती है। इससे विपरीत जब बालकोंकी तालीम वर्णमालाके अक्षरोंसे आरम्भ होती है तब उनकी बुद्धिका विकास रुक जाता है। ९

मैं यह नहीं कहता कि हम दुनियासे अलग रहें या उसमें और अपने बीचमें दीवारें खड़ी कर लें। यह तो मेरे विचारोंसे बड़ी दूर भटक जाना होगा। लेकिन यह मैं अवश्य आदरपूर्वक कहता हूँ कि हमारी अपनी संस्कृतिको समझें और उसे आत्मसात् करनेके बाद ही दूसरी संस्कृतियोंका आदर करना उचित होगा, उससे पहले नहीं। बिना आचारके कोरा बौद्धिक ज्ञान वैसा ही है जैसा कि सुगन्धयुक्त मसाला लगाया हुआ मुर्दा। यह देखनेमें तो शायद सुन्दर दिखाई देता लेकिन उसमें स्फूर्ति देनेवाली या मनुष्यको ऊँचा उठानेवाली कोई भी वस्तु नहीं होती। मेरा धर्म मुझे यह आज्ञा नहीं देता कि मैं दूसरोंकी संस्कृतियोंको तुच्छता और अनादरकी दृष्टिसे देखूँ। उसी तरह यह इस बात पर भी जोर देता है कि मैं अपनी संस्कृतिको पचाऊँ और उसके अनुसार चलूँ, अन्यथा एक नागरिकके नाते अपनी आत्महत्या कर डालूँ। १०

यह विचार बिलकुल भूल है कि बुद्धिका विकास पुस्तकें पढ़नेसे ही हो सकता है। उसका स्थान इस विचारको लेना चाहिये कि बुद्धिका विकास वास्तविक ढंगसे शारीरिक काम सीखकर बहुत जल्दी किया जा सकता है। ज्यों ही विद्यार्थीको हर कदम पर यह सिखाया जाने लगता है कि हाथ या औजारोंसे कोई विशेष क्रिया क्यों करनी पड़ती है त्यों ही उसकी बुद्धिका सच्चा विकास आरम्भ हो जाता है। यदि विद्यार्थी अपनेको

साधारण मजदूरोंके बराबर समझें तो उनकी बेकारीकी समस्या किसी कठिनाईके बिना हल की जा सकती है। ११

मैं निश्चित रूपसे यह नहीं कह सकता कि बच्चोंको अधिकतर प्रारंभिक शिक्षण मुंहसे देना अधिक लाभदायी नहीं है। कोमल वयके बालकों पर वर्णमालाके अक्षरोंको सीखनेका बोझ लादना और सामान्य ज्ञान प्राप्त करनेसे पहले उन पर पढ़नेका बोझ लादना उन्हें मुंहसे दिये जानेवाले शिक्षणको पचानेकी शक्तिसे ऐसे समय वंचित करना है, जब उनके तन मन और मस्तिष्क बिलकुल ताजे होते हैं। १२

केवल अक्षर-ज्ञानकी शिक्षासे किसीका नैतिक स्तर तिलभर भी ऊंचा नहीं उठा। चरित्र-निर्माण अक्षर-ज्ञानकी तालीमसे बिलकुल स्वतंत्र चीज है। १३

भारतके लिए निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षाके सिद्धांतमें मेरा दृढ़ विश्वास है। मैं यह भी मानता हूं कि इस लक्ष्यको सिद्ध करनेका एकमात्र मार्ग यह है कि हम बालकोंको कोई उपयोगी उद्योग सिखायें और उसके द्वारा उनकी शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियोंका विकास साधें। कोई ऐसा न माने कि शिक्षाके क्षेत्रमें आर्थिक दृष्टिसे विचार करना निरा धनिवापन है या ऐसे विचारका शिक्षाके क्षेत्रमें कोई स्थान ही नहीं है। सच्चा अर्थशास्त्र कभी उच्चतम नैतिक सिद्धांतके संघर्षमें नहीं आता जैसे कि सच्चा नीतिशास्त्र अच्छा अर्थशास्त्र भी होना चाहिये। १४

मैं विभिन्न विज्ञानोंकी शिक्षाको महत्त्वपूर्ण मानता हूं। हमारे बालक रसायनशास्त्र और भौतिक विज्ञानकी जितनी भी शिक्षा ग्रहण करें उतनी थोड़ी ही है। १५

मैं बालकके हाथोंका विकास और उसकी आत्माका विकास करूंगा। हमारे हाथ लगभग अपंग जैसे हो गये हैं। हमारी आत्माकी वर्तमान शिक्षा-पद्धतिमें सर्वथा उपेक्षा की गई है। १६

जीवनकी जिस जिस वस्तुके बारेमें बच्चोंको कुतूहल पैदा हो और उसकी हमें जानकारी हो, तो वह जानकारी हमें उन्हें देनी चाहिये। जिस चीजकी हमें जानकारी न हो, उसके विषयमें अपना अज्ञान हमें मंजूर करना चाहिये। कोई बात न बताने लायक हो तो हमें उन्हें रोक देना चाहिये और दूसरोंसे पूछनेके लिए भी मना कर देना चाहिये। उनकी बातको कभी टाल नहीं देना चाहिये। हम मानते हैं उससे ज्यादा बातें बच्चे जानते हैं। और जिस विषयको वे न जानते हों उस विषयका ज्ञान अगर हम उन्हें न देंगे तो वे अनुचित रूपमें वह ज्ञान प्राप्त करना सीख जायेंगे। इतने पर भी बच्चोंको जो ज्ञान देने लायक न हो उसे यह खतरा उठाकर भी हमें उन्हें नहीं देना चाहिये। १७

बुद्धिमान और समझदार माता-पिता बालकोंको यथाविधि करने देते हैं। एक बार व्यभिचार चखकर बालके पुन-धर्मका ज्ञान प्राप्त करना उनके लिए लाभदायी होगा। १८

हम काम-विकार पर अपनी ओरसे आँखें बन्द करके पूरा नियंत्रण या विजय प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए मेरा यह दृढ़ मत है कि नौजवान लड़के लड़कियोंको उनकी जननेन्द्रियका महत्त्व और उसका उचित उपयोग सिखाया जाय। अपने ढंगसे मैंने उन बालक-बालिकाओंको जिनकी तालीमकी जिम्मेदारी मुझ पर थी यह ज्ञान देनेकी कोशिश की है।

परन्तु जिस काम-विज्ञानकी शिक्षाके पक्षमें मैं हूँ उसका लक्ष्य यही होना चाहिये कि इस विकार पर विजय प्राप्त की जाय और उसका सदुपयोग हो। ऐसी शिक्षाका स्वभावतः यह उपयोग होना चाहिये कि वह बच्चोंके दिलोंमें मनुष्य और पशुके बीचका फर्क अच्छी तरह बैठा दे और उन्हें यह अच्छी तरह समझा दे कि हृदय और मस्तिष्क दोनोंकी शक्तियोंसे विभूषित होना मनुष्यका विशेष अधिकार है; वह जितना विचारशील प्राणी है उतना ही भावनाशील भी है; और इसलिए ज्ञान-हीन प्राकृतिक इच्छाओं पर बुद्धिका प्रभुत्व छोड़ देना मानवको ईश्वरसे प्राप्त हुई सम्पत्तिको छोड़ देना है। बुद्धि मनुष्यमें भावनाओंको जाग्रत करती

है और उसे रास्ता दिखाती है। पशुमें आत्मा सुप्तावस्थामें रहती है। हृदयको जाग्रत करनेका अर्थ है सोई हुई आत्माको जाग्रत करना, बुद्धिको जाग्रत करना और बुराई-भलाईका विवेक पैदा करना।

आज तो हमारे सारे वातावरणका — हमारे पढ़ने, हमारे सोचने और हमारे सामाजिक व्यवहारका — सामान्य हेतु कामेच्छाकी पूर्ति करना होता है। इस जालको तोड़कर बाहर निकलना आसान काम नहीं है। परन्तु यह एक ऐसा काम है जिसके लिए हमें ऊंचेसे ऊंचा प्रयत्न करना चाहिये। १९

११

स्त्री-जगत

मेरा यह दृढ़ मत है कि भारतकी मुक्ति उसकी स्त्रियोंके त्याग और जागृति पर निर्भर करती है। १

अहिंसाका अर्थ है असीम और अनन्त प्रेम, दूसरे शब्दोंमें इसका अर्थ है कष्ट सहनेकी अपार क्षमता। स्त्रीके सिवा जो पुरुषकी माता है यह क्षमता अधिकसे अधिक मात्रामें कौन दिखाता है? शिशुको नौ महीने तक अपने गर्भमें रखने तथा उसका पालन-पोषण करनेमें वह अपनी यह क्षमता प्रगट करती है और इसके लिए उसे जो कष्ट भोगने पड़ते हैं उसमें आनन्द मानती है। प्रसवकी जो पीड़ा वह भोगती है उससे अधिक बड़ी पीड़ा दूसरी क्या हो सकती है? लेकिन शिशु-जन्मके आनन्दमें वह इस पीड़ाको भूल जाती है। फिर, उस बालकको पाल-पोसकर दिन-दिन बड़ा करनेके लिए प्रतिदिन कौन कष्ट उठाता है? अपने इस प्रेमका दायरा उसे सारी मानव-जाति तक फैलाना चाहिये, उसे यह भूल जाना चाहिये कि वह पुरुषकी काम-वासनाकी पूर्तिका साधन कभी थी या हो सकती है। तब वह पुरुषकी माता, पुरुषकी निर्मात्री और पुरुषकी मूक मार्गदर्शिकाके रूपमें पुरुषके साथ अपना गौरवपूर्ण पद प्राप्त करेगी। शान्तिके अमृतकी प्यासी

कुदरत दुनियाकी जातिकी रक्षा सिखानेकी क्षमता भगवानने स्त्रीको ही प्रदान की है। २

मेरी अपनी राय तो यह है कि जैसे मूलमें स्त्री और पुरुष एक हैं ठीक उसी तरह उनकी समस्या भी मूलमें एक ही होनी चाहिये। दोनोंमें एक ही आत्मा विराजमान है। दोनों एक ही प्रकारका जीवन बिताते हैं। दोनोंकी एकसी ही भावनायें हैं। दोनों एक-दूसरेके पूरक हैं। एककी सक्रिय सहायताके बिना दूसरा जी ही नहीं सकता।

मगर किसी न किसी तरह अनन्त कालसे स्त्री पर पुरुषने आधिपत्य जमा रखा है। इस कारण स्त्रीमें अपनेको हीन समझनेकी मनोवृत्ति आ गई है। पुरुषने स्वार्थवश स्त्रीको सिखाया है कि वह उससे नीचे दरजेकी है और स्त्रीने इस सिखावनको सच्चा मान लिया है। लेकिन सत्यद्रष्टा पुरुषोंने स्त्रीका दरजा बराबरका ही माना है।

फिर भी इसमें शक नहीं कि किसी एक जगह प आ कर दोनोंके काम अलग-अलग हो जाते हैं। जहां यह बात सच है कि मूलमें दोनों एक हैं, वहां यह भी उतनी ही सच है कि दोनोंकी शरीर-रचना एक-दूसरेसे भिन्न है। इसलिए दोनोंका काम भी अलग-अलग ही होना चाहिये। मातृत्वका धर्म ऐसा है कि जिसे अधिकांश स्त्रियां सदा ही धारण करती रहेंगी। लेकिन उसके लिए जिन गुणोंकी आवश्यकता है, उन गुणोंका पुरुषोंमें होना जरूरी नहीं है। स्त्री सहनशील है पुरुष क्रियाशील है। स्त्री स्वभावतः घरकी मालकिन है पुरुष कमानेवाला है। स्त्री कमाईकी रक्षा करती है और सबको रोटी देती है। वह हर अर्थमें परिवारकी पालिका है। मानव-जातिके नन्हे बच्चोंको पाल-पोसकर बड़ा करनेकी कला उसीका विशेष धर्म और एकमात्र अधिकार है। वह ध्यान न रखे तो मानव-जाति संसारसे नष्ट हो जाय।

मेरी रायमें इसमें स्त्री और पुरुष दोनोंका पतन है कि स्त्रीको घर छोड़कर घरकी रक्षाके लिए बंदूक उठानेको कहा या समझाया जाय। यह तो फिरसे जंगली बनना और नाशका आरंभ करना हुआ। जिस घोड़े

पर पुरुष सवार होता है उसी पर स्त्री भी चढ़नेकी कोशिश करती है, तो वह खुद भी गिरती है और अपने साथ पुरुषको भी गिराती है। पुरुष अपनी जीवन-संगिनीको भय या प्रलोभन दिखाकर उसका साथ काम छुड़ायेगा तो इसका पाप पुरुषके ही सिर होगा। बाहरी हमलेसे अपने घरको बचानेमें जितनी वीरता है उतनी ही वीरता उसे स्वच्छ और व्यवस्थित रखनेमें है। ३

अगर मैं स्त्रीका जन्म पाऊं तो मैं पुरुषकी ऐसी किसी भी झूठी धारणाके खिलाफ विद्रोह कर दूं कि स्त्री उसका खिलौना बननेको पैदा हुई है। स्त्रीके हृदयकी गहराईमें प्रवेश करनेके लिए मैं मनसे तो स्त्री ही बन गया हूं। मैं अपनी पत्नीके साथ जैसा व्यवहार किया करता था उससे भिन्न व्यवहार करनेका जब तक मैंने निश्चय नहीं किया तब तक मैं अपनी पत्नीके हृदयमें पैठ नहीं सका। इसलिए मैं उसके पतिके नाते जो तथाकथित अधिकार अपने हाथमें रखता था वे मैंने छोड़ दिये और पत्नीको उसके सारे अधिकार फिरसे दे दिये। ४

मेरे विचारसे मनुष्यने जिन जिन बुराइयोंके लिए अपनेको जिम्मेदार बनाया है उन सबमें एक भी इतनी नीचे गिरानेवाली मनको आघात पहुंचानेवाली और निर्दयतापूर्ण नहीं है जितना मानव-जातिके श्रेष्ठ अर्धांगका — स्त्री-जातिका अबला जातिका नहीं — उसके द्वारा होनेवाला दुरुपयोग है। स्त्री-जाति पुरुष-जातिसे अधिक उदात्त और अधिक ऊंची है। क्योंकि वह आज भी त्यागकी मूक कष्ट-सहनकी नम्रताकी श्रद्धाकी और ज्ञानकी जीवित मूर्ति है। ५

स्त्रीको चाहिये कि वह अपनेको पुरुषके काम-विकारकी तृप्तिका साधन मानना बंद कर दे। इसका उपाय पुरुषसे अधिक स्त्रीके हाथमें है। ६

शीलकी पवित्रता बाहरी प्रयत्नोंसे पनपनेवाली चीज नहीं है। उसकी रक्षा आसपास खिंची हुई परदेकी दीवारसे नहीं की जा सकती। वह पवित्रता भीतरसे पैदा होनी चाहिये और उसका तभी कोई मूल्य हो सकता है

जब वह हर प्रकारके अनाचारका सफलतापूर्वक विरोध करनेकी शक्ति रखती हो। ७

लेकिन स्त्रीकी पवित्रताके बारेमें दूषित मनोवृत्तिका परिचय देनेवाली यह सारी चिन्ता किसलिए है? क्या पुरुषकी पवित्रताके विषयमें स्त्रियोंको कुछ कहनेका मौका मिलता है? पुरुषकी पवित्रताके बारेमें स्त्रियोंकी चिन्ताकी बात हम कभी नहीं सुनते। तब पुरुषोंको स्त्रीकी पवित्रताके नियमनका अधिकार अपने हाथमें क्यों लेना चाहिये? यह पवित्रता बाहरसे नहीं लादी जा सकती। यह ऐसी वस्तु है जिसका विकास भीतरसे होता है और जिसके लिए व्यक्तिको स्वयं ही प्रयत्न करना होता है। ८

मेरा मत है कि स्त्री आत्म-बलिदानकी जीवित मूर्ति है। लेकिन दुर्भाग्यसे आज वह अपने इस जबरदस्त लाभको नहीं समझती जो पुरुषको प्राप्त नहीं है। जैसा कि टॉल्स्टॉय कहा करते थे स्त्रियां पुरुषके जादुई प्रभावकी शिकार बनी हुई हैं। अगर वे अहिंसाकी शक्तिको पहचान लें तो वे अबला कहलाना स्वीकार नहीं करेंगी। ९

स्त्रीको अबला कहना उसकी मानहानि करना है; यह पुरुषका स्त्रीके प्रति घोर अन्याय है। यदि बलका अर्थ पशुबल है तो बेशक स्त्री पुरुषसे कमजोर है, क्योंकि उसमें पशुता कम है। लेकिन अगर बलका अर्थ नैतिक बल है, तो स्त्री पुरुषसे अनन्त गुनी बढ़ी है। क्या उसकी सहज बोधकी शक्ति पुरुषसे अधिक नहीं है? क्या उसकी त्यागशक्ति पुरुषसे ज्यादा नहीं है? क्या उसकी सहिष्णुता और उसका साहस पुरुषको पीछे नहीं छोड़ देते? उसके बिना पुरुषकी हस्ती ही संभव नहीं हो सकती थी। अगर अहिंसा हमारे जीवनका धर्म है, तो भविष्य स्त्रीके ही हाथमें है।
ऐसा कौन है जो स्त्रीसे अधिक प्रभावशाली रूपमें हृदयको अपील कर सकता है? १

जीवनमें जो कुछ पवित्र और धार्मिक है स्त्रियां उसकी विशेष संरक्षिकायें हैं। स्वभावसे अपरिवर्तनशील होनेके कारण जिस प्रकार वे अन्धविश्वास-

पूर्व आदतोंको धीरे धीरे छोड़ती है उसी प्रकार जीवनमें जो कुछ पवित्र और उदात्त है उसे भी वे जल्दी नहीं छोड़ती। ११

स्त्रियोंको उपयुक्त शिक्षा मिलनी चाहिये यह मैं मानता हूं। लेकिन इसके साथ ही मैं यह भी मानता हूं कि पुरुषकी नकल करके या उसके साथ स्पर्धा करके स्त्री दुनियाको अपनी कोई खास देन नहीं दे सकेगी। वह पुरुषके साथ दौड़ तो सकेगी लेकिन पुरुषकी नकल करनेसे वह उस ऊंचाई तक नहीं पहुंच पायगी जहां पहुंचनेकी उसमें शक्ति है। स्त्रीको तो पुरुषकी सहायक या पूरक बनना चाहिये जो काम पुरुष न कर सके वह उसे करना चाहिये। १२

स्त्री पुरुषकी जीवन-संगिनी है उसमें भी वैसी ही मानसिक शक्तियां हैं जैसी पुरुषमें हैं। उसे पुरुषकी प्रवृत्तियोंसे संबंध रखनेवाली सूक्ष्मसे सूक्ष्म बातोंमें भाग लेनेका अधिकार है और उसे स्वाधीनता तथा स्वतंत्रताका उपभोगका भी पुरुषके जितना ही अधिकार है। अपने कार्यक्षेत्रमें सर्वोच्च पद भोगनेका उसे वैसा ही अधिकार है, जैसा कि पुरुषको अपने कार्यक्षेत्रमें है। समाजमें स्त्रीकी यह स्वाभाविक स्थिति होनी चाहिये यह स्थिति अक्षर-ज्ञानकी शिक्षाका परिणाम नहीं होना चाहिये। केवल एक अशोभनीय प्रथाके कारण अज्ञानसे अज्ञान और निकम्मेसे निकम्मे पुरुष स्त्रियों पर श्रेष्ठता भोगते हैं जिसके वे अधिकारी नहीं हैं और जो उन्हें नहीं भोगनी चाहिये। १३

यदि स्त्रियां केवल इस बातको भूल जायं कि वे अबला हैं, तो मैं विश्वास पूर्वक यह कहता हूं कि वे युद्धके खिलाफ पुरुषोंसे अनन्त गुना ज्यादा काम कर सकती हैं। आप ही इस प्रश्नका उत्तर दीजिये कि अगर आपके सैनिकों और सेनापतियोंकी पत्नियां पुत्रियां और मातायें किसी भी प्रकारके सैन्यवादमें उनके सहयोगका समर्थन करनेसे इनकार कर दें तो वे सैनिक और सेनापति क्या करेंगे? १४

एक बहुत बड़ा अच्छा काम करनेवाली है। उसकी बड़ी इच्छा थी कि देशकी ज्यादा अच्छी सेवा करनेके लिए वे ब्रह्मचारिणी रहें। लेकिन अपने मनका साथी मिल जानेसे उन्होंने हालमें ही शादी कर ली। अब वे समझती हैं कि ऐसा करके उन्होंने गलती की है और जो ऊंचा आदर्श उन्होंने अपने सामने रखा था उससे वे गिर गई हैं। मैंने उनका मनका यह भ्रम दूर करनेकी कोशिश की। बेशक, यह बहुत ही अच्छी बात है कि लड़कियां सेवाके खातिर कुमारी रहें। परन्तु सच यह है कि लाखोंमें कोई एक-आध ही लड़की ऐसा कर सकती है। जीवनमें विवाह एक कुदरती चीज है और इसे किसी भी तरह नीचे गिरानेवाली बात समझना बिलकुल गलत है। जब कोई व्यक्ति ऐसा मान बैठता है कि उसके अमुक काममें उसका पतन हुआ है, तब कितनी ही कोशिश करने पर भी उसका ऊंचा उठना मुश्किल हो जाता है। आदर्श यह है कि विवाहको एक धार्मिक संस्कार माना जाय और इसलिए विवाहित जीवनमें संयमसे रहा जाय। हिन्दू धर्ममें विवाह (गृहस्थाश्रम) चार आश्रमोंमें से एक है। सच तो यह है कि बाकीके तीनों आश्रमोंका आधार इसी पर है।

इसलिए इस बहनका और इनके जैसी दूसरी बहनोंका फर्ज यह है कि वे शादीको नीची चीज न समझें बल्कि उसे जीवनमें उचित स्थान देकर उसे सचमुच धार्मिक संस्कार बना दें। अगर वे आवश्यक संयम रखें तो उन्हें पता चल जायगा कि उनके भीतर सेवाकी शक्ति बढ़ रही है। जो सेवा करना चाहती है वह खुद ही जीवनका ऐसा साथी चुनेगी जो उसीके विचारका होगा और उन दोनोंकी मिली हुई सेवासे देशको अधिक लाभ होगा। १५

विवाह विवाह-सूत्रसे बंधे हुए दोनों साथियोंको एक-दूसरेके साथ शरीर संबंधका अधिकार देता है। लेकिन इस अधिकारकी एक मर्यादा है। इस अधिकारका उपयोग तभी हो जब दोनों साथी इस संबंधकी इच्छा रखते हों। एक साथी दूसरेकी उसकी अनिच्छा होते हुए भी इस संबंधकी मांग करे, ऐसा अधिकार विवाह नहीं देता। जब इनमें से कोई भी एक साथी नैतिक अथवा अन्य किसी कारणसे दूसरेकी ऐसी इच्छाका पालन

करनेमें असमर्थ हो तब क्या करना चाहिये यह एक अलग सवाल है। व्यक्तिगत रूपमें यदि तलाक ही इस सवालका एकमात्र उपाय हो तो अपनी नैतिक प्रगतिको रोकनेके बजाय मैं इस उपायको स्वीकार कर लूंगा — बशर्ते कि मेरे संयमका कारण नैतिक ही हो। १६

यह दुःखकी बात है कि आम तौर पर हमारी लड़कियोंको मातृत्वके कर्तव्य नहीं सिखाये जाते। लेकिन अगर विवाहित जीवन एक धार्मिक कर्तव्य है, तो मातृत्व भी वैसा ही धार्मिक कर्तव्य है। आदर्श माता होना कोई आसान काम नहीं है। सन्तानोत्पत्ति पूरी जिम्मेदारीकी भावनाके साथ ही करनी चाहिये। माताको जबसे गर्भ रहे तबसे लेकर बच्चा पैदा होने तकके बीचके सारे कर्तव्योंका उसे ज्ञान होना चाहिये। और जो माता देशको बुद्धिमान स्वस्थ और सुसंस्कारी बालक देती है वह निश्चित ही उसकी सेवा करती है। जब ऐसे बालक बड़े होंगे तब वे भी देशकी सेवा करनेको तैयार होंगे। सत्य यह है कि जो लोग सेवाकी जीती-जागती भावनासे परिपूर्ण हैं वे सदा ही सेवा करेंगे — फिर जीवनमें उनकी कैसी भी स्थिति क्यों न रहे। वे जीवनका ऐसा मार्ग कभी नहीं अपनायेंगे जो सेवामें बाधक बने। १७

कुछ लोग विवाहिता स्त्रीके जायदादकी मालिक बननेके अधिकारसे संबंधित कानूनोंमें सुधार होनेका विरोध करते हैं। उनकी दलील यह है कि स्त्रीकी आर्थिक आजादीसे स्त्रियोंमें दुराचार फैल जायगा और घरेलू जीवन बिगड़ जायगा। इस विषयमें आपका क्या रुख है?

मैं इस प्रश्नका उत्तर एक प्रतिप्रश्न पूछकर दूंगा क्या पुरुषकी स्वाधीनतासे और उसके हाथमें संपत्ति होनेसे पुरुषोंमें दुराचार नहीं फैला है? अगर आपका उत्तर 'हां' है तो फिर स्त्रियोंमें भी ऐसा ही होने दीजिये। और जब स्त्रियोंको भी पुरुषोंकी तरह संपत्ति आदिका अधिकार मिल जायगा तो यह पता चल जायगा कि इन अधिकारोंके उपभोगका उनके सद्गुणों या दुर्गुणोंसे कोई संबंध नहीं है। जिस सदाचारका आधार

किसी स्त्री या पुरुषकी लाचारी हो उस सदाचारमें क्या रखा है?
सदाचारकी जड़ हमारे हृदयोंकी पवित्रतामें है। १८

एक युवकने मेरे पास एक पत्र भेजा है। यहां उसका सार ही दिया जा सकता है। वह इस प्रकार है :

मैं एक विवाहित आदमी हूं। मैं विदेश गया हुआ था। मेरा एक मित्र था जिस पर मेरा और मेरे माता-पिता दोनोंका पूरा भरोसा था। मेरी अनुपस्थितिमें उसने मेरी स्त्रीको बहका लिया और अब उसे उसका गर्भ रह गया है। मेरे पिताका आग्रह है कि लड़कीको गर्भपात करा लेना चाहिये, नहीं तो घरकी बदनामी होगी। मुझे लगता है कि ऐसा करना ठीक नहीं है। बेचारी स्त्री आत्मग्लानिके मारे मरी जा रही है। उसे न खाना भाता है न पीना। वह हर वक्त रोती रहती है। क्या आप कृपा करके बतायेंगे कि मेरा इसमें क्या धर्म है?

मैंने बड़े संकोचके साथ यह पत्र छापा है। जैसा सभी जानते हैं इस तरहके किस्से समाजमें होते ही रहते हैं। इसलिए इस सवाल पर संयमके साथ खुली चर्चा हो जाना मेरी रायमें अनुचित न होगा।

यह तो मुझे सूरजकी तरह साफ दीख रहा है कि गर्भ गिराना अपराध होगा। जो भूल इस बेचारी स्त्रीसे हुई है वैसी बेशुमार भूलें पति करते रहते हैं लेकिन उनसे कोई कुछ नहीं कहता। समाज उन्हें न केवल माफ कर देता है बल्कि उन्हें बुरा भी नहीं बताता। और यह बात भी है कि पुरुष तो अपना पाप छिपा सकता है, लेकिन स्त्री अपनी शर्म नहीं छिपा सकती।

यह स्त्री दयाकी पात्र है। पतिका यह पवित्र कर्तव्य है कि वह होनेवाले बच्चेको भरसक प्रेम और मिठासके साथ पाले-पोसे और अपने मित्रकी बातोंमें न आये। यह सवाल खड़ा होता है कि वह अपनी पत्नीके साथ रहे या न रहे। ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं जब उसका पत्नीसे अलग रहना ठीक हो। उस सूरतमें पत्नीकी परवरिश और तालीमका बन्दोबस्त करना और उसे शुद्ध जीवन बितानेमें मदद देना उसका धर्म

होगा। मुझे इसमें कोई बुराई नहीं मालूम होती कि स्त्री यदि सच्चे दिलसे पश्चात्ताप करे तो वह उसे अपना ले। इतना ही नहीं मैं ऐसी स्थितिकी कल्पना कर सकता हूं कि गलती करनेवाली पत्नीने पूरा प्रायश्चित्त करके अपनी भूलको सुधार लिया हो तो उसे वापस स्वीकार कर लेना पतिका पवित्र कर्तव्य होगा। १९

पैसिव रेजिस्टेन्स — निष्क्रिय प्रतिरोध — कमजोरोंका हथियार माना जाता है। लेकिन जिस प्रतिरोधके लिए मुझे बिलकुल नया नाम बनाना पड़ा वह तो बलवानसे बलवान आदमीका हथियार है। मुझे अपना आशय समझानेके लिए ही नया नाम रखना पड़ा था। लेकिन इस हथियारकी अनोखी खूबी यह है कि यद्यपि यह बलवानसे बलवानका हथियार है फिर भी शरीरसे कमजोर आदमी बूढ़े और बच्चे भी इसका उपयोग कर सकते हैं बशर्ते उनके हृदय बलवान हों। और चूंकि सत्याग्रहमें प्रतिरोध खुद कष्ट उठाकर किया जाता है इसलिए स्त्रियोंके लिए तो यह हथियार बहुत ही अनुकूल है। हमने पिछले साल देखा कि हिन्दुस्तानमें कई जगह स्त्रियां कष्ट-सहनमें अपने भाइयोंसे आगे बढ़ गईं और दोनोंने आन्दोलनमें ऊंचे दर्जेका काम किया। कारण कष्ट सहनेका विचार आगकी तरह फैल गया और उन्होंने अद्भुत त्यागके काम किये। मान लीजिये कि यूरोपकी स्त्रियों और बच्चोंमें मानव-जातिके प्रेमकी ज्योति जाग उठे तो वे पुरुषों पर जादू डालकर उन्हें अविलम्ब जीत सकते हैं और देखते देखते सैन्यवादका नाश कर सकते हैं। इसके पीछे विचार यह है कि स्त्रियोंमें बालकोंमें और दूसरोंमें भी वही आत्मा है, वही शक्ति है। प्रश्न है केवल सबकी अपार शक्तिको बाहर लाकर प्रकट करनेका। २

जब किसी स्त्री पर हमला हो तो उसे हिंसा या अहिंसाका विचार करने नहीं बैठना चाहिये। उसका पहला फर्ज अपना बचाव करना है। उसे अपनी इज्जतकी रक्षाके लिए जो भी तरीका या उपाय सूझे उसका उपयोग करनेकी छूट है। ईश्वरने उसे नाखून और दांत दिये हैं। उसे सारा जोर लगाकर इनका इस्तेमाल करना चाहिये और जरूरत हो तो लड़ते लड़ते मर जाना चाहिये। जिस पुरुषने या स्त्रीने मृत्युका

संपूर्ण भय छोड़ दिया है, वह अपनी जान देकर अपना ही नहीं दूसरोंका भी बचाव कर सकती है। सच तो यह है कि हमें मृत्युका सबसे ज्यादा डर होता है और इसीलिए हम आखिरमें अधिक बड़े शरीर-बलके सामने झुक जाते हैं। कुछ लोग हमला करनेवालेके आगे घुटने टेक देते हैं, कुछ रिश्वतका सहारा लेते हैं, कुछ पेटके बल रेंगते हैं या दूसरी तरहके अपमान स्वीकार कर लेते हैं और कुछ स्त्रियां मरनेके बजाय अपने शरीर सौंप देती हैं। यह सब मैं दोष दिखानेकी भावनासे नहीं लिख रहा हूं। मैं सिर्फ मनुष्यका स्वभाव बता रहा हूं। चाहे हम पेटके बल रेंगें या कोई स्त्री पुरुषकी वासनाके आगे झुके, यह प्राणोंके उसी मोहकी निशानी है जो हमसे सब-कुछ करवा लेता है। इसलिए जो अपने प्राणोंका मोह छोड़कर जीता है, वही सच्चे अर्थमें जीता है। तेन त्यक्तेन भुंजीथा। जीवनका आनन्द पानेके लिए प्राणोंका मोह छोड़ना चाहिये। यह त्याग हमारे स्वभावका अंग बन जाना चाहिये। २१

मेरे बचावमें हिंसाके लिए किसी तैयारीकी जरूरत नहीं हो सकती। मगर ऊंचेसे ऊंचे प्रकारकी हिम्मत बतानी हो तो हमें अहिंसाके लिए ही सारी तैयारी करनी चाहिये। जो स्त्रियां पुरुषोंके हमला करने पर बगैर हथियारके उनका सामना नहीं कर सकतीं उन्हें हथियार रखनेकी सलाह देनेकी जरूरत नहीं। वे तो ऐसा करेंगी ही। हथियार रखने या न रखनेकी इस हमेशाकी पूछताछमें जरूर कोई न कोई खामी है। लोगोंको कुदरती तौर पर आजाद रहना सीखना होगा। अगर वे मेरी इस बात सिखाको याद रखें कि अहिंसासे ही सच्चा और सफल मुकाबला किया जा सकता है, तो वे इसके अनुसार अपना व्यवहार बना लेंगे। और, बगैर सोचे-समझे ही क्यों न हो लेकिन दुनिया यही करती रही है। क्योंकि दुनियाके पास ऊंचेसे ऊंचे प्रकारकी बहादुर अहिंसासे पैदा हुई हिम्मत नहीं है, इसीलिए वह अपनेको एटम बमसे लैस रखनेकी हद तक पहुंची है। जो लोग उसमें हिंसाकी व्यर्थताको नहीं देख पाते वे कुदरती तौर पर अपनेको अच्छेसे अच्छे हथियारोंसे लैस रखेंगे। २२

अमेरिकाकी स्त्रियोंको यह बात सिद्ध कर दिखानी है कि स्त्रियां दुनियामें कितनी बड़ी शक्ति बन सकती हैं। लेकिन यह तभी हो सकता है जब आप पुरुषोंके मनोरंजनकी चीजें बनना बन्द कर दें। आपको स्वतंत्रता प्राप्त है। अगर आप आजके तथाकथित विज्ञानके — जो कि पश्चिमको पूरी तरह निगल जानेवाले भोग-विलासका पक्ष लेता है — पूरे बलसे इनकार कर दें और अहिंसाके विज्ञान पर अपने मनको एकाग्र करें, तो आप शांतिकी एक महान शक्ति बन सकती हैं, क्योंकि क्षमा आपका स्वभाव है। पुरुषोंकी नकल करके न तो आप पुरुष बनती हैं और न आप अपने सच्चे रूपमें कार्य करके उस विशेष प्रतिभाका विकास कर सकती हैं जो ईश्वरने आपको प्रदान की है। ईश्वरने पुरुषको अहिंसाकी जितनी शक्ति दी है उससे अधिक स्त्रियोंको दी है। शांत और मौन रहनेके कारण स्त्रियोंमें यह और भी अधिक परिणामकारी सिद्ध होती है। स्त्रियां अहिंसाके सन्देशकी स्वाभाविक सन्देशवाहिकायें हैं, बशर्ते वे अपने इस ईश्वर-दत्त अधिकारको समझ लें। २१

लेकिन मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि अगर भारतके पुरुष और स्त्रियां बहादुरीसे और अहिंसक ढंगसे मृत्युका सामना करनेकी हिम्मत अपने भीतर पैदा कर लें तो वे हथियारोंकी शक्तिको हास्यास्पद समझ सकते हैं और आम जनताकी दृष्टिसे शुद्ध स्वतंत्रताके आदर्शको सिद्ध कर सकते हैं — जो संसारके लिए एक अनोखा उदाहरण बन जायेगा। इस आदर्शको सिद्ध करनेके प्रयत्नमें स्त्रियां भारतीयोंका नेतृत्व कर सकती हैं, क्योंकि वे आत्म-पीड़नकी शक्तिका अवतार हैं। २४

अधिकतर मौकों पर जो मानपत्र मुझे दिये जाते हैं उनमें मेरे लिए ऐसे विशेषणोंका प्रयोग किया जाता है जिनका पात्र मैं नहीं होता। उनका उपयोग न तो लिखनेवालोंको कोई लाभ पहुंचा सकता है और न मुझे कोई लाभ पहुंचा सकता है। वे विशेषण बिना कारण मेरा अपमान करते हैं क्योंकि मुझे यह स्वीकार करना पड़ता है कि मैं उनका अधिकारी नहीं हूं। जब मैं उनका पात्र बन जाऊंगा तब मेरे लिए उनके उपयोगका कोई अर्थ नहीं रह जायगा। ये विशेषण उन गुणोंकी शक्तिमें कोई वृद्धि नहीं कर सकते जो कि मुझमें हैं। अगर मैं सावधान न रहूं तो वे आसानीसे मेरा दिमाग फिरा सकते हैं। कोई आदमी यदि कोई भला काम करता है, तो उसे न कहना ही ज्यादा अच्छा होता है। उसका अनुकरण करना ही उसकी सच्चीसे सच्ची प्रशंसा है। ६

ध्येय तो हमेशा हमसे आगे ही आगे बढ़ता जाता है। ज्यों ज्यों मनुष्यकी अधिक प्रगति होती जाती है त्यों त्यों वह अपनेको अधिकाधिक अयोग्य मानता जाता है। संतोष तो प्रयत्नमें है ध्येयकी सिद्धिमें नहीं। पूर्ण प्रयत्न ही पूर्ण विजय है। ७

मैंने अपने जीवनका यह ध्येय कभी नहीं बनाया कि जहां जहां लोगों पर संकट आये वहां वहां पहुंचकर मैं उन्हें संकटसे मुक्त करूं और पुण्य कमानेके शूर-सामंतोंकी तरह इसे अपना एक पेशा ही बना लूं। मैं तो नम्रतापूर्वक लोगोंको यह बतानेकी कोशिश करता रहा हूं कि वे खुद अपनी कठिनाइयां किस तरह हल कर सकते हैं। ८

अगर मैं राजनीतिमें भाग लेता दिखाई देता हूं तो उसका एकमात्र कारण यह है कि राजनीतिने हमें आज सांपकी कुंडलीकी तरह चारों ओरसे घेर लिया है। हम कितना ही प्रयत्न क्यों न करें, हम घेरेसे हम बाहर नहीं निकल सकते। इसलिए मैं इस सांपसे मल्लयुद्ध करना चाहता हूं। ९

समाज-सुधारका मेरा कार्य राजनीतिक कार्यसे किसी तरह कम महत्त्वका या राजनीतिक कार्यके अधीन नहीं रहा। सचाई यह है कि जब मैंने देखा

कि राजनीतिक कार्यकी सहायताके बिना मेरा सामाजिक कार्य कुछ हद तक असंभव हो जायगा तब मैं राजनीतिक कार्यमें पड़ा और उसी हद तक पड़ा जिस हद तक वह सामाजिक कार्यमें सहायक हो सकता था। इसलिए मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि इस प्रकारके समाज-सुधारका कार्य या आत्मशुद्धिका कार्य शुद्ध राजनीतिक कार्यसे मुझे सैकड़ों गुना अधिक प्रिय है। १

मैं स्वयं चार पुत्रोंका पिता हूं जिनका मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार अच्छेसे अच्छा लालन-पोषण किया है। मैं अपने माता-पिताका अत्यन्त आज्ञाकारी पुत्र रहा हूं और अपने शिक्षकोंका उतना ही आज्ञाकारी विद्यार्थी भी रहा हूं। मैं माता-पिताके प्रति पुत्रके कर्तव्यका मूल्य जानता हूं। लेकिन मैं ईश्वरके प्रति रहे अपने कर्तव्यको इन सब कर्तव्योंसे ऊंचा मानता हूं। ११

मैं कल्पनाविहारी होनेसे इनकार करता हूं। मैं संतपनका दावा स्वीकार नहीं करता। मैं तो इस धरतीका प्राणी हूं, धरतीके तत्वोंसे ही मेरा निर्माण हुआ है। मैं भी उतनी ही कमजोरियोंका शिकार हो सकता हूं जितनी कमजोरियां आपमें हैं। लेकिन मैंने दुनियाको देखा है। मैं दुनियामें अपनी आंखें खोलकर रहा हूं। मैं ऐसी कड़ीसे कड़ी अग्नि-परीक्षाओंमें से पार हुआ हूं जो मनुष्य पर पड़ी आई हैं। मैं इस तालीम और अनुशासनमें से गुजरा हूं। १२

मैंने सुसंगतताके सिद्धांतकी अन्धपूजा कभी नहीं की है। मैं सत्यका पुजारी हूं, इसलिए इस बातका विचार किये बिना कि किसी प्रश्न पर पहले मैंने क्या कहा है मुझे वही कहना चाहिये जो आज उस प्रश्न पर जैसा मुझे लगता है। जैसे जैसे मेरी दृष्टि अधिक स्पष्ट होती जायगी वैसे वैसे रोजके आचरणके साथ मेरे विचार भी स्पष्ट होने चाहिये। जहां मैंने जान-बूझ कर अपनी रायमें परिवर्तन किया है वहां परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देगा। केवल चतुर और सावधान आंख ही मेरी रायमें होनेवाले उत्तरोत्तर तथा सूक्ष्म विकासको देख पायेगी। १३

मैं सुसंगत दिखाई देनेकी बिलकुल परवाह नहीं करता। अपनी सत्यकी खोजमें मैंने अनेक विचारोंका त्याग कर दिया है और अनेक नई बातें सीखी हैं। उमरमें भले मैं बूढ़ा हो गया हूं लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता कि मेरा आंतरिक विकास रुक गया है या इस शरीरका नाश हो जानेके बाद मेरा विकास रुक जायगा। मुझे एक ही बातकी चिन्ता है — वह है प्रतिक्षण सत्यरूप मेरे ईश्वरके आदेशका पालन करनेकी तत्परता। १४

लिखते समय मैं इस बातका कभी विचार नहीं करता कि मैंने पहले क्या कहा है। मेरा ध्येय किसी प्रश्न पर मेरे पूर्वकथनोंके साथ सुसंगत रहना नहीं है बल्कि उस सत्यके साथ सुसंगत रहना है जो मुझे उस क्षण दिखाई दे। इसका नतीजा यह हुआ है कि मैं एक सत्यसे दूसरे सत्यकी ओर आगे बढ़ा हूं इससे मैंने अपनी स्मरण-शक्तिको अनावश्यक बोझसे बचा लिया है और इससे भी बड़ी बात तो यह है कि जब कभी मुझे अपने ५ वर्ष पहलेके लेखोंकी तुलना अपने नयेसे नये लेखके साथ करनी पड़ी है तब मुझे दोनोंके बीच कोई असंगतता नहीं दिखाई दी है। लेकिन जिन मित्रोंको मेरे लेखोंमें असंगतता दिखाई दे वे मेरे नयेसे नये लेखोंके अर्थको ही ग्रहण करें तो ठीक होगा। हां वे पुराने लेखोंको ही तरजीह देना चाहें तो बात दूसरी है। लेकिन चुनाव करनेसे पहले उन्हें यह देखनेका प्रयत्न करना चाहिये कि ऊपरसे असंगत दिखाई देनेवाले दो लेखोंमें कोई स्थायी सुसंगतता तो नहीं छिपी है। १५

प्रार्थनामें शब्द भले न हों परन्तु मनुष्यका हृदय तो होना ही चाहिये जिस प्रार्थनामें शब्द तो हैं लेकिन हृदय नहीं है वह प्रार्थना किसी कामकी नहीं। १६

मेरे असहयोगके मूलमें थोड़े भी निमित्त पर बुरेसे बुरे प्रतिपक्षीके साथ भी सहयोग करनेकी मेरी तैयारी रहती है। मैं एक अपूर्ण मर्त्य मनुष्य हूं हमेशा ईश्वरके अनुग्रह पर अवलंबित रहता हूं। मेरे नजदीक कोई भी आदमी ऐसा नहीं है, जिसका सुधार न हो सके। १७

मेरे असहयोगकी जड़ नफरतमें नहीं है। उसकी जड़ प्रेममें है। मेरा व्यक्तिगत धर्म आवश्यक रूपमें मुझे किसीसे भी नफरत करनेसे रोकता है। यह सादा लेकिन भव्य सिद्धान्त मैंने १२ सालकी उमरमें शालाकी एक पाठ्य-पुस्तकसे सीखा था और मेरा यह विश्वास आज तक बना हुआ है। वह दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। इस विश्वासकी आग हमेशा मेरे हृदयमें जलती रहती है। १८

जो बात व्यक्तियोंके लिए सच है, वही राष्ट्रोंके लिए भी सच है। क्षमाशीलताकी कोई सीमा नहीं हो सकती। कमजोर आदमी कभी भी क्षमा नहीं कर सकते। क्षमा तो बलवानोंका गुण है। १९

कष्ट-सहनकी निश्चित मर्यादा होती है। कष्ट-सहन बुद्धिमत्तापूर्ण भी हो सकता है और मूर्खतापूर्ण भी हो सकता है। और जब वह चरम सीमाको पहुंच जाता है तब उसे ज्यादा लम्बाना बुद्धिमानीकी बात नहीं बल्कि मूर्खताकी पराकाष्ठा होगी। २०

हमारा राष्ट्र तभी सच्चे अर्थमें आध्यात्मिक राष्ट्र कहलायेगा जब हम सुवर्णसे अधिक सत्यका दर्शन करायेंगे, सत्ता और धनका आडम्बर दिखानेके बजाय अधिक निर्भयता दिखायेंगे और अपने प्रति प्रेम दिखानेके बजाय अधिक दानशीलता प्रकट करेंगे। अगर हम अपने घरों, महलों और मन्दिरोंको दौलतके गुणोंसे मुक्त कर दें और उनमें नैतिक गुणोंको प्रकट करें, तो खर्चीली फौजोंका बोझ उठाये बिना विरोधी शक्तियोंके बड़े बड़े समूहोंके साथ भी हम युद्ध कर सकते हैं। २१

भारत सत्यका बलिदान करके स्वतंत्रता प्राप्त करे, इसकी अपेक्षा मैं यह कहीं ज्यादा पसन्द करूंगा कि वह नष्ट हो जाय। २२

अगर मुझमें विनोदका गुण नहीं होता तो मैंने कभीकी आत्महत्या कर ली होती। २३

मेरा तत्त्वज्ञान अगर मेरा कोई तत्त्वज्ञान है ऐसा कहा जा सके इस सम्भावनाको नहीं मानता कि हमारे ध्येयको बाहरी शक्तियां नुकसान पहुंचा सकती हैं। उसे नुकसान तभी पहुंचता है जब या तो ध्येय स्वयं बुरा हो या उसके समर्थक झूठे दुर्बल हृदयवाले अथवा अशुद्ध हों और ऐसी हालतमें ध्येयको नुकसान पहुंचना ही चाहिये। २४

किसी न किसी तरह मैं मनुष्यके सर्वश्रेष्ठ अंशको बाहर ले आनेमें सफल हो जाता हूं और यही कारण है कि ईश्वर तथा मनुष्य-स्वभावमें मेरा विश्वास बना हुआ है। २५

जैसा मैं होना चाहता हूं वैसा ही अगर मैं होता तो मुझे किसीके साथ दलील करनेकी जरूरत न रहती। तब मेरी बात सीधी दिलमें उतर जाती। बल्कि तब निस्सन्देह मुझे मुंहसे कुछ कहनेकी भी जरूरत न होती। केवल इच्छा करनेसे ही आवश्यक प्रभाव पड़ जाता। परन्तु मैं दुःखपूर्वक अपनी मर्यादाओंको जानता हूं। २६

बुद्धिवादी लोग प्रशंसाके पात्र हैं। परन्तु बुद्धिवाद जब अपने लिए सर्व शक्तिमान होनेका दावा करता है, तब वह भयंकर राक्षस बन जाता है। बुद्धि पर सर्व-शक्तिमत्ताके गुणका आरोपण करना उतनी ही बुरी मूर्ति पूजा है जितनी जड़ पदार्थको ईश्वर मानकर उसकी पूजा करना। मैं बुद्धिके दमनकी हिमायत नहीं करता बल्कि हमारे भीतर रही उस वस्तुको उचित मान्यता देनेकी हिमायत करता हूं जो हमारी बुद्धिको पवित्र और शुद्ध बनाती है। २७

सुधारकी हरएक शाखामें सतत अध्ययन आवश्यक होता है, जिससे अपने विषय पर हमारा पूरा अधिकार हो जाय। जिन सुधार-आन्दोलनोंकी सूचियां स्वीकार की जा चुकी हैं उनकी आंशिक या पूर्ण असफलताके मूलमें हमारा अज्ञान ही रहता है। क्योंकि सुधारके नाम पर चलनेवाला प्रत्येक कार्य आवश्यक रूपमें सुधारका नाम पानेका अधिकारी नहीं होता। २८

जीवित प्राणियोंके बारेमें विचार करनेमें नीरस तार्किक पद्धति बुरी ही नहीं होती बल्कि कभी कभी यह घातक तर्ककी ओर ले जाती है। क्योंकि अगर आप किसी छोटीसी बातको भी छोड़ जायें — और यह तय है कि मानव-व्यवहारकी सब बातों पर आप कभी नियंत्रण नहीं कर सकते — तो आपके निष्कर्षके गलत हो जानेकी संभावना रहती है। इसलिए अंतिम सत्य पर आप कभी नहीं पहुंचते आप तो सिर्फ उसके निकट ही पहुंचते हैं और वह भी तभी जब कि आप अपने व्यवहारमें असाधारण रूपसे सावधान रहें। ९

यह कहना बुरी आदत है कि दूसरे आदमीके विचार बुरे हैं और सिर्फ हमारे ही विचार अच्छे हैं। उसी तरह यह कहना भी बुरी आदत है कि जो लोग हमसे भिन्न विचार रखते हैं वे देशके दुश्मन हैं। १०

हमें अपने विरोधियोंको भी उतने ही देशभक्त और शुभ उद्देश्य रखनेवाले मानना चाहिये जितने कि हम स्वयं अपनेको मानते हैं और उनकी इज्जत करना चाहिये। ११

यह बात सच है कि बहुत बार लोगोंने मेरे साथ दगाबाजी की है। बहुतोंने मुझे धोखा दिया है और कितने ही कच्चे साबित हुए हैं। लेकिन उनके संपर्कमें आनेका मुझे पछतावा नहीं है। क्योंकि जिस तरह मैं सहयोग करना जानता हूं उसी तरह असहयोग करना भी जानता हूं। इस दुनियामें रहने और बरतनेका सबसे अधिक व्यावहारिक और गौरवपूर्ण तरीका यही है कि लोग जो कुछ कहें उस पर हम तब तक विश्वास करें जब तक कि उसके खिलाफ कोई पक्के कारण हमारे पास न हों। १२

यदि हमें प्रगति करनी है तो हमें इतिहासको दोहराना नहीं चाहिये परन्तु नये इतिहासकी रचना करनी चाहिये। हमारे पूर्वज हमारे लिए जो विरासत छोड़ गये हैं उसमें हमें वृद्धि करनी चाहिये। यदि हम दृश्य जगतमें नई नई खोज और आविष्कार कर सकते हैं तो क्या आध्यात्मिक क्षेत्रमें हमें अपनेको दिवालिया साबित करना चाहिये? अपवादोंकी वृद्धि

करके क्या उन्हें ही नियम बना देना असम्भव है? क्या मनुष्यको मनुष्य बननेसे पहले हमेशा पशु ही होना चाहिये? १३

किसी महान उद्देश्यमें लड़नेवालोंकी संख्याका महत्त्व नहीं होता परन्तु वह गुण ही निर्णायक तत्त्व सिद्ध होता है जिससे उन लड़वैयोंका निर्माण हुआ है। संसारके बड़ेसे बड़े पुरुष हमेशा अकेले ही खड़े रहे हैं। उदाहरणके लिए जरथुस्त बुद्ध ईसा और मुहम्मद जैसे महान पैगम्बरोंको लीजिये — ये सब दूसरे अनेक पैगम्बरोंकी तरह, जिनके नाम मैं गिना सकता हूं, अपने उद्देश्यों पर अकेले ही खड़े रहे थे। परन्तु उनकी अपने आपमें और अपने ईश्वरमें जीवित श्रद्धा थी, और यह विश्वास रखनेके कारण कि ईश्वर उनके पक्षमें है, उन्होंने अपनेको कभी अकेला अनुभव नहीं किया। १४

सभायें करना और एकमत प्रस्ताव बनाना बुरा नहीं है। वे कुछ मदद तो करते हैं लेकिन बहुत थोड़ी। वे उस मचानकी तरह — जिसे राज-मेमार खड़ा करता है — अस्थायी और कामचलाऊ चीजें हैं। उनका महत्त्व तो उस अजेय मशालका है, जिसकी आग कभी बुझायी नहीं जा सकती। १५

आपको जो काम करना है वह कितना ही मामूली क्यों न हो आप उसे उत्तम ढंगसे कीजिये उस पर आप उतना ही ध्यान दीजिये और उसकी उतनी ही चिन्ता रखिये जितनी आप उस कामकी रखेंगे जो आपकी दृष्टिमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि आपके ऐसे छोटे छोटे कामोंसे ही लोग आपकी कीमत आंकेंगे। १६

यह एक पश्चिमसे प्रकाश लेनेकी आदतकी बात है मैं इतना ही कहूंगा कि अगर मेरे सारे जीवनसे किसीको कोई रास्ता न मिला हो तो मैं दूसरा रास्ता क्या बता सकता हूं? प्रकाश तो पूर्वसे ही फैला करता था। अगर पूर्वका भंडार खाली हो गया है तो यह स्वाभाविक है कि पूर्वको पश्चिमसे प्रकाश उधार लेना पड़ेगा। मुझे तो यही आश्चर्य होता है कि प्रकाश अगर प्रकाश ही है, कोई सड़ी-गली चीजसे निकलनेवाली दुर्गन्ध नहीं है तो वह कभी खतम भी हो सकता है! मैंने बचपनमें पढ़ा था कि

प्रकाश (ज्ञान) फैल सकता है। कुछ भी हो मैंने तो इसी विश्वास पर अमल किया है और इसलिए बापदादोंकी पूंजी पर ही अपना व्यापार चलाया है। मैं कभी बाड़में नहीं रहा। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि मैं कुएका मेढक बन जाऊं। अगर प्रकाश पश्चिमसे आये तो मुझे उससे फायदा उठानेमें कोई आपत्ति नहीं है। मैं इतना ध्यान जरूर रखूंगा कि पश्चिमकी तड़क-भड़कसे मैं प्रभावित न हो जाऊं। इस तड़क-भड़कको ही सच्चा प्रकाश समझनेकी भूल मुझे नहीं करनी चाहिये। १७

मैं इस अंधविश्वासको नहीं मानता कि हर चीज इसलिए अच्छी है कि वह पुरानी है। मेरा यह भी विश्वास नहीं है कि हर चीज इसलिए अच्छी है कि वह भारतकी है। १८

प्राचीन के नामसे पहचानी जानेवाली हर वस्तुकी मैं बिना सोचे-विचारे अन्धपूजा नहीं करता। जो बुरा है या नीतिकी दृष्टिसे नीचे गिरानेवाला है उसके नाशका प्रयत्न करनेमें मैं कभी हिचकिचाया नहीं, भले वह कितना ही प्राचीन क्यों न हो। लेकिन इस एक अपवादके साथ ही मुझे आपके सामने यह कबूल करना चाहिये कि मैं प्राचीन संस्थाओंका प्रशंसक और पूजक हूं और यह सोच कर मुझे दुःख होता है कि लोग हर आधुनिक वस्तुके पीछे पागलोंकी तरह तेजीसे दौड़नेकी धुनमें अपनी सारी प्राचीन परंपराओंसे नफरत करते हैं और अपने जीवनमें उनकी उपेक्षा करते हैं। १९

सच्ची नैतिकता पिटे-पिटाये रास्ते पर चलनेमें नहीं है, परन्तु अपने लिए सच्चा रास्ता खोजनेमें और उस पर निडरतासे चलनेमें है। ४

जो काम स्वेच्छासे नहीं किया जाता वह नैतिक नहीं है। जब तक हम मशीनकी तरह काम करते हैं तब तक नैतिकताका प्रश्न ही नहीं उठता। अगर हम किसी कामको नैतिक कहना चाहते हैं तो वह ऐसा होना चाहिये जो बुद्धिपूर्वक किया गया हो और कर्तव्य समझ कर किया गया हो। जो काम डरसे या किसी प्रकारके दबावसे किया जाता है, वह नैतिक नहीं रह जाता। ४१

हमें उस समय अपने पड़ोसियोंकी कड़ीसे कड़ी आलोचना करनेका अधिकार मिल जाता है, जब हम उन्हें अपने प्रेमका और अपने सही निर्णयका विश्वास करा देते हैं और जब हमें इस बातका निश्चय हो जाता है कि हमारा निर्णय न माना गया और उस पर अमल न किया गया तो भी हमारा मन जरा भी आघात और अस्वस्थ नहीं बनेगा। दूसरे शब्दोंमें आलोचनाका सामर्थ्य प्राप्त करनेके लिए हममें स्पष्ट दृष्टि देनेवाला प्रेम और पूर्ण सहिष्णुता होनी चाहिये। ४२

हमारे कोषमें अपराधी शब्दके लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिये। अथवा हम सब अपराधी हैं। तुममें से जो सर्वथा निष्पाप हो वह पहला पत्थर मारे। परन्तु पापिनी वेश्या पर पत्थर फेंकनेकी किसीकी हिम्मत नहीं हुई। जैसा एक जेलरने एक बार कहा था भीतरसे हम सब अपराधी हैं। यह कहा तो गया था आधे मजाकमें लेकिन इसमें गहरा सत्य भरा है। इसलिए हम सब अच्छे साथी बनें। मैं जानता हूं कि ऐसा कहना आसान और करना कठिन है। लेकिन गीता और सच तो यह है कि सारे धर्म हमें ठीक ऐसा ही करनेकी शिक्षा देते हैं। ४३

मनुष्य इस अर्थमें अपना भाग्य-विधाता है कि उसे अपनी स्वतंत्रताका मनचाहा उपयोग करनेकी स्वतंत्रता है। लेकिन उसका परिणामों पर कोई नियंत्रण नहीं है। ४४

भलाईके साथ ज्ञानका मेल होना चाहिये। केवल भलाईसे बहुत काम नहीं होगा। हमें अपनी सूक्ष्म विवेक-शक्तिको बनाये रखना चाहिये जो आध्यात्मिक साहस और चरित्र-बलके साथ पायी जाती है। संकटकी स्थितिमें हमें यह जानना चाहिये कि कब बोला जाय और कब खामोश रहा जाय, कब कर्म किया जाय और कब कर्मसे बचा जाय। ऐसी परिस्थितियोंमें कर्म और अकर्म परस्पर विरोधी होनेके बजाय एकसे हो जाते हैं। ४५

ईश्वर द्वारा उत्पन्न की हुई प्रत्येक वस्तुका फिर वह चेतन हो या अचेतन अच्छा और बुरा पहलू होता है। बुद्धिमान मनुष्य हर चीजमें से

उसके अच्छे गुणोंको ले लेना और बुरे गुणोंको छोड़ देना — जिस तरह कहानीका पक्षी दूधमें से मलाईको निकाल लेता है और उसके पानीको छोड़ देता है। ४६

आजसे ४० बरस पहले जब मैं नास्तिकता और श्रद्धा-शून्यताके तीव्र संकटमें से पार हो रहा था मैंने टॉल्स्टॉयकी पुस्तक 'दि किंगडम ऑफ गॉड इज विदिन यू' (भगवानका राज्य तुम्हारे भीतर है) पढ़ी। उसका मुझ पर गहरा प्रभाव पड़ा। उस समय मेरा विश्वास हिंसामें था। इस पुस्तकने मेरा नास्तिकवादका रोग दूर कर दिया और अहिंसाके लिए मेरे मनमें दृढ़ विश्वास पैदा कर दिया। टॉल्स्टॉयके जीवनकी जिस विशेषताने मुझ पर सबसे गहरा असर डाला वह यह है कि उन्होंने जिस बातका उपदेश दिया उसे स्वयं अपने व्यवहारमें उतारा और सत्यकी खोजमें किसी भी त्यागको बहुत बड़ा नहीं माना। उनके जीवनकी सादगीको ही ले लीजिये। वह आश्चर्यजनक थी। समृद्ध शासक परिवारके सुख-आराममें पूर्ण वातावरणमें उत्पन्न होकर और पल-पुस कर तथा धरतीके समस्त भंडारोंकी विपुल मात्रा प्राप्त करके भी इस पुरुषने — जिसने जीवनके समस्त सुखों और आनंदोंका पूरा पूरा उपभोग किया था — भर जवानीमें उन सबसे अपना मुंह मोड़ लिया और फिर कभी लौट कर एक बार भी उनकी ओर नहीं देखा।

वे अपने युगके सर्वोच्च सत्यनिष्ठ व्यक्ति थे। उनका संपूर्ण जीवन सत्यकी खोजका सतत प्रयत्न और अटूट प्रवाह था। उन्होंने सत्यको जिस रूपमें देखा उसी रूपमें उसे निडर आचरणमें उतारा। उन्होंने सत्यको छिपानेका या उसके आग्रहको ढीला करनेका कभी प्रयत्न नहीं किया। उन्होंने सत्यको उसके पूर्ण रूपमें ही दुनियाके सामने रखा। जो सत्य उन्होंने प्रगट किया उसमें न उन्होंने कभी दो अर्थवाली कोई बात कही और न कभी सत्यके साथ किसी तरहका समझौता किया। वे किसी दुनियावी शक्तिके डरसे अपने सत्यमार्गसे कभी विचलित नहीं हुए।

वे वर्तमान युगमें अहिंसाके सबसे बड़े दूत थे। उनसे पहले या उनके बाद पश्चिममें ऐसा एक भी लेखक नहीं हुआ जिसने अहिंसाके विषयमें

उनके जैसी पूर्णता या आग्रहके साथ और उनके जैसी गहराई और सूक्ष्मतासे किया या कहा हो। मैं इससे भी आगे जाकर यह कहूँगा कि टॉल्स्टॉयने अहिंसाके सिद्धान्तका जो अनोखा विकास किया है, उसके सामने यह संकुचित और असंतुलित अर्थ बिलकुल निकम्मा लगता है जो कि हमारे देशके अहिंसावादी आज अहिंसाका करते हैं। भारत धर्मभूमि होनेका गौरव पूर्ण दावा करता है और हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियोंने अहिंसाके क्षेत्रमें कुछ सर्वश्रेष्ठ खोजें की हैं, फिर भी आज अहिंसाके नाम पर हमारे समाजमें जो कुछ चलता है वह अहिंसाका मजाक ही कहा जायगा। सच्ची अहिंसाका अर्थ दुर्भावना, क्रोध तथा घृणासे पूर्ण मुक्ति और सबके लिए अपार प्रेम होना चाहिये। हमारे समाजमें अहिंसाके इस सच्चे और अधिक ऊँचे रूपका प्रसार करनेके लिए महासागर जैसे अथाह प्रेमसे भरा टॉल्स्टॉयका जीवन प्रकाश-स्तंभ तथा प्रेरणाके अचूक साधनका काम देगा। टॉल्स्टॉयके आलोचकोंने कभी कभी यह कहा है कि उनका जीवन बहुत बड़ी असफलता रहा है, उन्होंने कभी अपने आदर्शको प्राप्त नहीं किया जिसकी खोजमें उनका संपूर्ण जीवन बीता। मैं इन आलोचकोंकी बातोंको नहीं मानता। यह सच है कि खुद टॉल्स्टॉयने भी ऐसा कहा है। लेकिन यह केवल उनके बड़प्पनको बताता है। यह हो सकता है कि वे जीवनमें अपने आदर्शको पूर्ण रूपसे सिद्ध करनेमें असफल रहे हों, लेकिन ऐसा होना मनुष्यके लिए स्वाभाविक है। कोई भी मनुष्य जब तक शरीरमें कैद है तब तक पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता। इसका सादा कारण यह है कि जब तक मनुष्य अपने अहंकार पर पूर्णतया विजय प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक इस आदर्श स्थितिको सिद्ध करना असंभव है। और अहंकारसे तब तक मुक्ति नहीं मिल सकती जब तक मनुष्य शरीरके बन्धनोंसे बंधा हुआ है। टॉल्स्टॉयका यह प्रिय वचन था कि जिस क्षण मनुष्य यह विश्वास करने लगता है कि वह अपने आदर्श तक पहुँच गया है, उसी क्षणसे उसकी प्रगति रुक जाती है और उसकी पश्चाद्-गति शुरू हो जाती है और किसी आदर्शका सद्गुण इसी बातमें है कि हम जितने उसके नज़दीक पहुँचते हैं उतना ही वह हमसे दूर भागता है। इसलिए यह कहनेसे कि टॉल्स्टॉय अपने आदर्श तक पहुँचनेमें असफल रहे — जिसका स्वीकार

उन्होंने स्वयं किया है — उनकी महत्ता रत्तीभर भी कम नहीं होती उलटा इससे केवल उनकी नम्रताको ही प्रकट करता है।

टॉल्स्टॉयके जीवनकी तथाकथित असंगतताओंके बारेमें बहुत कुछ बतानेका प्रयत्न किया गया है। लेकिन वे केवल ऊपरी थीं, वास्तविक असंगततायें नहीं थीं। निरंतर विकास जीवनका नियम है। इसलिए जो मनुष्य सुसंगत दिखाई देनेकी खातिर अपने मतोंसे चिपटा रहनेका प्रयत्न करता है, वह अपने आपको झूठी स्थितिमें डाल देता है। इसीलिए इमर्सनने कहा था कि मूर्खतापूर्ण सुसंगतता छोटे दिमागवालोंका भूत है। टॉल्स्टॉयकी तथाकथित असंगततायें उनके विकासकी तथा सत्यके प्रति उनके उत्कट आदरकी द्योतक थीं। वे अक्सर असंगत दिखाई पड़ते थे। इसका कारण यह है कि वे अपने सिद्धान्तमें निरंतर आगे बढ़ते जाते थे। उनकी असफलतायें जग-जाहिर थीं लेकिन उनके संघर्षों और विजयोंकी बात अप्रकट थी। दुनिया केवल उनकी असफलताओंको ही जानती थी जब कि संघर्षों और विजयोंकी बात स्वयं टॉल्स्टॉयसे भी शायद सबसे ज्यादा अदृष्ट रहती थी। उनके आलोचकोंने उनके दोषोंको दिखाकर उन्हें नीचे गिरानेकी कोशिश की, लेकिन वे स्वयं अपने जितने बड़े आलोचक थे उतना बड़ा कोई भी आलोचक नहीं हो सकता था। अपनी कमजोरियोंके प्रति वे सदा सावधान रहते थे। उनके आलोचक उनकी कमजोरियां बतानेका समय निकाल पायें उसके पहले ही वे अपनी कमजोरियोंको हजार गुनी बढ़ाकर दुनियाके सामने जाहिर कर देते थे और उनके लिए जो तपस्या करना उन्हें आवश्यक लगता था वह तपस्या भी वे कर डालते थे। वे अतिशयोक्तिपूर्ण आलोचनाका भी स्वागत करते थे और सारे सच्चे महापुरुषोंके समान दुनियाकी प्रशंसासे वे डरते थे। वे अपनी असफलताओंमें भी महान थे और उनकी असफलतायें हमें उनके आदर्शोंकी निरुपयोगिताका भान नहीं कराती बल्कि उनकी विजयका भान कराती हैं।

तीसरी महान वस्तु है रोटीके लिए श्रम के सिद्धान्तकी। वे कहते हैं कि हर आदमीको अपनी रोटीके लिए शरीर-श्रम करना चाहिये। दुनियाका अधिकतर जीवन डालनेवाला दुःख-दर्द इसलिए है कि मनुष्य इस विषयमें अपने कर्तव्यका पालन नहीं करते। वे धनिकोंकी मानव-दयाके कार्यों द्वारा

आम लोगोंकी गरीबी कम करनेकी सारी योजनाओंको निरा पाखंड और धोखा मानते थे, क्योंकि वे धनिक शरीर-श्रमसे जी चुराते थे और ऐश आराममें रहना नहीं छोड़ते थे। इसके बदले उन्होंने यह सुझाया था कि अगर मनुष्य केवल गरीबोंकी पीठ परसे उतर जाये तो तथाकथित मानव दयाके बहुतसे कार्य अनावश्यक बन जाय।

और, टॉल्स्टॉयके लिए किसी सिद्धान्तका अर्थ उस पर अमल करना था। इसलिए अपने जीवनके मध्याह्नमें इस पुरुषने, जिसने अपना सारा समय ऐश-आरामकी कोमल गोदमें बिताया था, कड़े परिश्रमका जीवन अपनाया। उन्होंने जूते बनाने और खेती करनेका धंधा शुरू किया और इन दोनों धंधोंमें वे प्रतिदिन ८ घंटेकी कड़ी मेहनत करते थे। लेकिन उनके शरीर-श्रमने उनकी शक्तिशाली बुद्धिको मंद नहीं बनाया; इसके विपरीत शरीर-श्रमसे उनकी बुद्धि अधिक तेज और अधिक उज्ज्वल बनी। उनके जीवनके इसी कालमें उनकी सबसे शक्तिशाली पुस्तक 'व्हाट इज आर्ट?'—'कला क्या है?'—लिखी गई थी। इस पुस्तकको वे अपनी सर्वोत्तम पुस्तक मानते थे; जो उनके पसंद किये हुए कामसे बचनेवाले समयमें लिखी गई थी।

आज हमारे देशमें भोग-विलासके जहरसे भरे हुए तथा आकर्षक रूपमें प्रस्तुत किये जानेवाले पश्चिमी साहित्यकी बाढ़ आ रही है; इस साहित्यसे सावधान रहना हमारे नौजवानोंका सबसे बड़ा कर्तव्य है। वर्तमान काल उनके लिए आदर्शों तथा परीक्षाओंका संक्रान्ति-काल है। दुनियाके लिए, उसके नौजवानोंके लिए और खास करके भारतके नौजवानोंके लिए आजके इस युगमें टॉल्स्टॉयका प्रगतिशील आत्म-संयम ही एकमात्र आवश्यक वस्तु है; क्योंकि केवल वही उन्हें, भारतको और सारी दुनियाको सच्ची स्वतंत्रताकी ओर ले जा सकता है। इंग्लैंड या अन्य किसीकी अपेक्षा हम स्वयं अपने आलस्य, उदासीनता और सामाजिक बुराइयोंकी वजहसे अपनी स्वतंत्रताके मार्गमें अधिक रुकावट डालते हैं। अगर हम अपनी कमजोरियों और दोषोंसे अपनेको मुक्त कर लें, तो दुनियाकी कोई भी शक्ति एक क्षणके लिए भी हमें स्वराज्यसे दूर नहीं रख सकती। टॉल्स्टॉयके

धारण नहीं देखता जो पश्चिमवालोंने की है। और वह साँप जहरीला था या नहीं यह तो कैसे कहा जा सकता है? मृत्यु कोई भयंकर घटना नहीं है, ऐसा खयाल बहुत वर्षोंसे होनेके कारण मुझ पर किसीकी मृत्यु — प्रियजनोंकी भी — ज्यादा समय तक असर नहीं कर सकती। ५१

हमें यह विश्वास करना सिखाया गया है कि जो सुन्दर है उसका उपयोगी होना जरूरी नहीं है और जो उपयोगी है वह सुन्दर नहीं हो सकता। मैं यह दिखाना चाहता हूं कि जो कुछ उपयोगी है वह सुन्दर भी हो सकता है। ५२

कलाके लिए कला सामनेका दावा करनेवाले भी असलमें वैसा नहीं कर सकते। जीवनमें कलाका स्थान है। हां कला किसे कहा जाय यह अलग सवाल है। मगर हम सबको जो रास्ता तय करना है उसमें कला साहित्य वगैरा सिर्फ साधन हैं। वे ही जब साध्य बन जाते हैं तब बन्धन बनकर वे मनुष्यको नीचे गिराते हैं। ५३

मैं चीजोंके दो भेद करता हूं — आन्तर और बाह्य। इनमें से मैं किस पर अधिक जोर देता हूं यही सवाल है। मेरे नजदीक तो बाह्यकी कीमत तब तक कुछ नहीं है जब तक उससे अन्तरका विकास न हो। समस्त सच्ची कला अन्तरके विकासका आविर्भाव ही है। मनुष्यकी आत्माका जितना आविर्भाव बाह्य रूपमें होता है उतना ही उसका मूल्य है। लेकिन जितने ही कलाविद् माने जानेवाले लोगोंमें तो इस आत्म-भवनका अंश भी नहीं होता। उनकी कृतिको कला कैसे कहा जाय? ५४

जो कला आत्माको आन्तर-दर्शन करनेकी शिक्षा नहीं देती वह कला ही नहीं है। और आत्म-दर्शनके लिए मेरा काम तो कलाके नामसे विख्यात बाहरी वस्तुओंके बिना भी चल सकता है। इसलिए यदि आप मेरे आस पास बहुतसी कला-कृतियां न देखें तब भी मेरा यह दावा है कि मेरे जीवनमें कला भरी हुई है। मेरे कमरेकी दीवारें बिलकुल सफेद हों और यदि मेरे सिर पर छप्पर भी न हो तब भी मैं कलाका पूर्ण उपभोग कर

जाती है। सच्ची कला उसके सर्जकोंके सुख, सन्तोष और शान्तिका प्रमाण होनी चाहिये। ५८

हमने किसी न किसी तरह अपने-आपको इस विश्वासका आदी बना लिया है कि कला व्यक्तिगत जीवनकी शुद्धिसे अलग चीज है। मैं अपने सम्पूर्ण अनुभवके बल पर यह कह सकता हूं कि इससे बड़ा और कोई असत्य नहीं हो सकता। मैं अपने पार्थिव जीवनके अन्तके समीप पहुंच रहा हूं, इसलिए मैं कह सकता हूं कि जीवनकी शुद्धि सबसे ऊंची और सबसे सच्ची कला है। तालीम पाई हुई आवाजसे मधुर संगीतको जन्म देनेकी कला तो अनेक लोग सिद्ध कर सकते हैं, परन्तु शुद्ध जीवनके स्वरोंके सुमेलसे मधुर संगीतको जन्म देनेकी कला विरले ही लोग सिद्ध कर सकते हैं। ५९

अगर मैं बिना अकड़के और उचित नम्रताके साथ ऐसा कह सकूं, तो मैं कहूंगा कि मेरा सन्देश और मेरी कार्य-पद्धति सचमुच अपने मूलभूत रूपमें सारी दुनियाके लिए है, और यह जानकर मुझे हार्दिक सन्तोष होता है कि मेरे सन्देशने पश्चिमके अनेक पुरुषों और स्त्रियोंके हृदयमें आश्चर्यजनक स्थान प्राप्त कर लिया है और ऐसे स्त्री-पुरुषोंकी संख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ६०

मेरे मित्र दो प्रकारसे मुझे ऊंचेसे ऊंचा आदर प्रदान कर सकते हैं: या तो जिस कार्यक्रमकी मैं हिमायत करता हूं उसे वे अपने जीवनमें उतारें, अथवा यदि वे मेरे कार्यक्रममें विश्वास न रखते हों तो मेरा भरसक विरोध करें। ६१